Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

94251-01132

Supported by:
Ksaan Helpline
+91-7415538151

मध्य भारत कृषक भारती

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com

ISSN-2582-5976

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

वर्ष-19 अंक-02 ग्वालियर, मई-2024 मूल्य 30 रुपए

मौसम विभाग की भविष्यवाणी
देशभर में खूब होगी
मानसूनी बारिश

भारतीय मौसम विज्ञान विभाग ने मानसून को लेकर ताजा अपडेट जारी किया है। मौसम विभाग का कहना है कि साल मानसून के सामान्य रहने की संभावना है। ऐसे में बारिश को लेकर किसानों को चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। किसान भाई खरीफ फसल की तैयारी अच्छी तरह से कर सकते हैं, मौसम विभाग के मुताबिक इस साल अल नीनो का खतरा कम रहेगा। ऐसे में मानसून के दौरान बारिश के सामान्य रहने की उम्मीद है।

मोटे अनाजों की खेती पर सरकार का जोर

खाद्य सुरक्षा में भी बड़ा रोल निभाएगा मिलेट

सरकार मोटे अनाजों यानी श्री अन्न की खेती पर जोर दे रही है, वजह है छोटे किसानों की कमाई बढ़ाने की तैयारी। दूसरी बड़ी वजह है इसकी खेती में पानी की बहुत कम जरूरत होती है। हालांकि इसका फायदा देखें तो हर अनाजों से यह आगे है। तभी सरकार इसकी खेती और उपज बढ़ाकर किसानों को सीधा इसका लाभ पहुंचाना चाह रही है। सरकार मोटे अनाजों का इस्तेमाल खाद्य सुरक्षा में भी बढ़ा रही है। जिससे इसकी खेती को और अधिक बढ़ावा मिले। दरअसल मोटे अनाज के घरेलू और वैश्विक मांग को बढ़ावा देखते हुए भी सरकार इसकी खेती पर जोर दे रही है।

कृषि विज्ञान केन्द्र, मुरैना में सरसों में आई.पी.एम. परियोजना अन्तर्गत सरसों प्रक्षेत्र दिवस कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

डिंडोरी कृषि विज्ञान केन्द्र की वैज्ञानिक डॉ. गीता सिंह को सर्वोत्तम विस्तार वैज्ञानिक सम्मान से सम्मानित किया गया।

डॉ.राजेन्द्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय पूसा के कृषि अभियंत्रण महाविद्यालय के सभागार में कृषि यंत्र के रख-रखाव एवं मरम्मतीकरण के विषय पर किसानों के लिए प्रशिक्षण आयोजित किया गया।

केविके शहडोल द्वारा ग्राम सामतपुर में कृषक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया।

कृषि विज्ञान केंद्र गोविन्दनगर ने 'भूमि सुपोषण एवं संरक्षण अभियान' का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में कृषि-रसायनों के उपयोग को कम करके प्रकृति को बचाने का भी आग्रह किया गया।

झाबुआ के विकासखण्ड पेटलावद की ग्राम पंचायत बोलासा के सीनियर बालक छात्रावास में लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र में स्वीप कार्यक्रम के अन्तर्गत मतदाता जागरूकता गतिविधियों का आयोजन किया गया।

लोकसभा चुनाव-2024 के अंतर्गत छिंदवाड़ा जिले में मतदाता जागरूकता के लिए छात्र-छात्राओं ने हस्ताक्षर अभियान चलाया।

हरदा जिले में मतदान में अधिक से अधिक मतदाताओं की सहभागिता के लिए मतदाता जागरूकता कार्यक्रम।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

चिंताजनक : गहराता जलसंकट

रिपोर्ट के अनुसार देश में प्रमुख जलाशयों में उपलब्ध पानी में उनकी भंडारण क्षमता के अनुपात में 30% की गिरावट आई है। जो हाल के वर्षों की तुलना में बड़ी गिरावट है। जो सूखे जैसी स्थिति की ओर इशारा करती है। जिसके मूल में अल नीनो घटनाक्रम का प्रभाव बताया जा रहा है। दरअसल, लंबे समय तक पर्याप्त बारिश न होने के कारण जल भंडारण में यह कमी आई है। जिसके चलते कई क्षेत्रों में सूखे जैसे और असुरक्षित हालात पैदा हो गये हैं। दरअसल, भारत के पूर्वी व दक्षिणी क्षेत्रों के लोग इस संकट का सामना कर रहे हैं। वास्तव में लगातार बढ़ती गर्मी के कारण जल स्तर में तेजी से गिरावट आ रही है। इसके गंभीर परिणामों के चलते आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु जैसे राज्यों में पानी की कमी ने गंभीर रूप धारण कर लिया है। देश का आईटी हब बेंगलुरु गंभीर जल संकट से दो-चार है। जिसका असर न केवल कृषि गतिविधियों पर पड़ रहा है बल्कि रोजमर्रा की जिंदगी भी बुरी तरह प्रभावित हो रही है। जिसका असर तात्कालिक चिंताओं से आगे दूर तक नजर आता है।

हमें स्वीकारना चाहिए कि देश की अर्थव्यवस्था की आधारशिला कही जाने वाले कृषि क्षेत्र को फिलहाल कई बड़ी जटिल समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जिसका विभिन्न फसलों पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है। इसका एक कारण यह भी है कि देश की आधी कृषि योग्य भूमि आज भी मानसूनी बारिश के रहमोकरम पर है। ऐसे में सामान्य मानसून की स्थिति पर कृषि का भविष्य पूरी तरह निर्भर करता है। ऐसे में मौसम विभाग का सामान्य मानसून का पूर्वानुमान आशावाद तो जगाता है लेकिन किसी तरह के किंतु-परंतु समस्या पैदा कर सकते हैं। ऐसे में किसी आसन्न संकट से निपटने के लिये जल संरक्षण के प्रयास घरों से लेकर तमाम कृषि पद्धतियों और औद्योगिक कार्यों तक में तेज करने की जरूरत है। जल भंडारण और वितरण दक्षता में सुधार के लिये पानी के बुनियादी ढांचे और प्रबंधन प्रणालियों में बड़े निवेश की तात्कालिक जरूरत भी है। इसी तरह कृषि पद्धतियों में सुधार के साथ फसल विविधीकरण से पानी की खपत को कम करने के प्रयास होने चाहिए। ताकि सूखे के प्रभाव को कम करने के प्रयास हो सकें। इसके साथ ही जल संरक्षण की परंपरागत तकनीकों को भी बढ़ावा देने की जरूरत है। साथ ही आम लोगों को प्रकृति के इस बहुमूल्य संसाधन के विवेकपूर्ण उपयोग को बढ़ावा हेतु प्रेरित करने के लिए जनजागरण अभियान चलाने की जरूरत है।

देश के कई भागों में ग्रीष्म ऋतु से पहले ही जल संकट की खबरें आना चिंताजनक स्थिति की ओर इशारा करती हैं। ऐसे में केन्द्रीय जल आयोग के नवीनतम आंकड़े भारत में बढ़ते जल संकट की गंभीरता को ही दर्शाते हैं। आंकड़े देश भर के जलाशयों के स्तर में आई चिंताजनक गिरावट की तस्वीर उकेरते हैं।

एक ही बगीचे में लगा दिए 26 वैरायटी के आम, ऑनलाइन की लाखों की बिक्री

हाल के कुछ सालों में किसानों ने आधुनिक तकनीक की मदद से खेती करने में तेजी से रूचि दिखाई है। तकनीक की मदद से भारी मात्रा में उत्पादन भी हो रहा है। आज हम आपको एक ऐसे ही किसान के बारे में बताते हैं कि जिसने अपनी पुश्तैनी जमीन पर 1-2 नहीं बल्कि आम की पूरी 26 किस्में बोई थीं। आज वह आम बेचकर भारी मुनाफा कमा रहे हैं। ऑनलाइन आम बेचकर उन्हें लाखों रुपए का फायदा हो

रहा है। यह किसान हैं मध्य प्रदेश के अलीराजपुर जिले के रहने वाले युवराज सिंह है। इन्होंने अपने पुश्तैनी बगीचे को बढ़ाते हुए आम का बगीचा तैयार किया है। उनके बगीचे की खास बात यह है कि उनके बगीचे में लंगड़ा, केसर, चौसा, सिंदूरी, राजापुरी, हापुस आदि 26 वैरायटी के आम के पेड़ लगे हैं। जिले के छोटा उंडवा गांव के किसान युवराज सिंह की सफलता की यह कहानी है। युवराज ने बताया कि अलीराजपुर जिले की मिट्टी में नमी होने से यह आम की खेती के लिए उपयुक्त है। यहां पैदा होने वाले आम का स्वाद पूरे देश में विशेष पहचान रखता है। अलीराजपुर के आमों की खासियत का अंदाजा इस बात से भी लगाया जा सकता है कि सीजन के पहले ही लोग आम की बुकिंग कर एडवांस पेमेंट कर देते हैं। युवराज कहते हैं, कुछ साल पहले मैं जिले के कट्ठीवाड़ा से 'नूरजहां' आम का पौधा ग्राफ्टिंग करके लाया था। इसे मैंने अपने बगीचे में लगाया और एक छोटा सा पौधा आज आम के पेड़ के रूप में बनकर तैयार हो गया है। इसकी खासियत है कि एक आम का वजन लगभग तीन किलो होता है, जिसकी कीमत प्रति किलो 1000 रुपए होती है।

साभार-https://www.kisantak.in

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063
***
नरसिंहपुर (म.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली (म.प्र.)
भगवानदास चौबे
96854-88453
बलिया (उ.प्र.)
आर.एन. चौबे-94535-77732
पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678
***
हापुड़ (उ.प्र.)
मयंक गौड़: 83848-66823

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 22 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 23 से 28 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है। -संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
■94251-01132 ■0751-4070802

▪ वार्षिक ₹ 400 ▪ द्विवार्षिक ₹ 750
▪ पंचवार्षिक ₹ 1500

■ वर्ष 19 ■ अंक 02 ग्वालियर, मई 2024 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक

राजू गुर्जर (MJC)

94251-01132

94245-22090

❖

प्रसार/मार्केटिंग टीम

डी.के. बरार

91791-85002, 70247-93010

महेश अहिरवार: 94251-48365

हरिओम शर्मा: 94259-46038

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
केविके दतिया, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि. ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण), डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. योगेन्द्र कौशिक (प्रगतिशील कृषक)
ग्राम अजडावदा जिला उज्जैन (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
***
तपस्या तिवारी
पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- कुटकी की उन्नत उत्पादन तकनीक 07
- बटन मशरूम की खेती 08
- नर पशु प्रजनन पर पेस्टीसाइड्स का दुष्प्रभाव 09
- पशुओं में सींग रोधन 10
- आंवले के विभिन्न उपयोग ... 11
- कद्दूवर्गीय सब्जियों में कीट एवं रोग नियंत्रण 12
- फसल अवशेष प्रबन्धन 13
- गन्ने कचरे से जैविक खाद 14
- कृषि में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकियों की भूमिका 15
- बायोडीजल क्या है एवं इसके बढ़ते उपयोग 16
- नवजात बछड़े-बछड़ियों का पालन-पोषण एवं प्रबंधन 17
- खीरावर्गीय फसलों में फल मक्खी, :..... 18
- गायों और भैंसों में पैपिलोमा या मस्सों के लक्षण.... 19
- गेहूँ की उन्नत उत्पादन तकनीक 20
- पशुओं में लिस्टीरिओसिस रोग एवं बचाव 21
- कीटनाशकों द्वारा बाह्य पशु परजीवियों का रोकथाम 22

उत्तर प्रदेश

- कृषि वानिकी की पहाड़ियों इलाकों में भूमिका 23
- कृषि विपणन: एक परिचय 24
- जीरो बजट प्राकृतिक खेती 25
- भिण्डी की उन्नत खेती 26
- गर्मियों के दिनों में मुर्गियों में तनाव को कम.... 27
- रोजगार और आर्थिक विकास में नकदी फसलों का महत्व 28
- जीन संपादन: एक परिचय 29
- किसानों की आय दोगुनी करने के लिए सहजन का मूल्य संवर्धन 30
- मवेशियों की निगरानी के लिए कृत्रिम तकनीकें 31
- युवाओं में तनाव: कारण, लक्षण एवं उपाय 32
- रिंग पिट विधि से गन्ने की बुवाई :.. 33
- संरक्षण कृषि: एक आधुनिक कृषि विधि 34
- आहार और स्वास्थ्य के लिए जीवंत शैली 35
- करौंदा के औषधीय गुण तथा उपयोग 36
- ड्रिप सिंचाई पद्धति का महत्व 37
- शून्य बजट प्राकृतिक खेती .. 38
- खेतों में पानी बचाने वाली तकनीकें 39
- वैज्ञानिक विधि से पॉप कॉर्न की खेती 40
- जल कुशल खेती: कृषि विज्ञान में इष्टतम.. 41
- कैसे करें मेंथा (पुदीना) उन्नत की खेती 42
- जानिए...कृषि वानिकी के बारे में 43
- पौष्टिक एवं गुणकारी मीठी नीम (करी पत्ता) 44
- कृषि के लिए नई सौगात: ड्रोन 45
- हल्दी की वैज्ञानिक खेती 46
- हाइड्रोपोनिक : एक परिचय एवं भारत में इसका दायरा 47
- पर्वतीय क्षेत्रों में सब्जी राई की उन्नत खेती 48
- असमय फलों के गिरने की समस्या और समाधान 49
- उत्तर प्रदेश में वन संरक्षण और वन वृक्ष-रोपण का महत्व 50
- स्ट्रॉबेरी की वैज्ञानिक खेती 51
- मूंगफली की फसल में समन्वित खरपतवार नियंत्रण 52
- कृषि उपयोगी मोबाइल ऐप्स: डिजिटल कृषि का आधार 53

राजस्थान

- आर्थिक विकास में महिला सशक्तिकरण की भूमिका 54
- खरीफ की फसल में बीजोपचार की विधि.. 55
- पौधों का एक परंपरागत जैविक उत्तम... 56
- ग्रीष्मकालीन जुताई ठीक करेगी खेत की मिट्टी की सेहत 57

बिहार

- संरक्षित खेती से किसान ग्रीष्मकालीन... 58

मणिपुर

- भारतीय किसान दशा और दिशा 59

हरियाणा

- जल संकट एवं मानव जीवन 60
- कद्दूवर्गीय सब्जियों के प्रमुख कीट... 61
- मूंग की खेती में सिंचाई एवं उर्वरक प्रबंधन का महत्व 62

हिमाचल प्रदेश

- बुरांस के सुंदर फूल और इसके लाभ 63
- सब्जियों में ग्राफ्टिंग की तकनीकें 64
- प्याज और लहसुन में जीवाणुओं का महत्व 65
- टमाटर के प्रमुख रोगों का विवरण... 66
- भक्ति 67

उत्तराखण्ड

- उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्र में अपनाया गया फसल पद्धति 68

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

बेहतर आमदनी का जरिया हो सकती है मशरूम की खेती

ग्वालियर। कृषि विज्ञान केन्द्र ग्वालियर द्वारा युवाओं के लिए भारतीय कौशल विकास परिषद द्वारा प्रायोजित मशरूम उत्पादक का तीन दिवसीय कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम का शुभारंभ करते हुए केन्द्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख डॉ. एस.एस. कुशवाह ने कहा कि ग्रामीण क्षेत्रों में मशरूम उत्पादन हेतु कृषि अवशेष, स्थान, पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। कृषक इसका उत्पादन छोटे स्तर पर कर रहे हैं। इसकी वैज्ञानिक तकनीक द्वारा वर्षभर अलग-अलग मशरूम का उत्पादन करके इसे व्यवसाय के रूप में अपनाने की आवश्यकता है। केन्द्र के वैज्ञानिक डॉ. अरविन्दर कौर ने ढींगरी तथा बटन मशरूम उत्पादन की सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक जानकारी प्रशिक्षण में दी।

डॉ. सुरूचि सोनी गृह वैज्ञानिक ने मशरूम उत्पादकों को मशरूम के मूल्य संबंधित उत्पादों की विस्तृत जानकारी दी। मशरूम बीज विक्रेता संजय ने मशरूम बीज के उत्पादन तथा उनके यहां उपलब्ध विभिन्न मशरूमों के बीज के बारे में प्रशिक्षणार्थियों को बताया।प्रशिक्षण में पादप रोग विभाग की पूर्व विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक डॉ. रीति सिंह ने मशरूम उत्पादन में खाद्य एवं अखाद्य मशरूम की जानकारी तथा मशरूम के बारे में विस्तृत चर्चा की। मशरूम को उगाने के लिए मशरूम घर की संरचना तथा वातावरण के बारे में मशरूम उत्पादक मुकुल एवं आकाश ने प्रशिक्षणार्थियों को जानकारी दी। मशरूम में लगने वाले कीटों के बारे में डॉ. एस.पी.एस. तोमर, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं रोगों के बारे में डॉ. जे.सी. गुप्ता वैज्ञानिक केविके शिवपुरी ने पावर पॉइंट प्रेजेन्टेशन द्वारा दिया गया। केन्द्र के अर्थशास्त्र विशेषज्ञ डॉ. एस.सी. श्रीवास्तव एवं मशरूम विक्रेता डॉ. एच.एस. गोस्वामी ने ब्रांडिंग, उन्नत पैकिंग, प्रचार-प्रसार द्वारा मशरूम के विभिन्न उत्पादों को प्रसंस्करण कर बाजार में बेचने के गुर सिखाए। क्योंकि मशरूम की विदेशों में मांग बढ़ रही है। मशरूम को आधुनिक उपकरणों द्वारा सुखाकर बेचकर लाभ कमाने के लिए प्रेरित किया। कार्यक्रम के तीसरे दिन प्रशिक्षणार्थियों का मूल्यांकन किया गया। इस कार्यक्रम में 40 प्रशिक्षणार्थियों ने भाग लिया।

स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय अब प्रमाणित बीजों का करेगा उत्पादन

बीकानेर। स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय अब सत्य चिन्हित (ट्रूथफुल) बीज की जगह प्रमाणित बीजों का उत्पादन करेगा। ये बीज राज्य सरकार से प्रमाणित बीज होंगे। इससे पूर्व एसकेआरएयू के अंतर्गत केवल कृषि विज्ञान केंद्र आबूसर झुंझुनूं में ही प्रमाणित बीज तैयार किया जाता था। खरीफ 2024 में बीज की उपलब्धता को लेकर शनिवार को कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति सचिवालय में हुई बैठक में ये निर्णय लिया गया। बैठक में मुख्य अतिथि उत्तर प्रदेश कृषि विभाग के निदेशक डॉ जितेन्द्र कुमार तोमर थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता कुलपति डॉ अरुण कुमार ने की। बैठक में मुख्य अतिथि डॉ. जितेन्द्र कुमार तोमर ने कहा कि कृषि वैज्ञानिक किसानों को बहुत अच्छी क्वालिटी का बीज उपलब्ध करवाएं। इससे कृषि विश्वविद्यालय की साख भी बढ़ेगी। साथ ही कहा कि कृषि विश्वविद्यालय में किसानों को बीज देने के लिए सिंगल विंडो सिस्टम हो ताकि किसानों को इधर उधर भटकना ना पड़े। डॉ तोमर ने कहा कि बोर्ड की बैठक में ही ये तय हो कि बीज अगर बच जाता है तो उसे नो प्रॉफिट, नो लॉस पॉलिसी तक जाकर बेचा जा सके।

कृषि विश्वविद्यालय में इन्क्यूबेटीज हेतु एक दिवसीय कार्यशाला

ग्वालियर। कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर के सेंटर फॉर एग्रीबिजनेस इन्क्यूबेशन एंड इंटरप्रेन्योरशिप में डी.पी.आई.आई.टी. पंजीकृत इन्क्यूबेटीज के लिए एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें कार्यक्रम की अध्यक्षता नोडल अधिकारी डॉ. वाय.डी. मिश्रा द्वारा की गई। इस कार्यशाला के माध्यम से सी.ए.आई.ई. के मुख्य कार्यकारी अधिकारी आदित्य सिंह ने सभी इनक्यूबिटीज से उनके बिजनेस के बारे में विस्तार पूर्वक चर्चा की। चर्चा के दौरान सभी इनक्यूबिटीज ने अपने बिजनेस संबंधी समस्याओं को बताया और सी.ए.आई.ई. से उनके समाधान के बारे में बातचीत की। डॉ वाय. डी. मिश्रा ने सी.ए.आई.ई. की तरफ से दी जाने वाली विभिन्न सुविधाओं जैसे मार्केटिंग, ब्राडिंग, लिंकेज, लोगो पंजीकरण, एफ.एस.एस.ए.आई. पंजीकरण, बिजनेस प्लान, सरकारी योजनाओं के बारे में जानकारी और डी.पी.आई.आई.टी. पंजीकरण के बारे में विस्तार पूर्वक जानकारी दी।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

स्टीविया की पत्तियां ब्लड शुगर का वैकल्पिक स्त्रोत

जबलपुर। जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर के कुलगुरू डॉ. प्रमोद कुमार मिश्रा की प्रेरणा से एवं पादप कार्यिकी विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ. आर.के. समैया के मार्गदर्शन में औषधीय उद्यान में स्टीविया की खेती चर्चा का विषय बनी हुई है। दरअसल औषधीय उद्यान प्रभारी डॉ. ज्ञानेन्द्र तिवारी की देखरेख में स्टीविया की खेती की जा रही है। डॉ. ज्ञानेन्द्र तिवारी ने जानकारी देते हुए बताया कि स्टीविया की खेती किसानों की आय का स्त्रोत ही नहीं, बल्कि डायबिटीज के मरीजों के लिये शक्कर का वैकल्पिक स्त्रोत होने के साथ-साथ ब्लड शुगर को नियंत्रित करता है। भारत में आजकल हर तीसरा-चौथा व्यक्ति डायबिटीज, मोटापा जैसी घातक बीमारियों से ग्रसित होता जा रहा है। इसलिये ऐसे मरीजों के लिये शुगर का वैकल्पिक स्त्रोत एवं बीमारी से बचाव की आवश्यकता है। स्टीविया की पत्तियां शक्कर की तुलना में 20 से 25 गुना अधिक मीठी होने के कारण इसका व्यवसायिक उपयोग पूरे विश्व में बहुत तेजी से हो रहा है।

विदित हो कि जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों द्वारा स्टीविया की उन्नत खेती प्रसंस्करण, मूल्य-संवर्धन एवं विपणन के क्षेत्र में शोध कार्य किये जा रहे हैं, साथ ही इसके उत्पादों का पेटेंट प्राप्त करने की दिशा में कार्य प्रगति पर है। दरअसल इसकी खेती के लिये मध्यप्रदेश के वो सभी क्षेत्र उपयुक्त हैं, जहां जल भराव की समस्या नहीं होने के साथ-साथ सिंचाई की समुचित व्यवस्था है। स्टीविया की खेती से परंपरागत कृषि फसलों की तुलना में तीन गुना तक अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। स्टीविया की फसल एक बार लगाने के बाद 5 साल तक पत्तियों का उत्पादन किया जा सकता है। प्रत्येक वर्ष 3 बार पत्तियों की कटिंग की जा सकती है। स्टीविया के पत्तो से ही औषधी बनाई जाती है। हर वर्ष 30 से 35 क्विंटल सूखी पत्तियों का उत्पादन प्रति हेक्टेयर होने की संभावना बताई गई है। जिससे वर्ष भर में प्रति हेक्टेयर 150 से 175 क्विंटल सूखी पत्तियों का उत्पादन होता है। लिहाजा स्टीविया की पत्तियां सौ रूपये किलोग्राम के मूल्य से विक्रय की जाती हैं। विश्वविद्यालय स्थित औषधीय उद्यान में वर्तमान में 11 सौ प्रकार के अलग-अलग किस्मों के पौधे संरक्षित हैं। जिनसे कई गंभीर बीमारियों के उपचार हेतु औषधीयां तैयार की जाती हैं एवं शोध कार्य किये जा रहे हैं।

स्व-सहायता समूह की दीदियों ने ग्राम पंचायत जलालगढ़ में स्वीप की गतिविधियां चलाई

मुरैना। कलेक्टर एवं जिला निर्वाचन अधिकारी अंकित अस्थाना के निर्देशानुसार मतदान का प्रतिशत बढ़ाने के लिये मुरैना जिले में स्वीप की गतिविधियां संचालित की जा रही है। सीईओ जिला पंचायत एवं स्वीप के नोडल अधिकारी डॉ. इच्छित गढ़पाले के मार्गदर्शन में शुक्रवार को जनपद पंचायत सबलगढ़ की ग्राम पंचायत जलालगढ़ के मजरा, जुगतीपुरा में स्वीप सखी एवं स्व-सहायता समूह की दीदियों ने मतदाता जागरूकता संबंधी गतिविधियों का आयोजन किया। जिनमें बैनर लगाकर मतदाता जागरूकता के नारों का उद्घोष किया। मतदान के बारे मे विस्तार से जानकारी दी गई। रैली निकालकर जागरूकता से संबंधित नारे लगाए और निष्पक्ष मतदान की शपथ दिलाई। शत-प्रतिशत मतदान के लिए जागरुकता रैली निकाली गई।

कृषि विश्वविद्यालय को प्राप्त हुआ आई.एस.ओ. सर्टिफिकेशन

ग्वालियर। राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर को आई.एस.ओ. सर्टिफिकेट आज प्राप्त हुआ। पूर्ण विवेचना व ऑडिट होने के उपरांत आई.एस.ओ. सर्टिफिकेट कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. अरविन्द कुमार शुक्ला को ओमवती सर्टिफिकेशन के प्रभारी मनोज कुमार द्वारा प्रदान किया गया। यह प्रमाणीकरण कृषि उत्पादन प्रणाली की उत्पादकता, लाभ अनुकूलन और स्थिरता बढ़ाने के लिए शिक्षा अनुसंधान और विस्तार गतिविधियों के लिए प्रशासनिक सहायता प्रदान करने हेतु प्रदान किया गया है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

कुटकी की उन्नत उत्पादन तकनीक

निशा सिंह, बालकृष्ण सिंह
सुधांशु जैन, जनमेजय शर्मा
नीरज हाडा एवं सुधीर सिंह भदौरिया
अखिल भारतीय समन्वित गेहूँ एवं जौ परियोजना,
कृषि महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

प्रश्न: कुटकी के सामान्य विवरण एवं वितरण के बारे में प्रकाश डालें।

उत्तर: कुटकी का वैज्ञानिक नाम-पेनिकम सुमाट्रेन्स, इंगलिश में लिटिल मिलेट एवं देशी भाषा में सामा एवं छोटा बाजरा के रूप में जाना जाता है। यह देखने में बाजरे जैसे एवं आकार में बाजरा से छोटा होता है। इसलिए इसे लघु बाजरा भी कहा जाता है। यह घास परिवार का सदस्य है। भारत में कुटकी की खेती उड़ीसा, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश एवं मध्यप्रदेश में की जाती है।

देश	क्षेत्रफल	उत्पादन	उत्पादकता
भारत	2.34 लाख हे.	1.27 लाख टन	544 कि.ग्रा./हे.

प्रश्न: कुटकी के खेती के लिए किस प्रकार की भूमि का चयन एवं भूमि की तैयारी करनी चाहिए।

उत्तर: ये फसलें प्रायः हर प्रकार की भूमि में पैदा की जा सकती है। जिस भूमि में अन्य कोई धान्य फसलों उगाना संभव नहीं होता वहां भी सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं ये फसलें उतार-चढ़ाव बाजी, कम जल धारण क्षमता वाली, उथली सतह वाली आदि कमजोर किस्त में अधिकतर उगाई जाती है। हल्की भूमि में जिसमें पानी का निकास अच्छा हो इसकी खेती के लिए उपयुक्त होती हैं बहुत अच्छा जल निकास होने पर लघु धान्य फसलें प्रायः सभी प्रकार की भूमि में उगाई जा सकती है। भूमि की तैयारी के लिए गर्मी की जूताई करें एवं वर्षा होने पर पुनः जुताई करें या बखर चलाएं जिससे मिट्टी अच्छी तरह से भुर-भुरी हो जाए।

प्रश्न-: कुटकी की खेती के लिए कौनसा बीज का चुनाव एवं कितनी बीज का मात्रा का उपयोग करना चाहिए।

उत्तर: भूमि की किस्म के अनुसार उन्नत किस्म के बीज का चुनाव करें। हल्की रेतीली, पथरीली व कम उपजाऊ भूमि में जल्दी पकने वाली जातियों का तथा मध्यम गहरी व दोमट भूमि में एवं अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में देर से पकने वाली जातियों की बोनी करें। लघु धान्य फसलों की कतारों में बुवाई के लिए 8-10 किलोग्राम बीज तथा छिटकवां बोनी के लिए 12-15 किलोग्राम बीज में लघु धान्य फसलों को अधिकतर छिटकवां विधि से बोया जाता है। किन्तु कतारों में बोनी करने से निंदाई-गुड़ाई में सुविधा होती है और उत्पादन मं वृद्धि होती है।

प्रश्न: कुटकी की खेती के लिए बुवाई का उपयुक्त समय, बीजोपचार एवं बुवाई का तरीका क्या होना चाहिए।

उत्तर: वर्षा आरंभ होने के तुरंत बाद लघु धान्य फसलों की बोनी कर देना चाहिए। शीघ्र बोनी करने से उपज अच्छी होती है। एवं रोग, कीट का प्रभाव कम होता है। कोदों में सूखी बोनी मानसून आने के दस दिन पूर्व करने पर उपज में अन्य विधियों से अधिक से अधिक उपज प्राप्त होती है। जुलाई के अंत में बोनी करने से तना मक्खी कीट का प्रकोप बढ़ना है। बोनी से पूर्व बीज को पेरासान या डायथेन एम-45 या कार्बक्सिनः थायरत 3 ग्राम प्रति किलों के हिसाब से बीजोपचार करें। ऐसा करने से बीज जनित रोगों एवं कुछ हद तक मिट्ठी जनित रोगों में फसल की सुरक्षा होती है। कतारों में बोनी करने पर कतार से कतार की दूरी 20-25 से.मी. तथा पौधों से पौधों की दूरी 7 सेंमी. उपयुक्त पाई गई है। इसकी बोनी 2-3 से.मी. गहराई पर की जानी चाहिए। कोदों में 6-8 लाख एवं कुटकी में 8-9 लाख पौधे प्रति हेक्टेयर होना चाहिए।

प्रश्न: कुटकी की खेती में खरपतवार प्रबंधन कैसे करें?

उत्तर: बुआई से 40 दिन तक खरपतवार रहित फसल छोटे बाजरे की उत्पादकता बढ़ाने में कारगर है। खरपतवार की वृद्धि को रोकने के लिए 20 और 40 डीएएस पर दो अंतर-खेती आवश्यक है और साथ ही एक हाथ से निराई करना भी आवश्यक है। उभरने से पहले खरपतवारनाशी, आइसोप्रोट्यूरॉन/0.5 किलोग्राम ए..आई का प्रयोग। हे-1 और अंकुरण के बाद 2,4-डी ना नमक (80%) / 1.0 किग्रा ए.आई. का प्रयोग। प्रभावी खरपतवार नियंत्रण के लिए 20-25 डीएएस पर हेक्टेयर-1 की सिफारिश की जाती है। सांस्कृतिक खरपतवार नियंत्रण के साथ शाकनाशी अनुप्रयोग के एकीकरण से बुआई के 40 दिनों तक खरपतवार मुक्त फसल को और बढ़ाया जा सकता है जो छोटे बाजरा की उत्पादकता को बढ़ाने में प्रभावी है। खरपतवार की वृद्धि को रोकने के लिए 20 और 40 डीएएस पर दो अंतर-खेती आवश्यक है और साथ ही एक हाथ से निराई करना भी आवश्यक है। उभरने से पहले खरपतवारनाशी, आइसोप्रोट्यूरॉन/0.5 किलोग्राम ए.आई का प्रयोग। हे-1 और अंकुरण के बाद 2,4-डी ना नमक (80%) / 1.0 किग्रा ए.आई. का प्रयोग। प्रभावी खरपतवार नियंत्रण के लिए 20-25 डीएएस पर हेक्टेयर-1 की सिफारिश की जाती है। सांस्कृतिक खरपतवार नियंत्रण के साथ शाकनाशी अनुप्रयोग का एकीकरण और भी बेहतर हो सकता है। मेटसल्फ्यूरॉन + क्लोरिम्यूरॉन इथाइल 20 ग्राम सक्रिय तत्व/हे.

प्रश्न-: कुटकी की खेती में सिंचाई प्रबंधन कैसे करें?

उत्तर: कुटकी की फसल को किसी भी सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। हालांकि, यदि फसल नमी के तनाव से गुजरती है, तो उपज को बनाए रखने के लिए 25-30 दिन और 40-45 दिन पर सुरक्षात्मक सिंचाई की सलाह दी जाती है।

पौध संरक्षण उपाय: (हेयरी कैटरपिलर) इसकी इल्लियां पत्तियों को खाकर नुकसान पहुंचाती है।

प्रबंधन: इण्डाक्साकार्ब 15.8 ईसी 500 मिली मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

व्हाइट ग्रब (इल्ली): ये इल्ली मिट्टी में जड़ के पास रहकर जड़ों व तनों को क्षति पहुंचाती है जिससे पौधे पड़कर सूखने लगते हैं।

प्रबंधन: फिप्रोनिल 0.6 प्रतिशत दानेदार दवा 10 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर के हिसाब से भुरकाव करना चाहिए।

कोदों कण्डवा रोग: पूरी बाली में दानों की जगह काले रंग का पाउडर भर जाता है।

प्रबंधन: ट्रायसाइक्लोजोल 75 डब्ल्यूपी की 1.5 ग्राम/ किग्रा. दवा से बीज को उपचारित कर बोना चाहिए। खड़ी फसल में कण्डवा ग्रसित पौधों को निकाल कर जला देना चाहिए।

ब्लास्ट (झुलसन): इसमें पत्तों डंठल और बाल पर भूरे रंग के घब्बे दिखाई देते हैं।

प्रबंधन: डायथेन एम-45 का 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव, रोग दिखाई देने पर करना चाहिए। दूसरा छिड़काव कैसे निकलते समय तथा तीसरा पुष्पावस्था के समय करना चाहिए या झुलसा निरोधी जातियां लगाना चाहिए।

लीफ ब्लाइट: इसमें भी पत्ते डंठल व बाल पर भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं।

प्रबंधन: थीरम 3 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। खड़ी फसल में से उक्त बीमारी के रोकथाम डायथेन एम-45 का 0.2 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव, रोग दिखाई देने पर करना चाहिए।

कुटकी की खेती की कटाई एवं गहाई कैसे करें?: फसल लगभग 70 से 120 दिन में पक जाती है। परिपक्व पौधों को काटा जाता है, बंडल बनाया जाता है और ढेर लगाया जाता है। ढेरों को 3 से 4 दिन तक सुखाना चाहिए और फिर हाथ, बैल या ट्रैक्टर से गहाई करनी चाहिए। सफाई के बाद अनाज को पैक करके भण्डारण करना चाहिए। छोटी बाजरा फसल की औसत अनाज उपज 8 से 15 क्विंटल हेक्टेयर-1 और चारे की उपज 40 से 60 क्विंटल हेक्टेयर-1 होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

बटन मशरूम की खेती

डॉ. सोनू शर्मा (सहायक प्रोफेसर) पादप रोग विज्ञान विभाग, आईटीएम, विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)

डॉ. पंकज कुमार बागरी गेस्ट फैकल्टी, सस्य विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)

भारत जैसे देश में जहां की अधिकांश आबादी शाकाहारी है। खुम्बी का महत्व पोषण की दृष्टि से बहुत अधिक हो गया है। यहां मशरूम का प्रयोग सब्जी के रूप में किया जाता है। भारत में खुम्बी उत्पादकों के दो समुह हैं एक जो केवल मौसम में ही इसकी खेती करते हैं तथा दूसरे जो सारे साल मशरूम उगाते हैं। मौसमी खेती मुख्यतः हिमाचल प्रदेश, जम्मू कशमीर, उत्तर प्रदेश की पहाडीयों, उत्तर पश्चिमी पहाड़ी क्षेत्रों-तमिलनाडु के पहाड़ी भागों में 2.3 फसलों के लिए तथा उत्तर पश्चिमी समतल क्षेत्रो में केवल जाडे की फसल के रूप में की जाती है। पूरे साल खुम्बी की खेती सारे देश में की जाती है। चंडीगढ़, देहरादून, गुडगावा, उंटी, पूना, चैन्नई तथा गोवा के आसपास 200 से 5000 टन प्रतिवर्ष खुम्बी उगाने वाली निर्यातोन्मुखी ईकाठयां लगी हुई है। व्यवसायिक रूप से तीन प्रकार की खुम्बी उगाई जाती है। बटन खुम्बी, ढींगरी खुम्बी तथा धानपुआल या पैडीस्ट्रा खुम्बी। इनमें बटन खुम्बी सबसे ज्यादा लोकप्रिय है। तीनों प्रकार की खुम्बी को किसी भी हवादार कमरे या सेड में आसानी से उगाया जा सकता है

भारत में बटन मशरूम उगाने का सही समय: भारत में बटन मशरूम उगाने का उपयुक्त समय अक्तुबर से मार्च के महीने हैं। इन छह महीनों में दो फसलें उगाई जाती हैं। बटन खुम्बी की फसल के लिए आरंभ में 22 से 26 डिग्री सेंटीग्रेड ताप की आवश्यकता होती है। इस ताप पर कवक जाल बहुत तेजी से बढ़ता है। बाद मे इसके लिए 14 से 18 डिग्री ताप ही उपयुक्त रहता है। इससें कम तापमान पर फलनकाय की बढ़वार बहुत धीमी हो जाती है। 18 डिग्री से अधिक तापमान भी खुम्बी के लिए हानिकारक होता है।

बटन मशरूम उगाने के लिए कम्पोस्ट बनाना तथा उसे पेटीयों या थैलियों में भरना: बटन मशरूम की खेती के लिए विशेष विधि से तैयार की गई कम्पोस्ट खाद की आवश्यकता होती है। कम्पोस्ट साधारण विधि अथवा निर्जीविकरण विधि से बनाया जाता है। कम्पोस्ट तैयार होने के बाद लकड़ी की पेटी या रैक में इसकी 6 से 8 इंच मोटी परत या तह बिछा देते हैं। यदि बटन खुम्बी की खेती पोलिथिन की थैलियों में करनी हो तो कम्पौस्ट खाद को बीजाई या स्पानिंग के बाद ही थैलियों मे भरें। थैलियों में 2 मिलीमीटर व्यास के छेद थोड़ी-थोड़ी दूरी पर कर दें।

बटन मशरूम बीजाई या स्पानिंग: मशरूम के बीज को स्पान कहतें हैं। बीज की गुणवत्ता का उत्पादन पर बहुत असर होता है अतरू खुम्बी का बीज या स्पान अच्छी भरोसेमंद दुकान से ही लेना चाहिए। बीज एक माह से अधिक पुराना भी नही होना चाहिए। बीज की मात्रा कम्पोस्ट खाद के वजन के 2.2.5% के बराबर लें। बीज को पेटी में भरी कम्पोस्ट पर बिखेर दें तथा उस पर 2 से 3 सेमी मोटी कम्पोस्ट की एक परत और चढ़ा दें। अथवा पहले पेटी में कम्पोस्ट की 3 इचं मोटी परत लगाएं और उस पर बीज की आधी मात्रा बिखेर दें। तत्पश्चात् उस पर फिर से 3 इंच मोटी कम्पोस्ट की

परत बिछा दें और बाकी बचे बीज उस पर बिखेर दें। इस पर कम्पोस्ट की एक पतली परत और बिछा दें।

बीजाई के बाद मशरूम की देखभाल

कवक जाल का बनना: बीजाई के पश्चात् पेटी अथवा थैलियों को खुम्बी कक्ष में रख दें तथा इन पर पुराने अखबार बिछाकर पानी से भिगो दें। कमरे मे पर्याप्त नमी बनाने हेतु कमरे के फर्स्ट व दीवारों पर भी पानी छिड़कें। इस समय कमरे का तापमान 22 से 26 डिग्री सेंन्टीग्रेड तथा नमी 80 से 85 प्रतिशत के बीच होनी चाहिए। अगले 15 से 20 दिनों में खुम्बी का कवक जाल पूरी तरह से कम्पोस्ट में फैल जाएगा। इन दिनों खुम्बी को ताजा हवा नही चाहिए अतः कमरे को बंद ही रखें।

परत चढाना या केसिंग करना: गोबर की सडी हुई खाद एवं बाग की मिट्टी की बराबर मात्रा को छानकर अच्छी तरह से मिला लें। इस मिश्रण का 5 प्रतिशत फार्मलीन या भाप से निर्जीवीकरण कर लें। इस मिट्टी को परत चढ़ाने के लिए प्रयोग करें। कम्पोस्ट में जब कवक जाल पूरी तरह फैल जाए तो इसके उपर उपरोक्त विधि से तैयार की गई मिट्टी की 4.5 सेमी मोटी परत विछा दें। परत चढ़ाने के 3 दिन बाद से कमरे का तापमान 14.18 डिग्री सेंटीग्रेड के बीच व आर्द्रता 80.85 प्रतिशत के बीच स्थिर रखें। यह समय फलनकाय बनने का होता है। इस समय बढ़वार हेतु ताजी हवा और प्रकाश की जरूरत होती है। इसलिए अब कमरे की खिड़कियां व रोशनदान खोलकर रखें।

खुम्बी फलनकाय का बनना तथा उनकी तुड़वाई: खुम्बी की बीजाई के 35.40 दिन बाद या मिट्टी चढ़ाने के 15.20 दिन बाद कम्पोस्ट के उपर मशरूम के सफेद फल नकाय दिखाई देने लगते हैं जो अगले चार-पांच दिनों में बटन के आकार में बढ़ जाते हैं। जब खुंबी की टोपी कसी हुई अवस्था में हो तथा उसके नीचे की झिल्ली साबुत हो तब खुम्बी को हाथ की उंगलियों से हल्का दबाकर और घुमाकर तोड लेते हैं। कम्पोस्ट की सतह से खुम्बी को चाकू से काटकर भी निकाला जा सकता है। सामान्यतः एक फसलचक्र (6 से 8 सप्ताह) में खुम्बी के 5.6 फ्लस आते हैं।

मशरूम की पैदावार तथा भंडारण: सामान्यतः 8 से 9 किलोग्राम खुंबी प्रतिवर्ग मीटर में पैदा होती है। 100 किलोग्राम कम्पोस्ट से लगभग 12 किलोग्राम खुम्बी आसानी से प्राप्त होती है। खुंबी तोड़ने के बाद साफ पानी में अच्छी तरह से धोयें तथा बाद मे 25 से 30 मिनट हेतु उनको ठंडे पानी में भीगो दें। खुम्बी को ताजा ही प्रयोग करना श्रेष्ठ होता है परन्तू फ्रिज में 5 डिग्री ताप पर 4.5 दिनों के लिए इनका भंडारण भी किया जा सकता है।

स्थानीय बिक्री हेतु पॉलीथिन की थैलियों का प्रयोग किया जाता है। ज्यादा सफेद मशरूम की मॉग अधिक होने के कारण ताजा बिकने वाली अधिकांश खुम्बीयों को पोटेशियम मेटाबाइसल्फेट के घोल में उपचारित किया जाता है। बटन खुम्बी का खुदरा मुल्य 100-125 रु. प्रति किलोग्राम रहता है। शादी ब्याह के मौसम में कुछ समय हेतु तो यह 150 रु. किलो तक भी आसानी से बिक जाती है।

मशरूम की खेती में सावधानी: मशरूम का उत्पादन अच्छी कम्पोस्ट खाद तथा अच्छे बीज पर निर्भर करता है अतः कम्पोस्ट बनाते समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। कुछ भुल चूक होने पर अथवा कीड़ा या बीमारी होने पर खुम्बी की फसल पूर्णतया या आंशिक रूप से खराब हो सकती है।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885
मै. माँ उर्वरक केन्द्र

अमित राय
रसायनिक एवं जैविक खाद बीज एवं दवाई के विक्रेता

पता: भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

नर पशु प्रजनन पर पेस्टीसाइड्स का दुष्प्रभाव

डॉ. एस.एस. माहौर, डॉ. नितिन बजाज
डॉ. रेखा मैदा एवं डॉ. रोहित शर्मा
पशु मादा रोग एवं प्रसूति विज्ञान विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू (म.प्र.)

सामान्यत: नर के बारे में कहा जाता है कि नर सम्पूर्ण पशु झुण्ड (हर्ड) का आधा हिस्सा बनाता है। अत: किसी डेयरी फार्म को आर्थिक रूप से समृद्ध बनाने के लिए मादा की प्रजनन क्षमता जितनी महत्वपूर्ण है उतनी ही नर की। विभिन्न शोधों से ज्ञात हुआ है कि कृषि पेस्टिसाइड्स का अत्यधिक उपयोग पशु चारे के माधयम से पशु शरीर में अवशेष के रूप में एकत्र हो जाता है जिस का दुष्प्रभाव पशु प्रजनन पर भी पड़ता है।

पेस्टीसाइड्स, कीटों को नियंत्रित करने के लिए सबसे हानिकारक रासायनिक पदार्थों में से एक हैं। पेस्टीसाइड शब्द का प्रयोग न सिर्फ कीटनाशकों के लिया किया जाता है बल्कि इसका उपयोग जीवाणु नाशक, फफूंद नाशक , खरपतवार नाशक एवं चूहे अथवा अन्य जीव जो मानव उपयोगी चीजों को नुकसान पहुंचाते हैं, के नाश लिए पेस्टिसाइड्स शब्द का उपयोग किया है। अधिकांश कीटनाशकों का उद्देश्य पौधों के संरक्ष उत्पादों के रूप में काम करना है, जो सामान्य तौर पर पौधों को खरपतवार, कवक या कीड़ों से बचाते हैं। वर्तमान में कृषि उत्पादकता की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति के लिए पेस्टिसाइड्स का अत्यधिक उपयोग न सिर्फ पर्यावरण को बल्कि पक्षियों, मछलियों, पशुओं एवं इंसानों को भी नुकसान पहुंचाते है जब ये खाद्य श्रृंखला का हिस्सा बनते हैं।

सोयाबीन, उड़द, लाल चना, मसूर एवं गेहूं जैसी कृषि फसलों और पत्तागोभी जैसी कुछ सब्जियों में कीड़ों से छुटकारा पाने के लिए कीटनाशकों का भारी छिड़काव किया जाता है। इन फसलों के भूसे का नियमित रूप से पशुओं के चारे के लिए उपयोग किये जाने से यह रासायनिक पदार्थ शरीर में एकत्रित होने लगते है जिनका प्रभाव विभिन्न शारीरिक क्रियाओं के साथ साथ प्रजनन तंत्र पर भी पड़ता है।

पेस्टीसाइड्स के प्रभाव का दुधारू पशुओ पर किये गए

अध्यन में 15 से 17 प्रतिसत पशु पेस्टिसाइड्स के प्रति सकारात्मक पाए गए। पेस्टिसाइड्स नर प्रजनन तंत्र को कई स्थानों पर प्रभावित करते हैं जैसे अंडकोष, सहयोगी जनन ग्रंथियां एवं केंद्रीय तंत्रिका तंत्र। प्रजनन क्षमता की अनियमितता, कामेच्छा में कमी, वीर्य की गुणवत्ता में कमी, टेस्टोस्टेरोन होर्मोनेस में कमी एवं अण्डकोषों का क्षय जैसे दुष्प्रभाव पेस्टिसाइड्स प्रभावित नर पशुओं में मिलते हैं।

वृषण और शुक्राणुओं पर पेस्टीसाइड्स का प्रभाव

पेस्टीसाइड्स के अवशेष शुक्राणु प्लाज्मा झिल्ली में विषाक्तता पैदा करके नर प्रजनन प्रणाली के लिए हानिकारक हो सकते हैं क्योंकि कई वासा में घुलने वाले ओर्गेनो क्लोरीन एवं पॉलीक्लोरिनेटेड बाइफेनाइल पेस्टीसाइड्स के अवशेषों में वीर्य के तरल भाग में केंद्रित होने की क्षमता होती है। पेस्टीसाइड्स के अवशेषों की वीर्य के तरल भाग में केंद्रित होने की क्षमता अलग अलग पशुओं में अलग अलग होती है जो कि उनके के आहार में अंतर, रक्त-वृषण और रक्त-एपिडिमिस बाधा की पारगम्यता, और प्रदूषकों को चयापचय और उत्सर्जित करने की प्रणाली पर निर्भर करती है।

भेड़ों में किए गए शोध में पाया गया कि ऐसी भेड़े जिन्हे सीवेज पानी से संक्रमित चरागाहों पर पाला गया उनके भ्रूणो के रक्त में टेस्टोस्टेरोन के स्तर में कमी के साथ-साथ लेडिग, सर्टोली और जर्म सेल संख्या में कमी देखी गई। वृषण पर कीटनाशक अवशेषों की विषाक्तता का मुख्य प्रभाव सरटोली/ लेडिग कोशिकाओं की क्षति है, जो कि शुक्राणुजनन और टेस्टोस्टेरोन हॉर्मोन के स्राव में अवरोध पैदा करता है।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

पशुओं में सींग रोधन

डॉ. रूपेश जैन वैज्ञानिक, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन, आर.व्ही.एस.के.व्ही.व्ही, कृषि विज्ञान केन्द्र, दतिया (म.प्र.)

पशुओं के सींगरोधन का कार्य किसी भी समय किया जा सकता है। परन्तु बछियों में सींगरोधन उस समय किया जाता है जबकि उनकी आयु केवल 10 से 15 दिन की होती है। पशुओं की आयु अधिक होने पर सींगरोधन करना कठिन तथा पशु के लिये कष्टदायक हो जाता है। प्रत्येक किस्म के पशुओं को सींगरहित करने की विधि को सींगरोधन कहते हैं।

सींगरोधन के लाभ: पशुओं में सींगरोधन के निम्नलिखित लाभ हैं-

1. बहुत से पशुओं को एक साथ रखने में उनकी आपसी लड़ाई का डर नहीं रहता है। अधिक ओडू मोडू सींग उलझ सकते हैं।
2. पशुओं की सहनशीलता अधिक बढ़ती है।
3. ग्वालों को पशुओं की देख-रेख करना तथा उनको चारा पानी का कार्य करने में डर नहीं लगता।
4. पशुओं की आपसी लड़ाई में तथा एक दूसरे से भिड़ जाने पर उनको शारीरिक चोट आने का डर नहीं रहता।
5. कई एक किस्म के पशु एक साथ रखे जा सकते हैं।
6. कमजोर, शक्तिवान, छोटे तथा बड़े पशु एक साथ रखे जा सकते हैं।
7. ओडू मोडू सींग से छुटकारा मिल जाता है अतः पशु की सुन्दरता बढ़ती है।

पशुओं के सींगरोधन की विधियां: पशुओं के सींगरोधन के लिये निम्नलिखित विधियों का प्रयोग किया जाता है।

1.कॉस्टिक छड़ द्वारा सींगरोधन 2.डीहार्नर द्वारा सींगरोधन 3.रासायनिक डिहार्नर द्वारा सींगरोधन 4.डिहार्निंग आरी द्वारा सींगरोधन 5.एजैस्ट्रेटर द्वारा सींगरोधन 6.प्रजनन के द्वारा सींगरोधन

1. कॉस्टिक छड़ द्वारा सींगरोधन

सींगरोधन की यह सबसे उत्तम विधि है परंतु यह विधि केवल एक या दो सप्ताह की आयु तक ही अपनाई जा सकती है। इस विधि में कॉस्टिक पोटाश की छड़ प्रयोग में लाई जाती है। इस विधि में सींग निकलने के स्थानों के चारो ओर के बाल कैंची से काटकर सींग की गांठ को खुरचते हैं। इन गांठों को इतना खुरचते हैं कि उनमें मामूली एक दो बूँद खून उभरने लगे। अधिक रगड़ने से मृत्यु हो सकती है। इसके साथ ही कॉस्टिक पोटाश होल्डर से पकड़कर इस छड़ के सिरे को सींग निकलने के स्थान पर रगड़ते हैं जब तक कि खून निकलने न लगे। रगड़ते समय यह छड़ सींग की गांठ के अतिरिक्त शरीर की खाल पर नहीं लगने देनी चाहिये। खाल जलने से बचाने के लिये सींग की गांठ के चारों ओर ग्रीस लगा दी जाती है। कॉस्टिक पोटाश की छड़ के रगड़ने से सींग बनाने वाली कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं और फिर सींग नहीं जमती है।

इस विधि द्वारा सींगरोधन के समय निम्नलिखित सावधानियॉं रखनी चाहिये।

1. कॉस्टिक पोटाश की बत्ती को सावधनी से पकड़ा जाए अन्यथा उससे हाथ जल सकता है। बत्ती के ऊपरी सिरे पर कागज अथवा कपड़ा लपेट लेना चाहिये।
2. कॉस्टिक पोटाश अधिक रगड़ने पर अथवा सींग निकलने के सही स्थान से इधर-उधर रगड़ने पर रक्त निकलने लगता है और उस स्थान पर घाव होने का भय रहता है।
3. सींग निकलने के चारों ओर ग्रीस व बोरिक एसिड पावडर अवश्य लगा देना चाहिए अन्यथा कॉस्टिक पोटाश आखों को हानि पहुँचा सकता है।
4. कॉस्टिक पोटाश लगाने के पष्चात् पषु के सिरे को भीगने नहीं देना चाहिये।
5. इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पशु उस स्थान को न चाटने पाये जिस पर कॉस्टिक पोटाश लगाई गई है अन्यथा उसकी जीभ पर घाव हो जाएगे।

2. डीहार्नर द्वारा सींगरोधन

बड़ी उम्र अथवा जवान पशुओं के सींगरोधन के लिये एक विशेष प्रकार का डिहोर्नर प्रयोग किया जाता है। इससे पशु के सींग को चण्डा की किस्म के अनुसार उखाड़ा जाता है, काटा जाता है अथवा उसे जलाया जाता है। यह विधि आसान तथा साधारण तो अवश्य है परन्तु पशु के लिये कष्टदायक बहुत होती है। सींग उखाड़ने के पश्चात् जड़ से खून निकलता है जिससे छूत की बीमारी होने का डर होता है।

3. रासायनिक डिहार्नर द्वारा सींगरोधन

सींगरोधन की यह रासायनिक विधि है। रासायनिक पदार्थों से एक ऐसा पदार्थ तैयार किया जाता है कि इसकी सींग की गांठ पर लेप कर देने से सींग आगे नहीं बढ़ती है। पोल्डीहोर्नर इस प्रकार के डिहोर्नर का मुख्य उदाहरण है। इसके प्रयोग से पशु को कोई कष्ट नहीं होता है और सींग पूर्णतः समाप्त हो जाती हैं तथा इसके पश्चात् बढ़ने नहीं पाती।

4. डिहार्निंग आरी द्वारा सींगरोधन

कभी-कभी पशुओं के पूर्ण रूप से बड़े हुए सींगों को काटने की आवश्यकता पड़ जाती है। इस दशा में सींगों को काटने के लिये आरी का प्रयोग किया जाता है। इससे सींगों को काटने में पशु को कष्ट होता है। इस विधि का प्रयोग उस समय किया जाता है जब पषु के सींगों में कोई विशेष प्रकार की बीमारी हो जाती है या सींग बहुत अधिक बढ़ जाते हैं। पूर्णरूप से सींगरोधन करने के लिये कास्टिक छड़ द्वारा सींगरोधन करने की विधि का ही प्रयोग किया जाता है। जिन पशुओं को सींग रहित करना होता है उन्हें थोड़ी अर्थात दो या तीन सप्ताह की आयु में ही सींग रहित कर देना चाहिये।

5. एजैस्ट्रेटर द्वारा सींगरोधन

इस विधि में बहुत सख्त, छोटे व मोटे रबर के छल्ले एक विशेष यन्त्र द्वारा चौड़ा करके सींग की जड़ों पर पहना देते हैं जिससे ये छल्ले सींगों को रक्त, भोजन व आक्सीजन आदि नहीं मिलने देते, फलस्वरूप सींग कुछ समय बाद सूख जाते हैं। यह एक सरल विधि है जिसमें सींग निरोधन करते समय रक्त नहीं निकलता, परन्तु इस विधि में मूल्यवान यन्त्रों की आवश्यकता होती है तथा समय भी अधिक लगता है।

6. प्रजनन के द्वारा सींगरोधन

सींग निरोधन की उपरोक्त सभी क्रियाओं में पशु को कष्ट होता है, घाव बनता है एवं रक्त निकलता है। अतः इन कष्टों से पशु को बचाने के लिये प्रजनन विधि से उन्हें सींग रहित करते हैं। इस विधि में सींग बिहीन नर का सींगों वाली मादा से क्रास कराते हैं। इसके प्रजनन के बाद जो संतान पैदा होती है वह सींग रहित होती है। यह अधिक समय लेने वाली विधि है, भारत में इसका प्रयोग बड़े-बड़े डेयरी फार्मों तक ही सीमित है। देहातों में यह विधि नहीं अपनाई जाती लेकिन विदेशों में इसका प्रचलन बहुत अधिक है।

जैन बीज भण्डार
एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510
04/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

आंवले के विभिन्न उपयोग एवं उसमें उपस्थित पोषक तत्वों की जानकारी

डॉ. पंकज कुमार बागरी (गेस्ट फैकल्टी)
सस्य विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय पन्ना (म.प्र.)

डॉ. विजय कुमार यादव (अधिष्ठाता)
कृषि महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)

डॉ. सोनू शर्मा (सहायक प्रोफेसर)
पादप रोग विज्ञान विभाग, आईटीएम,
विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

आंवला (एम्ब्लिका ऑफिसिनैलिस): आमतौर पर आंवला को इंडियन गूजबेरी कहा जाता है। इन पेड़ों की बेरी को इनके औषधीय गुणों के कारण औषधीय फार्मूलेशन में प्रयुक्त किया जाता है। आंवला के पेड़ पर छोटी बेरीज़ होती हैं जो गोल और पीले-हरे रंग की होती है। इसके कई स्वास्थ्य फ़ायदों के कारण इसे सुपरफूड कहा जाता है। प्राचीन आयुर्वेद में आंवला को खट्टा, और अमरता जैसे अलग-अलग नामों से जाना जाता है। आंवला की एक अनोखी स्वाद विशेषता होती है, जिसमे पांच अलग-अलग स्वाद जैसे तीखा, कसैला, मीठा, कड़वा, खट्टा और इसके अलावा अन्य स्वाद भी भरे होते हैं। यह मन और शरीर के बेहतर स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करता है। यही कारण है कि इसे एक दिव्य औषधि "दिव्यौषदा" के रूप में जाना जाता है। आंवला को संस्कृत में अमालाकी कहा जाता है जिसका अर्थ है जीवन का अमृत।

खाली पेट आंवला खाने के फायदे

■ सबसे पहली बात तो आंवला विटामिन सी से भरपूर होता है, इस लिहाज से ये स्किन और बालों के लिए बहुत फायदे मंद होता है ■ इसमें विटामिन सी, एंटीऑक्सीडेंट, आयरन, ऐन्थोसाइनिन, फ्लैवोनोइड्स और पोटेशियम होता है जो शरीर के लिए महत्वपूर्ण पोषक तत्व हैं। सर्दियों में इसका सेवन बहुत ज्यादा लाभकारी होता है ■ शरीर अच्छे ढंग से डिटॉक्स हो जाता है. मेटाबॉलिज्म और इम्यून को बूस्ट करताहै . यह शरीर से विषैले पदार्थों को निकालने में मदद करता है। आंवले का पानी पीने से वजन भी कंट्रोल होता है ■ आंवले का सेवन करने से स्किन में भी सुधार होता है. इससे पिगमेंटेशन, दाग धब्बे दूर होते हैं. आप इस के पाउडर को हेयर मास्क की तरह इस्तेमाल कर सकते हैं

आंवला की पोषक मूल्य : आंवला का फल एस्कॉर्बिक एसिड (विटामिन सी), कैरोटीन का एक अच्छा स्रोत है। इसमें अलग-अलग पॉलीफेनोल्स होते हैं जैसे कि एलेजिक एसिड, गैलिक एसिड, एपिजेनिन, क्वेरसेटिन, ल्यूटोलिन एवं कोरिलागिन।

आंवला के फ़ायदे

1. **आंवला और हाइपरटेंशन:** आंवला विभिन्न एंटीऑक्सिडेंट का अच्छा स्रोत है। यह मानव के तनाव में होने के दौरान शरीर द्वारा निर्मित मुक्त रैडिकल को साफ करने के लिए जाना जाने वाला एक एंटीऑक्सिडेंट गुण है। आंवला में एंटीऑक्सिडेंट के साथ-साथ पोटेशियम भी काफी मात्रा में होता है। इसलिए, ब्लड प्रेशर को नियंत्रित करने की पोटैशियम की क्षमता के कारण, ब्लड प्रेशर की समस्याओं से पीड़ित रोगियों के आहार में इसका नियमित रूप से उपयोग किया जाता है। पोटैशियम द्वारा हाइपरटेंशन के प्रबंधन में शामिल मुख्य मकैनिज़्म ब्लड कोशिकाएँ को फैलाना है, जो ब्लड प्रेशर की संभावनाओं को और कम कर देता है। इस स्थिति में आंवला का जूस पीना असरदार हो सकता है।

2. **डायबिटीज़ में आंवला:** परंपरागत रूप से, आंवला का उपयोग डायबिटीज़ को नियंत्रित करने के लिए घरेलू उपचार के रूप में किया जाता है। डायबिटीज़ के पीछे का मुख्य कारण तनाव होना है। आंवला विटामिन ष्ट का अच्छा स्रोत है। यह एक शक्तिशाली एंटीऑक्सिडेंट है और ऑक्सीडेटिव तनाव के असर को बदलने में मदद करेगा। आंवला के उत्पादों का नियमित सेवन डायबिटीज़ की संभावनाओं को रोक सकता है। अन्य मैकेनिज़्म में, आंवला के रेशे शरीर में अतिरिक्त शुगर को नियमित ब्लड शुगर के स्तर तक अवशोषित करने में मदद कर सकते हैं। इसलिए आंवला को अपने डायबिटीज़ डाइट प्लान में शामिल करने से डायबिटीज़ के असरदार प्रबंधन में मदद मिल सकती है।

3. **आंवला और पाचन तंत्र:** आंवला की बेरीज़ में पर्याप्त मात्रा में घुलनशील फाइबर होते हैं। ये फ़ाइबर आंतों की गति को विनियमित करने में भूमिका निभाते हैं। आंवले में विटामिन ष्ट की अधिक मात्रा होने के कारण, यह आवश्यक खनिजों की अच्छी मात्रा को अवशोषित करने में भी मदद करता है। इसलिए यह विभिन्न हेल्थ सप्लीमेंट के साथ तालमेल रखता है।

4.**आंवला तेल और बालों का स्वास्थ्य:** बालों की वृद्धि को बढ़ाने हेतु आंवला के तेल का उपयोग लंबे समय से घरेलू उपचार के रूप में किया जाता रहा है। बालों की मालिश हेतु नारियल तेल और आंवला के मिश्रण का नियमित रूप से उपयोग करने से बालों की बेहतर तरह से वृद्धि हो सकती है। आंवला तेल बालों के फॉलिकल्स को उनके बेहतर वृद्धि हेतु उत्तेजित कर सकता है। आंवले के तेल का प्रयोग करने से बालों की लंबाई और घनेपन में सुधार होता है। इसमें विटामिन C होता है जो कोलेजन के स्तर को बढ़ाने में मदद करता है। यह सिर की त्वचा पर मृत बालों की कोशिकाओं को बदलकर नए बालों की वृद्धि को सीधे प्रभावित करता है। आंवला न केवल बालों के बढ़ने में मदद करता है बल्कि स्कैल्प को हाइड्रेट करके डैंड्रफ की समस्या को भी रोकता है। विटामिन C, अपने शक्तिशाली एंटी- इंफ्लेमेटरी और एंटी- बैक्टेरियल प्रभाव के कारण बालों को खुजली और पपड़ी से रोकता है।

5. **स्वस्थ आंखें:** आंवला विटामिन A का भी अच्छा स्रोत है, जो आंखों के स्वास्थ्य को बढ़ाने के लिए जाना जाता है। आंवले की बेरीज़ में मौजूद विटामिन, से वीज़न में सुधार होता है। यह उम्र बढ़ने के साथ होने वाले मैकुलर डिजेनेरेशन और कंजंक्टिविटिस के जोखिम को भी कम कर सकता है।

6. **अछे स्वस्थ के लिए आंवला से बने उत्पाद और उनकी सुझाई गई खुराक:** आंवला की आयुर्वेदिक खुराक इसके प्रकारों के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। आंवला के उत्पादों के विभिन्न रूप

उत्पाद	बनाने की विधि	खुराक / दिन
चूर्ण	आधा चम्मच आंवला के चूर्ण को गुनगुने पानी के साथ लें।	2 बार
कैप्सूल	भोजन के बाद ज्यादा पानी के साथ 1-2 आंवला के कैप्सूल लें।	2 बार
टैबलेट	भोजन के बाद ज्यादा पानी के साथ 1-2 आंवला के कैप्सूल लें।	2 बार
कैंडी	भोजन के बाद 1-3 आंवला कैंडी लें।	-
जूस	भोजन करने से पहले 3-4 चम्मच आंवला का जूस लें।	2 बार

उपरोक्त दिए गए सप्लीमेंट्स के अलावा, स्थानीय सुपरमार्केट में आंवला के विभिन्न उत्पाद उपलब्ध हैं, जैसे कि आंवला का मुरब्बा, आंवला-गाजर-चुकंदर का रस और आंवला की चटनी।

आंवला का सेवन करते समय सावधानियां: • कुछ लोग जिन्हे एलर्जी हो जाती है उनके लिए आंवला के उत्पादों का सेवन ब्लडिंग के खतरे को बढ़ा देता है। • डायबिटिक रोगी को, आंवला को लेते समय उचित सावधानी बरतनी चाहिए क्योंकि इसका सेवन ब्लड शुगर के स्तर को काफ़ी कम कर सकता है। • आंवला का जूस पीने से त्वचा रूखी हो सकती है। • खांसी या कफ़ की समस्या होने पर आंवला के सेवन से बचना चाहिए। • सर्जरी के दौरान और उसके बाद आंवला लेने का सुझाव नहीं दिया जाता है, क्योंकि इससे ब्लडिंग का खतरा बढ़ सकता है।

10/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

कद्दूवर्गीय सब्जियों में कीट एवं रोग नियंत्रण

हिमांशु शेखर सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र, बरासिन, सुलतानपुर (उ.प्र.)
नीलम सोनी राजमाता विजयराजे सिंधिया, कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

सब्जी उत्पादन में चीन के बाद भारत का दूसरा स्थान है। कुल सब्जी उत्पादन में कद्दूवर्गीय सब्जियों का लगभग 8% हिस्सा है। भारत देश में कददूवर्गीय सब्जियों के अन्तर्गत मुख्य रूप से लौकी, खीरा, करेला, कददू, ककड़ी आदि की खेती जाती है। इनके कोमल एवं मुलायम फलो का प्रयोग सब्जी एवं विभिन्न प्रकार के पकवान बनाने में किया जाता है। कददूवर्गीय सब्जियों की खेती खरीफ एवं जायद दोनों श्रतुओं में की जाती है। कददूवर्गीय सब्जियों में विभिन्न प्रकार के कीट एवं रोगों का आक्रमण होता है जिनकी पहचान एवं नियंत्रण निम्नवत है।

प्रमुख कीट एवं उनका नियंत्रण

लाल भृंग कीट- इस कीट की प्रौढ़ अवस्था ही क्षतिकारक होती है। प्रौढ का शरीर चमकीले लाल रंग के कठोर पंखो से ढका रहता है जिनके ऊपर कई काले धब्बे होते हैं। यह कीट पौधों की छोटी कोमल पत्तियों को खाकर नष्ट कर देता है। अधिक आक्रमण की स्थिति में पौधे पत्ती रहित हो जाते हैं।

नियंत्रण: सुबह ओस पड़ने के समय राख का भुरकाव करने से प्रौढ पौधों पर नही बैठता है जिससे नुकसान कम होता है। इस कीट का अधिक आक्रमण होने पर बाजार में उपलब्ध कीटनाशी जैसे-डेल्टामेथ्रिन 11% (ई.सी.) 150 मिली अथवा साइपरमेथ्रिन 25% (ई.सी.) 250 मिली प्रति एकड़ की दर से 150 लीटर पानी के साथ छिडकाव करते हैं।

फल मक्खी: इस कीट की सूड़ी अवस्था हानिकारक होती है। प्रौढ़ पौधों के छोटे मुलायम फलो में छिद्र बनाकर उसमें अपने अण्डे रख देती है जिनसे सूड़ियाँ निकलकर फलों के गूदे को खाकर नष्ट कर देती है मक्खी फल के जिस भाग पर अण्डे देती है वह भाग वहाँ से टेढ़ा होकर सड़ जाता है तथा उन पर छोटे-छोटे निशान बन जाते हैं जो गोंद जैसे पदार्थ से ढके रहते हैं।

नियंत्रण: इस कीट से बचाव के लिये सर्वप्रथम कीटग्रस्त फलों को तोड़कर जमीन में दबा देना चाहिए तथा क्षति की प्रारम्भिक अवस्था में आवश्यकतानुसार कीटनाशी जैसे- डेल्टामेथ्रिन 11 प्रतिशत (ई.सी.) 150 मिली या साइपरमेथ्रिन 25 प्रतिशत (ई.सी.) 200 मिली प्रति एकड़ की दर से 1.5 किग्रा गुड़ के साथ मिलाकर 10-12 दिन के अन्तराल पर 2 छिड़काव करना चाहिए।

पर्ण सुरंगक: इस कीट की मैगट अवस्था ही हानिकारक होती है। कभी-कभी यह कीट कददूवर्गीय फसलों को बहुत नुकसान पहुचाता है इस कीट के आक्रमण से पौधो की पुरानी पत्तियो पर सफेद धारिया बन जाती हैं। कुछ समय बाद इनका प्रकोप नई पत्तियों पर भी दिखाई देता है यह कीट पत्तियों के हरे भाग (क्लोरोफिल) को खुरचकर खाता है जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित होती है अतः पौधा अपना भोजन नही बना पाता है।

नियंत्रण: इस कीट के नियंत्रण हेतु क्लोरेंट्रानीलीप्रोल 18.5 प्रतिशत (एस.सी.) 60 मिली अथवा थायमिथोक्जाम 25 प्रतिशत (डब्ल्यू.जी.) 100 ग्राम प्रति एकड़ की दर से छिडकाव करें।

सफेद मक्खी: यह छोटे आकार का एक प्रमुख कीट है। इस कीट का पूरा शरीर सफेद मोम जैसे पदार्थ से ढका रहता है इसीलिये इसे सफेद मक्खी कहा जाता है इस कीट के शिशु एवं प्रौढ दोनों ही पौधों की नयी पत्तियों से रस चूसते हैं जिससे पत्तियों की शिरायें पीली पड़कर कमजोर

हो जाती हैं तथा पत्तियों की मोटाई सामान्य से कुछ अधिक हो जाती है।

नियंत्रण: इस कीट की रोकथाम हेतु बोने से पहले बीज को इमिडाक्लोप्रिड 48% (एफ.एस.) 5 मिली/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। खड़ी फसल में कीट का आक्रमण होने पर पायरीपोक्सीफेन 10 % (ई.सी.) 300 मिली अथवा एसीटामिप्रिड 20% (एस.पी.) 150 ग्राम प्रति एकड़ की दर से 10-12 दिन के अंतराल पर 2 छिड़काव करना चाहिए। एक ही दवा का दोबारा प्रयोग नही करना चाहिए।

माहू: तापमान बढ़ने एवं गर्म हवाएं चलने के साथ ही इस कीट का प्रकोप बढ़ जाता है। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों पौधों के विभिन्न भागों से रस चूसकर पौधों के विकास एवं बढ़वार को प्रभावित करते हैं। प्रभावित पौधों की पत्तियों पर पीले या गहरे हरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं एवं उन पर फूल व फल कम लगते हैं। ये कीट पौधों पर एक विशेष प्रकार का मधु स्रव करते हैं जिससे उन पर काली फंफूद उग आती है। ये कीट पौधों में विषाणु रोग फैलाने में भी सहायक होते हैं।

नियंत्रण: इस कीट के नियंत्रण हेतु फ्लोनिकामिड 50 प्रतिशत (डब्ल्यू.जी) 60 ग्राम या थायमिथोक्जाम 25 प्रतिशत (डब्ल्यू.जी.) 100 ग्राम प्रति एकड की दर से छिड़काव करें।

थ्रिप्स: इस कीट के प्रौढ़ चमकीले रंग के तथा अत्यंत छोटे होते हैं। जिन्हे हम अपनी नंगी आखों से नही देख पाते हैं। ये झुण्ड में नयी पत्तियों पर चिपके रहते हैं एवं उनका रस चूस लेते हैं जिससे पत्तियों पर धब्बे पड़ जाते हैं एवं पत्तियां अन्दर की तरफ मुड़ जाती हैं तथा कुछ समय बाद पूरा पौधा मुरझा कर सूख जाता है। यह कीट तरबूज में बड नेक्रोसिस विषाणु रोग का वाहक भी है।

नियंत्रण: बुवाई से पूर्व बीज को इमिडाक्लोप्रिड 48 प्रतिशत (एफ.एस.) 5 मिली/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। खड़ी फसल में कीट का आक्रमण होने पर कीटनाशक जैसे- फिप्रोनिल 5 प्रतिशत (एस.सी.) 250 मिली या थायमिथोक्जाम 25 प्रतिशत (डब्ल्यू.जी.) 100 ग्राम प्रति एकड की दर से छिड़काव करना चाहिए।

प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण

मृदुरोमिल आसिता: कद्दूवर्गीय फसलों की यह प्रमुख बीमारी है। इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों की उपरी सतह पर हल्के पीले रंग के कोणीय धब्बों के रूप मे दिखाई देते हैं। कुछ समय बाद इन धब्बों के नीचे पत्तियों की निचली सतह पर फफूंदी कपास के समान बैगनी या गुलाबी रंग की विकसित होती हुई दिखाई पड़ती है। जब तापमान 20-22 डिग्री सैल्सियस हो तथा वातावरण में नमी हो तब यह रोग तेजी से फैलता है।

नियंत्रण: इस रोग की रोकथाम के लिए बुआई से पहले बीज को कार्बेन्डाजिम+मैंकोजेब 75% (डब्ल्यू.एस.) 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। खेत में रोग के लक्षण दिखाई देते ही आवश्यकतानुसार कवकनाशी जैसे- साइमोक्सानिल+मैंकोजेब 72% (डब्ल्यू.पी.) 600 ग्राम अथवा मेटालैक्सिल-एम.+मैन्कोजेब 68% (डब्ल्यू.पी.) 400 ग्राम प्रति एकड़ की दर से 150 लीटर पानी के साथ 10-12 दिन के अन्तराल पर 2 छिड़काव करें।

चूर्णिल आसिता: इस रोग का प्रसार पौधो में हवा के द्वारा होता है तथा 16-24 दिन की पुरानी पत्तियों में ही रोग का आक्रमण अधिक होता है जबकि नयी पत्तियो पर रोग का आक्रमण प्रायः नहीं होता। पुरानी पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद पाउडर जैसा चूर्ण दिखाई देता है ज0 कुछ समय पश्चात् पत्तियों की दोनो सतहों पर फैल जाता है जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित होती है। मध्यम तापमान (20-270 सेल्सियस) एवं उच्च आर्द्रता (95 प्रतिशत) पर यह रोग तेजी से फैलता है।

नियंत्रण: इस रोग के नियंत्रण हेतु माइक्लोब्युटानिल 10 प्रतिशत (डब्ल्यू.पी.) 150 ग्राम या हेक्साकोनाजोल 5 प्रतिशत (एस.सी.) 300 मिली प्रति एकड की दर से छिड़काव करना चाहिए।

फल विगलन: इस रोग का आक्रमण उन फलों पर अधिक होता है जो फल जमीन के सीधे संपर्क में रहते हैं। रोग की प्रारम्भिक अवस्था में फल के जिस हिस्से पर संक्रमण शुरु होता है उस हिस्से पर कोमल, हरा एवं जलसिक्त जैसी संरचना बन जाती है। नम वातावरण में फल के संक्रमित हिस्से में कवक की रुई जैसी बढ़वार दिखाई देती है। कुछ समय पश्चात् फल पूर्ण रुप से सड़ जाते हैं। अधिक नमी एवं उच्च तापमान होने पर इस रोग का आक्रमण अधिक होता है।

नियंत्रण: पौधों की लताओं को चढ़ाने हेतु सहारा देना चाहिए जिससे फल जमीन के सीधे संपर्क में न रहें। खेत में जल निकास का उचित प्रबंध होना चाहिये। खड़ी फसल में रोग के लक्षण दिखाई देने पर साइमोक्सानिल+मैंकोजेब 72% (डब्ल्यू.पी.) 600 ग्राम अथवा मेटालैक्सिल-एम.+मैन्कोजेब 68% (डब्ल्यू.पी.) 400 ग्राम प्रति एकड़ की दर से 10-12 दिन के अन्तराल पर 2 छिड़काव करें।

एन्थ्रेक्नोज: वर्षाकालीन फसल पर इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। पौधो का जमीन से ऊपर का सभी भाग इस रोग से प्रभावित होता है प्रारम्भ में पत्तियों पर जलसिक्त जैसी संरचना बन जाती है तथा बाद में उन पर गोल पीले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। कुछ समय बाद ये धब्बे भूरे रंग में बदल जाते हैं तथा आपस में मिलकर पत्तियों को जला देते हैं। रोगग्रस्त फलों पर जलसिक्त, गोल या अण्डाकार भूरे-काले रंग के धब्बे पड़ जाते है जो बाद में बढ़कर आपस में मिल जाते हैं तथा फलों को सड़ा देते हैं। गर्म एवं नम मौसम में यह रोग तेजी से फैलता है।

नियंत्रण: बीज को बुआई से पहले कार्बेन्डाजिममैंकोजेब 75 प्रतिशत (डब्ल्यू.एस.) 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। खेत में रोग के लक्षण दिखाई देने पर आवश्यकतानुसार कवकनाशी जैसे- टेबुकोनाजोलक्रैप्टान 33.6% (एस.सी.) 250 मिली या पाइरेक्लोस्ट्रोबिनमेंटीराम 60% (डब्ल्यू.जी.) 600 ग्राम प्रति एकड़ की दर से छिडकाव करना चाहिये।

गम्मी तना झुलसा: इस बीमारी में पौधों की जड़ो को छोड़कर शेष सभी भागो में संक्रमण होता है। प्रारम्भिक लक्षण के रूप में पत्तियों के किनारों पर पीलापन/हरिमाहीनता दिखाई पड़ती है और सतह पर जलसिक्त धब्बे दिखाई देते हैं। रोग से ग्रसित पौधे के तने पर घाव बन जाते हैं जिससे लाल-भूरे रंग का चिपचिपा पदार्थ (गम) निकलता है।

नियंत्रण: रोपाई का निरीक्षण करते रहें एवं संक्रमित पौधों को उखाड़ कर खेत से बाहर कर दें। बीमारी के लक्षण दिखाई देते ही एजोक्सीस्ट्राबिन+डाइफेनोकोनाजोल 29.6% (एस.सी.) 200 मिली अथवा मेटालैक्सिल-एम.मैन्कोजेब 68% (डब्ल्यू.पी.) 400 ग्राम प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

फसल अवशेष प्रबन्धन

डॉ. शैलेश कुमार सिंह
डॉ. अरविंदर कौर, डॉ. रूपेन्द्र कुमार
वरिष्ठ वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान), राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय- कृषि विज्ञान केन्द्र, दतिया (म.प्र.)

खेत में विभिन्न फसलों की कटाई के बाद बचे हुए डंठल तथा गहई के बाद बचे हुए पुआल, भूसा, तना तथा जमीन पर पड़ी हुई पत्तियों आदि को फसल अवशेष कहा जाता है। पिछले कुछ वर्षों से कृषि में यंत्रो का प्रयोग बढ़ा है। साथ ही खेतीहर मजदूरों की कमी की वजह से भी यह एक आवश्यकता बन गई है। ऐसे में कटाई व गहाई के लिए कंबाईन हार्वेस्टर का प्रचलन बहुत तेजी से बढ़ा है, जिसकी वजह से भारी मात्रा में फसल अवशेष खेत में पड़ा रह जाता है। जिसका समुचित प्रबन्धन एक चुनौती है। किसान अपनी सहुलियत के लिए इसे जलाकर प्रबन्धन करते हैं। इसके पीछे किसानों का कहना है कि कुछ फसलें जैसे कि धान-गेहूँ के अवषेष मिट्टी में जल्दी से गलते नहीं हैं। गेंहूँ के ठूँठ धान की रोपाई के समय खेत के किनारों पर इकट्ठे होने से मजदूरों के पैरों में चुभते हैं। अलग से अवशेष प्रबन्धन में धन, मजदूर, समय आदि की आवश्यकता होती है और दो फसलों के बीच उपयुक्त समय के अभाव की वजह से भी वे ऐसा करने के लिए बाध्य हैं। उनका यह भी कहना है कि फसल अवशेषों को जला देने से खेत साफ होता है। परन्तु इस तरह फसल अवशेष प्रबन्धन, खेत की मिट्टी, वातावरण व मनुष्य एवं पशुओं के स्वास्थ्य के लिए कितना घातक है इसका अंदाजा आज भी किसानों को नहीं है।

हमारे देश में सालाना 630-635 मि. टन फसल अवशेष पैदा होता है। कुल फसल अवशेष उत्पादन का 58% धान्य फसलों से 17% गन्ना, 20% रेशा वाली फसलों से तथा 5% तिलहनी फसलों से प्राप्त होता है। सर्वाधिक फसल अवशेष जलाने की रिपोर्ट पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश से हैं परन्तु आन्ध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, पूर्वी उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में फसल अवशेष जलाने की प्रथा चल पड़ी है और बदस्तुर जारी है। फसल अवशेष प्रबन्धन की विधियों की जानकारी न होने व होते हुए भी किसान अनभिज्ञ बने हुए हैं। आज कृषि के विकसित राज्यों में मात्र 10% किसान ही अवशेषों का प्रबन्धन कर रहे हैं।

फसल अवशेष जलाने से मृदा में होने वाली हानियां

भूमि की उर्वराशक्ति में ह्रास: अवशेष जलाने से 100 प्रतिशत नत्रजन, 25 प्रतिशत फास्फोरस, 20 प्रतिशत पोटाश और 60 प्रतिशत सल्फर का नुकसान होता है।

- भूमि के कार्बनिक पदार्थों का ह्रास।
- फसल अवशेषों से मिलने वाले पोषक तत्वों से मृदा वंचित रह जाती है।
- जमीन की ऊपरी सतह पर रहने वाले मित्र कीट व केंचुआ आदि भी नष्ट हो जाते हैं।

मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव

- अस्थमा और दमा जैसी सांस से सम्बन्धित बीमारियों के मरीजों को काफी परेशानी का सामना करना पड़ता है साथ ही इन रोगों के मरीजों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है।
- सल्फर डाईऑक्साइड व नाइट्रोजन ऑक्साइड के कारण आँखों में जलन।

पर्यावरण सम्बन्धी दुष्परिणाम

- यह वैश्विक तपन (ग्लोबल वार्मिंग) को बढ़ाता है।
- स्मॉग जैसी स्थिति पैदा हो जाती है जिससे सड़क पर दुर्घटना होती है।
- फसल अवशेष के साथ-साथ खेत के किनारे के पेड़ों को भी आग से नुकसान पहुँचता है।
- ओजोन परत का ह्रास।
- अत्यधिक मात्रा में कार्बन डाई ऑक्साइड के उत्सर्जन से नुकसान।
- ग्रीन हाउस गैसों का अधिक मात्रा में उत्सर्जन से वैश्विक तपन को बढ़ावा।

अवशेष प्रबन्धन विकल्प

अभी तो मुख्यतः पशुचारा के लिए कुछ अवशेष इकट्ठा करने के उपरान्त शेष को जलाया जा रहा है जिससे पर्यावरण, मनुष्य एवं पशु स्वास्थ्य की हानि हो रही है। अवशेष प्रबन्धन के निम्न विकल्प इस प्रकार हो सकते हैः

- अवशेषों को पशुचारा अथवा औद्योगिक उपयोग के लिए इकट्ठा करना।
- अवशेषों को मिट्टी में मिश्रित करना।
- अवशेष को भूमि के सतह पर रखना।

1.अवशेषों को पशुचारा अथवा औद्योगिक उपयोग के लिए इकट्ठा करना

- धान के पुवाल या पराली को पशुओं के चारे के रूप में प्रयोग (यद्यपि इसमें सिलिका की मात्रा काफी अधिक हैं) धान के पुआल का यूरिया कैल्शियम हाइड्रोऑक्साइड से उपचार या फिर प्रोटीन द्वारा संवर्धन कर पशु चारे के रूप में उपयोग ।
- पुआल को भूराध् सफेद तथा मुलायम सड़न कवकों के प्रयोग द्वारा उपचार से गुणवत्ता में सुधार कर चारे के रूप में उपयोग।
- पुआल को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर वाष्प से उपचारित कर चारा के रूप में प्रयोग में लाया जा सकता है।
- स्ट्रों बेलर द्वारा खेत में पड़े फसल अवशेषों का ब्लॉक बनाकर कम जगह में भंडारित कर चारे में उपयोग।
- रीपर का प्रयोग कर भूसा बनाना।
- फसल अवशेषों का मशरुम की खेती में सार्थक प्रयोग किया जा सकता है।
- धान के अवशेषों का गैसीकरण कर ऊर्जा का उत्पादनः कई सारी कम्पनियाँ धान के पुआल से बिजली पैदा कर रही है। यह फसल अवशेष का एक प्रभावी प्रबन्धन है। देश के मुख्य चावल उत्पादक राज्यों में बड़े पैमाने पर इसे प्रसारित करने की आवश्यकता है।
- फसल अवशेषों के प्रभावी प्रयोग जैसे, गत्ता बनाना आदि नए-नए वैकल्पिक उपयोगों का पता लगाने की नितान्त आवश्यकता।

2. अवशेषों को खेत में जलाना

किसी भी दृष्टिकोण से फसल अवशेषों को जलाना उचित नहीं है अतः किसानों को फसल अवशेष प्रबन्धन के इस विकल्प पर अमल करने की जरूरत नहीं है। संरक्षण कृषि प्रणाली का अंगीकरण व फसल विविधीकरण द्वारा अवशेष जलाने की समस्या से निजात मिल सकता है।

3. अवशेषों को मिट्टी में मिश्रित करना

- फसल की कटाई के उपरांत रोटावेटर से जुताई कर एक पानी लगा देने से फसल अवशेष मिट्टी में मिल जाते हैं फिर बाद में अगली फसल की बिजाई या रोपाई आसानी से की जा सकती है।
- धान व गेहूँ के अवशेषों की जुताई कर पानी लगा देने से प्रबन्धन सम्भव है। साथ ही 20-35 कि.ग्रा. यूरियाध् हे. की दर से डाल देने से अवशेषों के विगलन की प्रक्रिया तीव्र हो जाती है।बायोचार, कार्बनीकृत धान के अवशेषों द्वारा मृदा का बायोचार करने से मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ने के साथ-साथ उत्पादन दक्षता भी बढ़ जाती है।
- खेतों में ही रासायनिक विधियों द्वारा कम्पोस्ट बनाने की तकनीकें विकसित कर किसानों को मुहैया कराई जाए।

4. अवशेष के भूमि के सतह पर रखना

- गेहूँ की कटाई के बाद खड़े फानो में जीरो टिलेज मशीन या टबों हैप्पी सीडर से मूँग या ढैंटा की बुआई कर फसल अवशेष प्रबन्धन सम्भव है।
- धान की कटाई के बाद गेहूँ की जीरो टिलेज तकनीक से बुआई द्वारा प्रभावी ढंग से फसल अवशेष प्रबन्धन किया जा सकता है।
- गन्ने की कटाई के बाद रोटरी डिस्क ड्रिल से गेहूँ की बीजाई को बड़े पैमाने पर प्रचलित कर गन्ना फसल में प्रभावी अवशेष प्रबन्धन किया जा सकता है।
- खड़ी कपास की फसल में गेहूँ की रीले क्रापिंग तथा खड़ी गेहूँ का फसल में मूँग की रीले क्रापिंग द्वारा फसल अवशेष का प्रभावी प्रबन्धन किया जा सकता है। यह विधि अवशेषों को जलाने की प्रथा को रोकने में सहायक होगी।
- अवशेषों से पलवारध् मल्च को खेती में प्रयोग कर विभिन्न फसलों में खरपतवार के प्रकोप को भी कम किया जा सकता है साथ ही मृदा के सेहत में सुधार किया जा सकता है।
- फसल अवशेषों को सतह पर रखने से कम पानी की आवश्यकता होती है।
- मृदा में पानी के प्रवेश की क्षमता में सुधार होता है।
- मृदा के अपरदन में कमी।
- तापमान का अनुकूलन अर्थात गर्मी में तापमान को कम रखता है तथा सर्दी में तापमान को बढ़ाता है।
- फसल के कैनोपी को ठंडा रखता है जिसकी वजह से अस्तस्थ ताप का प्रभाव नहीं पड़ता है।
- संरक्षण कृषि के लिए एक तिहाई फसल अवशेषों का मृदा के सतह पर रखना एक अनिवार्य आवश्यकता है।

फसल अवशेष प्रबन्धन परियोजना (इन सीटू) हेतु उन्नत कृषि यन्त्र मशीनरी

- सुपर एस.एम.एस या स्ट्रा चोपर से फसल अवशेषों को बारीक टुकड़ों में काटकर भूमि पर फैलाएँ। तत्पश्चात हैप्पी सीडर द्वारा गेहूँ की सीधी बिजाई करें।
- फसल अवशेषों को मल्चर द्वारा मिट्टी में मिलाएँ। उल्टा हल द्वारा फसल अवशेषों को मिट्टी में दबाएँ।
- स्ट्रा चोपर, हे-रैक, स्ट्रा बेलर का प्रयोग करके फसल अवशेष की गाठें बनाएँ और आमदनी बढ़ाएँ।
- जीरो ड्रिल, रोटोवेटर, रीपर-बाईन्डर व स्थानीय उपयोगी व सस्ते यन्त्रों को भी फसल अवशेष प्रबन्धन हेतु अपनाएं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

गन्ने कचरे से जैविक खाद

दीपाली सिंह शोध छात्र (सस्य विज्ञान)
उमेश पटले (अतिथि व्याख्याता) सस्य विज्ञान, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट सतना (म.प्र.)

देश के 18 राज्यों में गन्ने की खेती प्रमुखता के साथ की जाती है। फिलहाल देश की 44 लाख हैक्टर कृषि भूमि में प्रति वर्ष 3000 लाख मैट्रिक टन गन्ने का उत्पादन होता है। इसका उपयोग चीनी मिलों और शराब मिलों में किया जाता है लेकिन उन मिलों द्वारा इसका पूरी तरह से उपभोग नहीं किया जा सकता क्योंकि उन मिलों में उपयोग के बाद लगभग 30% गूदेदार रेशेदार अवशेष उत्पन्न होता है। इन अवशेषों को खोई कहा जाता है, अनुमानतः 900 लाख टन गन्ने की खोई की उपलब्धता बनी रहती है। खोई का उपयोग कागज उद्योग सहित विभिन्न अनुप्रयोगों में, फीडस्टॉक के रूप में, जैव ईंधन आदि के रूप में किया जाता है। गन्ने की खोई एक लिंगो सेल्यूलोसिक पदार्थ है। यह सामान्यतः एक प्रकार का अपशिष्ट होता है, जिसके कुछ विशेष उपयोग हो सकते हैं। इसमें काफी उचित मात्रा में सेल्युलोज होता है, इस सेल्यूलोज को निकाला जा सकता है, और उस सेल्युलोज के विभिन्न अनुप्रयोग हो सकते हैं। रेशेदार सामग्रियों का उपयोग कपड़ा और सिविल इंजीनियरिंग क्षेत्र में फाइबर के रूप में भी किया जा सकता है, शेष जैविक खाद बनाने में इस्तेमाल किया जा सकता है।

रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है, लेकिन इन उर्वरको के अविवेकपूर्ण इस्तेमाल से हमारी कृषि भूमि पर बुरा असर भी पड रहा है। मिट्टी बीमार हो रही है। उसकी सेहत को ठीक करने के लिए यह जरूरी है कि जैविक खादों के प्रयोग पर अब पूरा जोर दिया जाए। जडों से फूगल तक काम आने वाले गन्ने का कचरा भी इस मामले में बहुत उपयोगी साबित हुआ है। गन्ने की खोई अर्थात् बगास तथा गन्नें की मैली अर्थात् प्रेस-मड का इस्तेमाल जैव उर्वरक बनाने में किया जा रहा है। गन्ने के रस से गुड या चीनी बनाने के बाद जो अपशिष्ट बचता है, वह अभी तक ईंधन के रूप में काम आता था लेकिन अब उसका उपयोग जैविक खाद बनाने में किया जा रहा है।

रस के मैल में भी खाद

इसी प्रकार कोल्हू क्रेशर्स और चीनी मिलों में गन्ने के पके हुए रस को छानने के बाद जो मैली बचती है यदि उसे वैज्ञानिक तरीके से विघटित करके खाद के रूप में प्रयोग किया जाए तो मिट्टी की उपजाऊ शक्ति बढती है। साथ ही भू-प्रदूषण में भी कमी आती है। अभी तक मैली के विघटन का यह काम बहुत देर तक हुआ करता था जिसमें काफी वक्त लगता था। उत्तर प्रदेश गन्ना शोध परिषद, शाहजहांपुर के वैज्ञानिकों ने इसका भी तोड़ निकाल दिया है। उन्होंने एक खास किस्म का कल्चर विकसित किया है जिसकी मदद से सिर्फ 90-120 दिनों में ही गन्ने की मैली को विघटित करके बढ़िया खाद की मैली में बदला जा सकता है।

कचरे से जैविक खाद

कचरे से जैविक खाद बनाने के लिये एक गड्ढा तैयार किया जाता है, इसके लिये पहले 1 मीटर गहरा, 2 मीटर चौडा और करीब 10-12 मीटर लम्बा गड्ढा खोदकर लम्बाई में 30 सेन्टीमीटर जगह हवा के लिए छोड दें। उसमें कूडे करकट की 15 सें.मी. मोटी तरह लगाएं, फिर 500 लीटर, पानी में 100 कि.ग्रा. गोबर तथा 1 कि. ग्रा. जीवाणु कल्चर घोल कर उसे प्रति टन गन्ने की मैली के हिसाब से छिडक दें। इसके बाद 15 से.मी. मोटी मैली की तरह लगायें। उसके ऊपर 8 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट प्रति टन की दर से बिखेरें। जब गड्ढा भर जाए तो गोबर, मिट्टी मैली को मिलाकर उसे ढक दें। 15-15 दिन के अंतर पर दो बार और फिर माह के बाद तीसरी बार पलटें। 2-3 माह में बढ़िया कम्पोस्ट खाद तैयार हो जाती है।

केंचुआ पालन में उपयोगी मैली

गन्ने की मैली से वर्मी कम्पोस्ट भी तैयार की जा सकती है। इसके लिए गड्ढा ऊपर बताये गये तरीके की तरह खोदा जाता है। कूडे की तह लगाकर 50 दिन बाद केंचुआ से मैली विघटित कराई जाती है। गड्ढे के ऊपर टीनशेड तथा नीचे पक्का प्लेटफार्म बनाया जाता है। प्रति टन 1 कि.ग्रा. की दर से केंचुए उस अधसड़े ढेर में छोड़ दिए जाते हैं। इसमें नमी को 60% तथा तापक्रम को 30 सेल्सियस रखना चाहिए। केंचुएँ 145 दिनों में खाद को तैयार कर देते हैं। वर्मी कम्पोस्ट जब तैयार हो जाए छानकर केंचुएँ अलग कर लिए जाते है ताकि उन्हें पुनः प्रयोग किया जा सके। इस प्रकार से गन्ने के अपशिष्ट पदार्थो से बढिया गुणवत्ता की जैविका खाद तैयार की जा सकती है। उत्तर प्रदेश के प्रगतिशील गन्ना उत्पादक तथा बौनी मिलें बड़े पैमाने पर यह खाद बनाकर उपयोग कर रहे है।

गन्ने के उत्पाद

गन्ने की खेती हमारे देश में सदियों से की जाती रही है। अनेक प्राचीन ग्रन्थों में इक्षु शर्करा का उल्लेख मिलता है। मुगलों के जमाने में भारत में बनी सफेद्र शक्कर दूसरे देशों में भेजी जाती थी। इसलिए गन्ने की खेती लगातार बढती ही गई और यह बढत आज तक जारी है। मिश्री, गुड, राब, शक्कर, चीनी और अब तक की लम्बी श्रृंखला में गन्ने के इन मुख्य उत्पादों के अतिरिक्त अब हमारे देश में अनेक सह उत्पाद बनाए जाने लगे हैं। इससे गन्ना उत्पादकों उद्योग जगत को भी लाभ हुआ है साथ ही इससे रोजगार के अवसर भी बढ़े हैं।

गन्ने का अगोला यानि ऊपरी हरी पत्तियाँ पशु-चारे में, सुखाकर खाद तथा छप्पर बनाने में काम आती है। गन्ने के रस से गुड चीनी, राब और खंडसारी बनती है। अवशेष से मीथेन, प्रोड्यूसर गैस, बिजली तथा कोयले की टिकली, लुग्दी, कागज, गत्ता परफ्यूराल अल्फा सेल्यूलोज, जिलीटाल प्लास्टिक, मुर्गी बिछावन, पशु आहार बनता है। इसी प्रकार छनित मैली अर्थात् प्रेसमड से खाद, तथा मोम बनाया जाता है। चीनी उद्योग में गन्ने का एक सह उत्पादन शीरा अर्थात् मोलेसिस भी प्राप्त होता है। इससे, इथनाल, अल्कोहल, स्पिट, सिरका, एसिड एसीटोन, ब्यूटेनाल, ग्लिसरीन, यीस्ट, खमीर, ग्लाइकोल, मोनोसीडियम ग्लमआमेंट डेक्सट्रानर्जेथम लाइसीन, जेथन गोंद तथा इटोकोनिक अम्ल प्राप्त होता है। इस प्रकार से गन्ना एक बहुउपयोगी फसल साबित हुआ है।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

कृषि में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकियों की भूमिका

निकिता सिंह चौहान शोध छात्रा, कृषि प्रसार विभाग, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना (म.प्र.)

देवांशु दीक्षित शोध छात्र, कृषि प्रसार विभाग, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट, सतना (म.प्र.)

जब आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी के बारे में बात की जाती है , तो किसानों के लिए निर्णय समर्थन प्रणाली के रूप में आईसीटी की भूमिका को स्वीकार करना होगा। आईसीटी की सहायता से, किसान सभी नवीनतम सूचनाओं से अपडेट रहने में सक्षम हैं। इसमें मौसम, कृषि और फसल की गुणवत्ता और उत्पादन बढ़ाने के नए और अधिक उन्नत तरीकों के बारे में डेटा शामिल है।

आईसीटी ने आधुनिक दुनिया में लोगों, सरकारों और व्यवसायों, बड़े और छोटे दोनों के कामकाज के तरीके में बड़े पैमाने पर क्रांति ला दी है। वैश्विक आबादी के लगभग 60% लोगों के पास इंटरनेट तक पहुंच है, और मोबाइल इंटरनेट अब दुनिया भर में इंटरनेट एक्सेस के लिए सबसे व्यापक रूप से उपयोग किया जाने वाला चैनल है। आईसीटी को जबरदस्त तरीके से अपनाने से बेहतर संचार की सुविधा संभव हो गई है और उन लोगों तक सेवाओं और सूचनाओं की डिलीवरी सुनिश्चित करना संभव हो गया है, जिनके पास पहले पहुंच की कमी थी। नई, उन्नत कृषि प्रौद्योगिकियों के आगमन ने वैश्विक कृषि क्षेत्र को आगे बढ़ने और उत्पादकों द्वारा कृषि वस्तुओं की खेती, कटाई और वितरण के तरीके को बदलने की अनुमति दी है। भारतीय कृषि या ई-कृषि में प्रौद्योगिकी के उपयोग ने मौजूदा सूचना और संचार प्रक्रियाओं को बेहतर बनाने के लिए नवीन तरीकों को अपनाकर कृषि और ग्रामीण विकास को गति दी है। इसने विशेष रूप से कई कृषि अर्थव्यवस्थाओं में छोटी जोत वाली कृषि में क्रांति ला दी है और कृषि के पारंपरिक स्वरूप से जुड़ी कई चुनौतियों का समाधान करने में मदद की है।

कृषि में आईसीटी की भूमिका

निर्णय समर्थन प्रणाली: किसानों के लिए निर्णय समर्थन प्रणाली के रूप में आईसीटी की बड़ी भूमिका है। आईसीटी के माध्यम से, किसानों को कृषि, मौसम, फसलों की नई किस्मों और उत्पादन बढ़ाने और गुणवत्ता नियंत्रण के नए तरीकों के बारे में नवीनतम जानकारी से अपडेट किया जा सकता है। कृषि-जलवायु क्षेत्र, खेत के आकार और मिट्टी के प्रकार आदि से संबंधित पर्याप्त, कुशल और अनुरूप प्रौद्योगिकियों का किसानों तक प्रसार भारतीय कृषि में कम है और यह भारत में नीति निर्माताओं के सामने वास्तविक चुनौती है। सूचना और संचार प्रौद्योगिकियाँ किसानों तक सटीक और प्रामाणिक जानकारी सही समय पर प्रसारित कर सकती हैं ताकि वे इसका उपयोग कर सकें और लाभ प्राप्त कर सकें। आईटीसी के माध्यम से निर्णय समर्थन प्रणाली किसानों को बेहतर परिणाम प्राप्त करने के लिए फसलों के प्रकार की योजना बनाने, खेती, कटाई, कटाई के बाद और अपनी उपज के विपणन के लिए अच्छी कृषि पद्धतियों का अभ्यास करने की सुविधा प्रदान करती है। कृषि में विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों, भूमि जोत के आकार, खेती की जाने वाली फसलों के प्रकार, अपनाई गई प्रौद्योगिकी, बाजार अभिविन्यास, मौसम की स्थिति आदि के आधार पर विविध जानकारी की आवश्यकता होती है। जैसा कि कई शोधकर्ताओं ने बताया है, 'प्रश्न और उत्तर सेवा' को 'प्रश्न और उत्तर सेवा' के रूप में माना जाता था। अधिकांश किसानों के लिए उनकी विशिष्ट कृषि समस्याओं का वैयक्तिकृत समाधान प्राप्त करने की सर्वोत्तम सुविधा।

बाज़ार पहुंच का विस्तार करें: भारतीय कृषि में एक बड़ी कमी कृषि उपज के विपणन के लिए जटिल वितरण चैनल है। किसानों को वस्तुओं की अद्यतन कीमतों, उनके इनपुट बेचने के लिए उचित स्थान और उपभोक्ता रुझानों से भी परिचित नहीं किया जाता है। आईसीटी में अधिकतम लाभ हेतु किसानों के विपणन क्षितिज को सीधे ग्राहकों या अन्य उपयुक्त उपयोगकर्ताओं तक विस्तारित करने की काफी क्षमता है। किसान कई उपयोगकर्ताओं से सीधे जुड़ सकते हैं और अपनी वस्तुओं की मौजूदा कीमतों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। उन्हें घर बैठे ही बाजार तक पहुंच मिल जाएगी। इसके अलावा, इससे मध्य लाभ में भी कमी आएगी जो किसानों के लिए फायदेमंद होगा। इससे किसान के राजस्व के स्रोत में सुधार हो सकता है; किसानों को उचित भविष्य की फसलों और वस्तुओं और उनकी उपज बेचने के साथ-साथ इनपुट प्राप्त करने के लिए विपणन चैनलों के बारे में अच्छे निर्णय लेने के लिए सशक्त बनाना।

कृषक समुदाय को मजबूत और सशक्त बनाना: आईसीटी प्रौद्योगिकियां विभिन्न संस्थानों, गैर सरकारी संगठनों और निजी क्षेत्रों के साथ व्यापक नेटवर्किंग और सहयोग के माध्यम से कृषक समुदायों को मजबूत करने में मदद कर सकती हैं। इसके अलावा, किसान अद्यतन जानकारी और वैज्ञानिक, कृषि और व्यापार समुदाय के व्यापक संपर्क के माध्यम से अपनी क्षमताओं को बढ़ा सकते हैं।

भारत में कृषि के लिए आईसीटी पहल: पूरी दुनिया की लगभग 45% आईसीटी परियोजनाएं भारत में लागू की गई हैं और सबसे अधिक सूचना कियोस्क ग्रामीण भारत में कार्यरत हैं। फिर भी, यह पाया गया कि कृषि में अधिकांश आईसीटी परियोजनाओं को दक्षिण और उत्तर भारत के सामाजिक-आर्थिक रूप से विकसित राज्यों में क्रियान्वित किया गया था, जबकि वंचित राज्य आईसीटी पहल से लाभान्वित नहीं हुए हैं। भारत में कुछ ई-कृषि पहल नीचे दर्शाई गई हैं।

एग्रीसनेट: यह किसानों के लिए प्रासंगिक जानकारी प्रसारित करने वाला एक व्यापक वेब पोर्टल है, जिसे भारत सरकार के कृषि मंत्रालय द्वारा शुरू और वित्त पोषित किया गया था। AGRISNET सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के उपयोग के माध्यम से सूचना का प्रसार और सेवाएं प्रदान करके कृषक समुदाय की सेवा करता है। इसके निम्नलिखित लक्ष्य हैं-• किसानों को आदानों की गुणवत्ता और उसकी उपलब्धता के बारे में जानकारी प्रदान करना • विभिन्न सरकारी योजनाओं की जानकारी प्रसारित करना और मिट्टी परीक्षण के बाद उर्वरकों की सिफारिश करना • कृषि में उत्पादकता बढ़ाने के लिए नवीनतम तकनीकों की जानकारी प्रदान करना

ई. चौपाल: ई. चौपाल भारत में एक समूह है जो (ICT) के माध्यम से संचालित होता है। जो किसानों को दलालो और बिचैलियों से बचाने के लिए उपयुक्त माध्यम है। कृषि संयत्र, मौसम, फसल जैसे- सोयाबिन, गेहूँ, धान, मक्का और दलहनी फसल जैसे कृषि उत्पादो की खरीद ब्रिकी इंटरनेंट के माध्यम से ग्रामीण किसानों को सीधे जोड़ा जाता एवं उससे संबधित सूचना दी जाती है। ई. चौपाल भारतीय कृषि से उत्पन्न चुनौतियों, कमजोर बुनियादी ढाचे और बिचैलियों की भागिदारी को कम करता है साथ ही साथ ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट का उपयोग एवं प्रशिक्षण के साथ कंप्यूटर स्थापित करता है जिससे किसान नवीन जानकारी से अप-टू-डेट रहते है। ई. चौपाल द्वारा किसान अपनी उपज ऑनलाइन मंडी के द्वारा उच्च लागत से बेचते है जिससे उनको शुद्ध मुनाफा मिलता है ICT द्वारा किसानों को उनके उत्पादों की गुणवता में सुधार करने में मदद करता है। ई. चैपाल सेवा शुरू होने के बाद से किसानों के उत्पादन की गुणवता तथा पैदावार में वृद्धि सुधार की वजह से उनके आय के स्तर में वृद्धि, और लेन देन में गिरावट आयी है।

eSagu: eSagu प्रणाली 2004 में विकसित की गई थी। eSagu किसानों की समस्याओं का अनुकूलित समाधान प्रदान करता है और उन्हें बुआई से लेकर कटाई तक सलाह देता है। किसान अपने खेत की स्थिति को डिजिटल फोटो और वीडियो के रूप में भेजते हैं, जिसका कृषि वैज्ञानिकों और विशेषज्ञों द्वारा विश्लेषण किया जाता है। इसके बाद वे किसानों को सही काम करने का सुझाव देते हैं, यहां तक कि छोटे और सीमांत किसानों को भी इससे फायदा मिल रहा है। विशेषज्ञ की सलाह संबंधित किसान को कम समय में बता दी जाती है। अशिक्षित किसानों के प्रश्नों को ग्राम स्तर पर शिक्षित समन्वयकों की मदद से निपटाया जाता है। कृषि विशेषज्ञों को खेत की स्थिति या समस्या बताई जाती है और वे किसानों तक सटीक जानकारी पहुंचाते हैं।

एगमार्कनेट: कृषि विपणन सूचना नेटवर्क (AGMARKNET) की शुरुआत मार्च, 2000 में कृषि मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा किसानों को उनकी उपज बेचने के संबंध में निर्णय लेने की क्षमता को सशक्त बनाने के उद्देश्य से की गई थी। यह पोर्टल बाजार में कृषि वस्तुओं की आमद और उनकी कीमतों के बारे में उत्पादकों, उपभोक्ताओं, व्यापारियों और नीति निर्माताओं को पारदर्शी और शीघ्रता से प्रसारण के माध्यम से कृषि विपणन प्रणाली को गति देने के लिए विकसित किया गया था।

किसान क्रेडिट कार्ड: यह योजना भारत सरकार, रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) द्वारा शुरू किया गया कार्यक्रम है, जो ICT माध्यम से संचारित होती है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य किसानों को समय पर ऋण उपलब्ध कराना है। वैसे किसान जिन्हें बार बार ऋण के लिए बैंको के पास जाना पड़ता था और बार- बार बैंकिग प्रक्रिया द्वारा गुजरना पड़ता था जिससे किसानो को जरूरत के समय ऋण नहीं मिल पाता था। अतः किसान क्रेडिट कार्ड द्वारा ऋण किसानों को समय से मिल जाता है और खेती में नुकसान होने पर रकम अदायगी हेतु अवधि में असानी से परिवर्तन किया जा सकता है। जिससे किसानों को अधिक परेशानी भी नहीं होती है एवं अतिरिक्त बोझ भी नही पड़ता है। अतः आज के समय में किसान अपनी कृषि एवं उससे संबधित जानकारी सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से प्राप्त कर अच्छी उपज के साथ साथ लाभ युक्त होकर खुशहाल है।

निष्कर्ष: अकेले शोध गरीबी से लाखों लोगों को नहीं उठा सकता है जब तक कि नीतियों, प्रौद्योगिकियों और बाजार के अवसरों का सही मिश्रण न हो। परन्तु उचित समय पर सही जानकारी दे कर किसानो का मार्गदर्शन किया जाये तो निश्चित ही कृषि सम्बंधित परेशानिया कम हो सकती है वैज्ञानिक समय समय पर उन्नत बीजो व कृषि यंत्रो का निर्माण करते है किसानो को उनकी पहुंच तक पहुंचने क लिए संचार माध्यम एक पूल का कार्य करता है कृषि जगत में किया गया शोधों के उचित परिणाम लेने के लिए सूचना और संचार माध्यमो का बहुत बड़ा योगदान है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

बायोडीजल क्या है एवं इसके बढ़ते उपयोग

देवांशु दीक्षित शोध छात्र, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना (म.प्र.)

निकिता सिंह चौहान शोध छात्रा, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना (म.प्र.)

Biodiesel, सीधे वनस्पति तेल, पशुओं के वसा, तेल और खाना पकाने के अपशिष्ट तेल से उत्पादित किया जा सकता है. इन तेलों को बायोडीजल में परिवर्तित करने के लिए प्रयुक्त प्रक्रिया को ट्रान्स-इस्टरीकरण कहा जाता है. अतः बायोडीजल पारंपरिक या 'जीवाश्म' डीजल के स्थान पर एक वैकल्पिक ईंधन है. शहरों में बढ़ते वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बायोडीजल का प्रयोग बढ़ाना बहुत जरूरी कदम है

बायोडीजल जैविक स्रोतों से प्राप्त डीजल के जैसा ही गैर-परम्परागत ईंधन है. बायोडीजल नवीनीकरणीय ऊर्जा स्रोतों से बनाया जाता है. यह परम्परागत ईंधनों का एक स्वच्छ विकल्प है. बायोडीजल में कम मात्रा में पट्रोलियम पदार्थ को मिलाया जाता है और विभिन्न प्रकार की गाडियों में प्रयोग किया जा सकता है. बायोडीजल विषैला नही होने के साथ साथ बायोडिग्रेडेबल भी है. इसको भविष्य का इंधन माना जा रहा है.

भारत का पहला बायोडीजल संयंत्र आस्ट्रेलिया के सहयोग से काकीनाड़ा सेज (KSEZ) में स्थापित किया गया है. बायोडीजल की सहायता से डीजल वाहनों को चलाने के लिए उनमे किसी प्रकार का तकनीकी परिवर्तन भी नही करना पड़ता है. बायोडीजल प्रयोग में सबसे आसान इंधनों में से एक है और सबसे अच्छी बात यह है कि यह खेती में काम आने वाले उपकरणों को चलाने के लिये सबसे उपयुक्त है.

आज के दौर में सभी नीति निर्माता और कम्पनियां अब ईंधन के गैर परंपरागत स्रोतों जैसे बायोडीजल, हाइड्रोजन गैस चालित वाहनों, इलेक्ट्रिक कार आदि पर पूरा ध्यान दे रहीं हैं. अभी हाल ही में ब्रिटेन सरकार ने घोषणा की है कि वह अपने देश में 2020 से सिर्फ बिजली चलित कारों और दुपहिया वाहनों के लिए ही लाइसेंस जारी करेगी. इसलिए यह कहना गलत नही होगा कि आगे आने वाला कल बायोडीजल और इलेक्ट्रिक से चलने वाले वाहनों का ही होगा क्योंकि ये दोनों स्रोत परम्परागत ईंधनों की तरह प्रदूषण करने वाला धुंआ पैदा नही करते हैं.

डीजल और बायोडीजल में क्या अंतर है

डीजल और बायोडीजल दो कार्बन-आधारित जैविक उत्पाद हैं, जिन्हें विभिन्न स्रोतों से निकाला जाता है। पूर्व पेट्रोलियम/कच्चे तेल की क्रैकिंग प्रक्रिया से उत्पन्न होता है, जबकि बाद वाले को पशु वसा और पौधों के तेल से निकाला जाता है। डीजल, हालांकि इन दिनों उच्च-ऑक्टेन पेट्रोल के रूप में आम नहीं है, यह उच्च-ऊर्जा वाले डीजल-इंजन वाहनों के लिए अधिक अनुकूल है क्योंकि इसकी उच्च ऊर्जा घनत्व है। बायोडीजल, वनस्पति तेलों और पशु वसा से प्राप्त निष्कर्षण उत्पाद होने के नाते, जबकि पृथ्वी की पपड़ी में मौजूद तेजी से घटते गैर-नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों से डीजल, दोनों उपलब्धता के संदर्भ में सीमित हैं; वर्तमान समय में बायोडीजल अपने समकक्ष से अधिक अनुपलब्ध है। दोनों में सबसे बड़ा अंतर बस इतना है कि डीजल ऊर्जा का घटिया, गैर-स्रोत है, जबकि बायो-डीजल इसके बिल्कुल विपरीत है।

बायोडीजल का मिश्रण

बायोडीजल और पारंपरिक हाइड्रोकार्बन-आधारित डीजल के मिश्रण को खुदरा डीजल ईंधन बाजार में उपयोग के लिए सबसे अधिक वितरित किया जाता है। दुनिया के अधिकांश लोग किसी भी ईंधन मिश्रण में बायोडीजल की मात्रा बताने के लिए "बी" कारक नामक प्रणाली का उपयोग करते हैं-

- 100% बायोडीजल को B100 कहा जाता है
- 20% बायोडीजल, 80% पेट्रोडीजल को बी20 लेबल किया गया है [5]
- 10% बायोडीजल, 90% पेट्रोडीजल को B10 लेबल किया गया है
- 7% बायोडीजल, 93% पेट्रोडीजल को B7 लेबल किया गया है
- 5% बायोडीजल, 95% पेट्रोडीजल को B5 लेबल किया गया है
- 2% बायोडीजल, 98% पेट्रोडीजल को B2 लेबल किया गया है

20% बायोडीजल और उससे कम के मिश्रण का उपयोग डीजल उपकरणों में बिना या केवल मामूली संशोधन के किया जा सकता है, हालांकि कुछ निर्माता इन मिश्रणों से उपकरण क्षतिग्रस्त होने पर वारंटी कवरेज का विस्तार नहीं करते हैं। B6 से B20 मिश्रण ASTM D7467 विनिर्देश द्वारा कवर किए गए हैं। बायोडीजल का उपयोग इसके शुद्ध रूप (बी100) में भी किया जा सकता है, लेकिन रखरखाव और प्रदर्शन समस्याओं से बचने के लिए कुछ इंजन संशोधनों की आवश्यकता हो सकती है।

बायोडीजल की महत्वपूर्ण विशेषताएं

1) बायोडिग्रेडेबल और नवीकरणीय ईंधन।

2) जीवाश्म डीजल ईंधन की तुलना में उपयोग में सुरक्षित और कम विषाक्तता है।

3) सामान्य डीजल ईंधन की तुलना में कम निकास उत्सर्जन दर।

4) एएसटीएम डी 6751 गुणवत्ता मापदंडों के अनुसार, डीजल की गुणवत्ता का विश्लेषण किया जाता है।

5) बायोडीजल का उपयोग करने के लिए किसी भी डीजल इंजन संशोधन की आवश्यकता नहीं होती है।

बायोडीजल के निम्नलिखित लाभ हैं:

1. बायोडीजल और बायोडीजल मिश्रण का उपयोग लगभग सभी डीजल इंजनों और वाहनों में किया जाता है।
2. यह एक कार्बन-तटस्थ तरल है, जिसका अर्थ है कि बायोडीजल के दहन से कभी भी अन्य खनिज डीजल की तरह कार्बन डाइऑक्साइड के रूप में कार्बन का शुद्ध उत्पादन नहीं होता है।
3. 2007 में ब्रिटिश रॉयल ट्रेन ने 100% बायोडीजल ईंधन से अपनी ट्रेन चलाई।
4. हीटिंग ऑयल के रूप में उपयोग किया जाता है- कई वाणिज्यिक और घरेलू बॉयलरों में, बायोडीजल का उपयोग हीटिंग ईंधन के रूप में भी किया जाता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

नवजात बछड़े-बछड़ियों का पालन-पोषण एवं प्रबंधन

उदय नारायण (FC सृजन), अंगद पटेल (सृजन) बल्देवगढ़ (म.प्र.)

नवजात बछड़े-बछड़ियों में उचित पालन-पोषण न होने के कारण इनका शारीरिक विकास धीमा तथा कमजोर हो जाता है। बछड़े-बछड़ियां शारीरिक रूप से कमजोर होने पर ये अनेक प्रकार के रोग (दस्त, निमोनिया आदि) से ग्रसित हो जाते हैं। इससे इनकी मृत्युदर बढ़ जाती है। पशुपालकों को विभिन्न आधुनिक प्रबंधन की जानकारी होना आवश्यक है।

बछड़े-बछड़ियों पालने की विधियां

प्राकृतिक विधि: इस विधि में बछड़े-बछड़ियों को गाय/भैंस के साथ रख कर पल जाता है और गाय को दूध दुहने से पहले व दुहने के बाद, दोनों समय बछड़े को दूध पिलाया जाता है। परन्तु इस विधि मे नवजात बछड़े को उसकी आवशकतानुसार दूध नहीं मिल पता है। कभी दूध की मात्रा कम और कभी अधिक हो जाती है। दूध की मात्रा कम होने पर शारीरिक विकास धीमा हो जाता है और दूध की मात्रा अधिक होने पर दस्त की शिकायत हो जाती है जिससे शारीरिक विकास ठीक से नहीं हो पाता है और बछिड़ कमजोर रह जाता है।

कृतिम विधि

इस विधि मे नवजात बछड़े को जन्म के 24 से 48 घण्टे के अंदर गाय से अलग कर दिया जाता है। इस प्रक्रिया मे इनके शारीरिक वजन का 10% (25 kg शारीरिक भार पर 2.5 kg दूध) ही दूध बोतल के माध्यम से पिलाते है। इससे बछड़े को आवश्यकता अनुसार दूध मिलता है और गाय को वास्तविक दूध उत्पादन का पता चल जाता है।

जन्म के तुरंत बाद देख रेख

जन्म के तुरंत बाद बछड़े के नाक, मुंह और कान को साफ कर देना चाहिए। फिर तौलिए से पूरे शरीर को साफ करने के बाद गाय को चाटने दें जिससे बछड़े का रक्त संचार बढ़ता है और स्फूर्ति आती है। बछड़े के नाभिनाल को 2.5 से.मी. शरीर से छोड़कर काट देना चाहिए और 2 से 3 दिन तक टिंचर आयोडीन लगाना चाहिए। गाय के ब्याने के 48 घण्टे तक खीस निकलती है जो बछड़े को उसकी शारीरिक भाग का 1/10 भाग देना चाहिए। गाय के खीस के अंदर 17 प्रतिशत और भैंस के खीस मे 21% पाई जाने वाली ग्लोबिन प्रोटीन रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाती है और नबजात बछड़े की पेट की सफाई कर पाचकता को बढ़ाता है। इसके अलावा खीस में विटामिन (ए. बी. डी.) व खनिज पदार्थ (कैल्सियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस) आदि सभी तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते है।

प्रारंभिक उम्र में देखरेख

नवजात बछड़े को जन्म के 3 से 10 के बीच मे सींग उत्पादन करने वाली कोशिका (कोरियम) को लोहे की रॉड

गरम करके या कास्टिक छड़ से सींग उगने वाले स्थान पर रगड़कर कोरियम कोशिका नष्ट कर देते है जिससे सींग नहीं उग पाते हैं जिससे आपस मे लड़ने का खतरा नहीं रहता है। पशुओ के कान मे पीला टैग लगाना चाहिए जिसमे पशु का आधार नंबर लिखा होता है। ये टैग पहचान करने के साथ-साथ उनका व्यवरा (टीके, व्यात, उम्र आदि) बताता है। यह 10 से 20 दिन की उम्र मे लगाना चाहिए।

बछड़े-बछड़ियों को दूध पिलाना

जन्म के कुछ समय तक बछड़े-बछड़ियों को खाना नहीं देना चाहिए। बछड़े -बछड़ियों को दूध पीना सिखाने के लिए अंगुली को दूध मे भिगोकर बछड़े के मुह मे डाले जिससे बछड़ा उसको चूसना शुरू कर देता है, फिर निप्पल को मुह के अंदर ले जाते है और उंगली निकाल लेते हैं। ऐसा करने पर बछड़ा दूध पीना शुरू कर देता है।

विटामिन्स की पूर्ति

जब बछड़े-बछड़ियों को पूर्ड दूध पिलाना बंद कर देते है तो विटामिन ए और डी की पूर्ति राशन से करनी पड़ती है। निटमिन ए और डी की पूर्ति के लिए मछली का तेल पिलाना चाहिए जो की विटामिन डी का अच्छा स्रोत है। इसके अलावा दना मिक्स्चर देना चाहिए।

आवास प्रबंधन

बछड़े-बछड़ियों को लिए खुला आवास हो जिसमे घूमने के लिए 25-30 वर्गफीट जगह होना चाहिए। इसके साथ-साथ आवास इस तरह से बना हो की सर्दियों मे धूप मिले और ठंडी हवाओं से बचाया जा सके। आवास मे नमी न हो चाहिए जिससे बछड़े-बछड़ियों मे होने वाली संक्रामक बीमारियों से बचाया जा सके। आवास मे लकड़ी के बुरादे व पुवाल का बिछावन होना चाहिए जिससे बछड़ा आराम से बैठ सके एवं स्वच्छ व ताजे पानी की व्यवस्था होनी चाहिए।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के फायदे

शहडोल। कृषि विज्ञान केंद्र शहडोल एवं किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग शहडोल के सन्युक्त तत्वाधान में ग्राम पलसऊ (खन्नौधी) में कृषक खेत भ्रमण किया गया। जिसमे फसलों में सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के फायदे बताए। केन्द्र के वैज्ञानिक डॉ. ब्रजकिषोर प्रजापति ने किसानो को बताया कि गर्मी के मौसम में धान की खेती करने का चलन लगातार बढ़ता जा रहा है। जल की बचत करने के बजाय गलत फसल चक्र अपनाकर अनावश्यक जल का दोहन कर रहे हैं। इससे भूमिगत जल स्तर घटता है। जो हमारे लिए खतरे की घंटी से कम नहीं है। एक किलो चावल पैदा करने में लगभग तीन से पांच हजार लीटर पानी की खपत होती है। वर्तमान में

हम कृषि के मूलभूत सिद्धांत 'फसल चक्र' को भूलते जा रहे हैं। जबकि गर्मी के मौसम में साग-सब्जी, मक्का, मूंग, उड़द जैसी फसलें ली जाती तो कम पानी में ही बेहतर खेती की जा सकती है। हमारे देश में 142 मिलियन हे0 कृषि योग्य भूमि है जिसमें से केवल 52 प्रतिशत भूमि में ही संस्थागत सिंचाई के साधन उपलब्ध है बाकी बची जमीन सिंचाई के लिए बरसात पर निर्भर है। यदि बारिश में बरसात कम आती है या असमय से आती हैं तो किसानों के लिए समस्या उत्पन्न हो जाती है। इन परिस्थितियों में किसानों को आर्थिक क्षति का सामना करना पड़ता है। हमारे देश में अधिकांशत: खेतों में सिंचाई के लिये कच्ची नालियों द्वारा पानी लाया जाता है, जिससे तकरीबन 30-40 फीसदी पानी रिसाव की वजह से बेकार चला जाता है। ऐसे में सूक्ष्म सिंचाई पद्धति का इस्तेमाल करने में फायदा-ही-फायदा है। इसके अतिरिक्त डॉ. प्रजापति ने कृषकों को बताया कि सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली सामान्य रूप से बागवानी फसलों में उर्वरक व पानी देने की सर्वोत्तम एवं आधुनिक विधि मानी जाती है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली में कम पानी से अधिक क्षेत्र की सिंचाई की जाती है। इससे पानी की बर्बादी को तो रोका ही जाता है, साथ ही यह जल उपयोग दक्षता बढ़ाने में भी सहायक है। इस प्रणाली से सिंचाई करने पर फसलों की गुणवत्ता और उत्पादकता में भी सुधार होता है। किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग से सहायक संचालक कृषि श्री रमेन्द्र सिंह ने किसानों को जानकारी दी गयी कि लगातार एक प्रकार की फसलों को उगाने से मृदा की उर्वरा शक्ति में गिरावट आ जाती है। इसके साथ ही कीड़े-मकोड़ों, रोगों और खरपतवारों का नियंत्रण भी एक गंभीर समस्या बन जाती है। फसल चक्र द्वारा विविधीकरण करके इन समस्याओं का निवारण किया जा सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

खीरावर्गीय फसलों में फल मक्खी, बैक्ट्रोसेरा कुकुर्बिटी (टेफ्रिटिडी: डिप्टेरा), का प्रबंधन

डॉ. द्वारका कीटशास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

निशा चढ़ार एम.एस.सी.(बॉटनी), सरकारी पीजी कॉलेज, टीकमगढ़ (म.प्र.)

पूरे भारत में सबसे आम और सबसे विनाशकारी कीट है। भारत में आम तौर पर पाई जाने वाली दो अन्य संबद्ध प्रजातियाँ *डैकस सिलियाटिस* और *बैक्ट्रोसेरा डॉर्सलिस* हैं। अधिकांश फल मक्खियों की तरह, यह फलों और फलों को महत्वपूर्ण मात्रा में नुकसान पहुंचा सकती है। संक्रमित फल विपणन योग्य नही रहते हैं। फल मक्खी का शरीर और पेट मुख्यतः नारंगी-भूरे रंग का होता है। यह लगभग 6-8 मिमी लंबा है। पंखों पर दो विशिष्ट धुएँ के रंग के भूरे रंग के धब्बे होते हैं (एक सिरे पर और एक पंख के पिछले हिस्से पर)।

अन्य पोषक

- खरबूजा, टमाटर, मिर्च, अमरूद, नींबू, नाशपाती, अंजीर, फूलगोभी, आदि।

क्षति के लक्षण

- इस कीट के कीड़ों द्वारा नुकसान पहुंचाने से फलों से भूरा, रालयुक्त तरल पदार्थ निकलने लगता है और फल विकृत एवं विकृत हो जाते हैं। कीड़े फलों के गूदे को खाते हैं और समय से पहले गिरने का कारण बनते हैं। द्वितीयक जीवाणु संक्रमण के कारण प्रभावित फल सड़ जाते हैं। मानसून की पहली बारिश के बाद, संक्रमण अक्सर 100 प्रतिशत तक पहुँच जाता है।

जीवन चक्र

- मैगट्स बिना पैरों के और बिना सिर वाले, गदे-सफेद, झुरझुरीले प्राणियों जैसे दिखाई देते हैं, जो एक सिरे पर मोटे होते हैं और दूसरे सिरे पर एक बिंदु की तरह पतले होते हैं। वयस्क मक्खियाँ लाल भूरे रंग की होती हैं और छाती पर नींबू-पीले निशान होते हैं। वयस्क मक्खियाँ सुबह के समय प्यूपा से निकलती हैं और शाम के समय संभोग करती हैं। मादा औसतन 14-54 दिनों में 58-95 अंडे देती है। अंडे की अवधि 1-9 दिन, लार्वा अवधि 3-21 दिन। यह मिट्टी में गहराई तक प्यूपा बनाता है। प्यूपा बैरल के आकार का, हल्का भूरा, प्यूपा अवधि 6-30 दिन का होता है। एक वर्ष में कई पीढ़ियाँ होती हैं।

बैक्ट्रोसेरा कुकुर्बिटी

कॉस्टल बैंड के साथ हाइलाइन पंख चौड़े और उभरे हुए, गुदा धारियां अच्छी तरह से विकसित और पीछे की क्रॉस नसें शीर्ष पर भूरे और भूरे रंग के धब्बों के साथ घनी सीमा पर होती हैं।

बैक्ट्रोसेरा सिलियाटस

बैक्ट्रोसेरा कुकुर्बिटी से छोटा, लौहयुक्त भूरा शरीर, तीसरे टर्गाइट के दोनों ओर प्रमुख गहरे भूरे रंग का अंडाकार धब्बा होता हैं।

बैक्ट्रोसेरा जोनाटा

शरीर पीलापन लिए हुए है, तीसरे टर्गाइट पर हल्के पीले रंग की पट्टी है और पंख 10-12 मिमी तक फैला हुआ है, कॉस्टल बैंड और एनल बैंड अधूरा होता है।

प्रबंधन

- संक्रमित फलों और सूखे पत्तों को इकट्ठा करके गहरे गड्ढों में डालकर नष्ट कर दें।
- स्थानिक क्षेत्रों में, बुआई की तारीखें बदल दें क्योंकि मक्खी की आबादी गर्म शुष्क परिस्थितियों में कम होती है और बरसात के मौसम में अपने चरम पर होती है।
- प्यूपा को मारने के लिए फसल के बाद बार-बार बेल के नीचे की मिट्टी को हिलाएं या प्रभावित खेत की जुताई करें।
- पसली वाली लौकी को जाल वाली फसल के रूप में उपयोग करें और पत्तियों की निचली सतह पर वयस्क मक्खियों के एकत्र होने पर 500 लीटर पानी में इमामेक्टिन बेन्जोएट 1.0 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर डालें।
- मक्खियों को फँसाने के लिए सिट्रोनेला तेल, नीलगिरी तेल, सिरका (एसिटिक एसिड), डेक्सट्रोज और लैक्टिक एसिड जैसे आकर्षक पदार्थों का उपयोग करें।
- प्रति हेक्टेयर 50 लीटर पानी में 50 मिलीलीटर फिफरोनिल 50 ईसी. 0.5 किलोग्राम गुड़/चीनी मिलाकर चारा स्प्रे लगाएं। साप्ताहिक अंतराल पर दोहराया गया चारे को खेत के विभिन्न कोनों पर रखे मिट्टी के ढक्कनों में रखें।
- जाल फसल के रूप में उगाए गए मक्के के पौधों पर चारे का छिड़काव करें।
- 5 ग्राम गीला मछली का भोजन छह छेद (3 मिमी व्यास) वाले पॉलिथीन बैग (20 म 15 सेमी) में रखें।
- मक्खी जाल का उपयोग करें: 5 ग्राम गीला मछली का भोजन छह छेद (3 मिमी व्यास) वाले प्लास्टिक कंटेनर में रखें, बैग के नीचे से दो सेमी। कॉटन प्लग में फिफरोनिल की एक बूंद (0.1 मिली) डालें और इसे बैग के अंदर रखें। फिफरोनिल को हर हफ्ते डाला जाना चाहिए और मछली वाले भोजन को 20 दिनों में एक बार नवीनीकृत किया जाना चाहिए (20 जाल/एकड़)।
- मिथाइल यूजेनॉल भिगोए हुए प्लाईवुड टुकड़े (2'' म 2'') वाले फ्लाई ट्रैप का उपयोग करें। मक्खियों को इकट्ठा करें और नष्ट करें.
- प्यूपल पैरासिटॉइड्स जैसे ओपियस फ्लेचरी, ओपियस कॉम्पेनसैटस और ओपियस इनसिसस (ब्रैकोनिडी), स्पैलैंगिया फिलीपिनेंसिस, डिरहिनस लोजोनेंसिस और पचीसेपॉइडियस डेब्रियस, डिरहिनस गिफार्डी का संरक्षण करें।

सावधानी

- खीरे में अत्यधिक फाइटोटॉक्सिक, कॉपर ऑक्सीक्लोराइड, बोर्डो मिश्रण और सल्फर डस्ट का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

गायों और भैंसों में पैपिलोमा या मस्सों के लक्षण, कारण एवं इलाज

डॉ.ज्योति डागर, डॉ. पंकज कुमार उमर, डॉ. आर के शर्मा
डॉ. सचिन जैन, डॉ. विधि गौतम
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

ये बीमारी अक्सर गाय और भैसों के थानों, गरदन, आखो की पलको के किनारे और बाहरी त्वचा की सतह पर सख्त मस्से की तरह नजर आती है। इस रोग का मुख्य कारण है एक जीवाणु, जिसका नाम है बोवाइन पैपिलोमा वायरस

बोवाइन पैपिलोमा का इलाज

इसका इलाज 3 तरीको से किया जा सकता है।

1.एन्थिओमलिन का इंजेक्शन I/M इंट्रामस्क्युलर 15 द्वद्य एक बार 48 घंटे के अंतराल पर 4 हफ्तों तक, इस एन्थिओमलिन इंजेक्शन के हर 1 ml डोज़ में 60 मिली ग्राम लिथियम एंटीमनी थियोमलिएट (Lithium Antimony Thiomaliate) होना चाहिए। मतलब की 15 ml यानि एक दिन की डोज़ में कुल 900 मिली ग्राम लिथियम एंटीमनी थियोमलिएट (Lithium Antimony Thiomaliate) होना चाहिए।

2.थूजा (THUJA) मरहम का उपयोग, दिन में 3 बार 4 सप्ताह तक और साथ में थूजा-30 (THUJA-30) होम्योपैथिक दवा का इस्तेमाल 15 बूँद मुँह से दिन में 3 बार 4 सप्ताह तक देने से काफी लाभ मिलता है

3.स्वरक्त चिकित्सा/ ऑटोहीमोथेरपी के माध्यम से बहुत अच्छे परिणाम मिलते हैं। इस चिकित्सा में पशु के स्वयं के रक्त का उपयोग करते हैं। इस थेरेपी के तहत पशु के जुगलर वेन से 20 ml रक्त 18 गेज हाइपोडर्मिक सुई से निकला जाता है और निकाले हुए रक्त को पशु को 10-10 मिली लीटर गर्दन के दोनों तरफ I/M इंट्रामस्क्युलर इंजेक्शन द्वारा लगा दिया जाता है। इस प्रक्रिया को हफ्ते में एक बार, 4 हफ्तो तक करना है। इस प्रक्रिया के सबसे अच्छे परिणाम देखने को मिले हैं।

प्राकृतिक संसाधनों का करें सुव्यवस्थित उपयोग

जबलपुर। जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर में कृषि अनुसंधान भवन नई दिल्ली, डीडीजी, नेचुरल रिसोर्स मैनेजमेंट (एनआरएम) डॉ. एस. के. चौधरी एवं आईआईएफएसआर, मेरठ डॉ.सुनील तिवारी का आगमन हुआ। इस दौरान डीडीजी डॉ. चौधरी एवं डॉ. तिवारी द्वारा माइक्रोब रिसर्च एण्ड प्रोडक्शन सेंटर, आईएफएस यूनिट, डेयरी, मेडिशनल गार्डन एवं बीज संग्राहालय का निरीक्षण किया गया और यहां के वैज्ञानिकों को उचित दिशा-निर्देश दिये गये। गौरतलब है कि जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर के कुलगुरू डॉ. प्रमोद कुमार मिश्रा की प्रेरणा एवं मार्गदर्शन में सतत् रूप से शोध कार्य एवं शैक्षणिक कार्य संपादित किये जा रहे हैं। निरीक्षण उपरांत डॉ. चौधरी ने माइक्रोब रिसर्च एण्ड प्रोडक्शन सेंटर के द्वारा बनाये जा रहे विभिन्न प्रकार के जैव उर्वरकों की सराहना की और कहा कि केन्द्र में आधुनिक मशीनें हैं जिससे यहां पर जैव उर्वरक पर्याप्त मात्रा और उत्तम क्वालिटी के फसलों एवं पोषक तत्वों के अनुरूप तैयार किये जा सकते हैं। जो प्रदेश ही नही पूरे देश के लिये हितकारी कदम हेगा। आपने निरीक्षण के दौरान मेडिशनल गार्डन में औषधीय पौधों की विभिन्न किस्मों के बारे में जानकारी प्राप्त की और उनसे विभिन्न बीमारियों में सहायक पत्तियों एवं बनने वाले पाउडर को लेकर भी गंभीरता से चर्चा की। आपने आईएफएस यूनिट और डेयरी में पहुंचकर वहां की गतिविधियों के बारे में जाना और किसानों के मध्य इसे प्रचलित करने का आवहन किया। साथ ही गोबर की खाद एवं केंचुआ खाद के संबंध में वैज्ञानिकों से फसलों में अधिक उपयोग हेतु चर्चा की। इसके अलावा बीज संग्राहालय में भी कृषि अनुसंधान भवन नई दिल्ली के डीडीजी, नेचुरल रिसोर्स मैनेजमेंट (एनआरएम) डॉ. एस.के.चौधरी एवं आईआईएफएसआर,मेरठ डॉ. सुनील तिवारी ने पहुंचकर वहां पर संरक्षित विभिन्न किस्मों के बीजों को देखा और उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। दरअसल जनेकृविवि के बीज संग्राहालय में परम्परागत बीज भण्डारण में क्रमागत विकास, मध्यप्रदेश में चारा अनुसंधान एवं विकास, के धान, लघुधान्य के बीजों का अनूठा संग्रह एक ही स्थान पर उपलब्ध है। इसके साथ ही डॉ. एस.के. चौधरी ने मृदा विज्ञान विभाग का भी निरीक्षण कर यहां की शैक्षणिक गतिविधियों एवं छात्र-छात्राओं से रूबरू हुये। निरीक्षण के दौरान विभिन्न इकाईयों के प्रमुखों द्वारा कृषि अनुसंधान भवन, नई दिल्ली के डीडीजी, नेचुरल रिसोर्स मैनेजमेंट (एनआरएम) डॉ. एस.के.चौधरी एवं आईआईएफएसआर, मेरठ डॉ. सुनील तिवारी को इस अवसर पर संचालक अनुसंधान सेवायें डॉ. जी.के. कौतु, संचालक प्रक्षेत्र डॉ. आर.एस.शुक्ला, मृदा विज्ञान विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ. पी.एस.कुल्हाड़े, पादप कार्यिकी विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ. आर. के. समैया, सस्य विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ.प्रवीण कुमार मिश्रा, डॉ. आर.पी.साहू, डॉ. विकास गुप्ता, डॉ. राकेश साहू, डॉ. फूलचंद अमूले, डॉ. अभिषेक शर्मा सहित अन्य वैज्ञानिक उपस्थित रहे।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

गेहूँ की उन्नत उत्पादन तकनीक

निशा सिंह, बालकृष्ण सिंह
सुधांशु जैन, जनमेजय शर्मा
नीरज हाडा एवं सुधीर सिंह भदौरिया
अखिल भारतीय समन्वित गेहूँ एवं जौ परियोजना,
कृषि महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

गेहूँ मध्यप्रदेश की प्रमुख रबी फसल है। इसका राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक परिदृश्य निम्न प्रकार से है-

	क्षेत्रफल (मि हे)	उत्पादन (मि टन)	उत्पादकता (क्विं/हे)
भारत	31.82	112.74	35.43
मध्यप्रदेश	7.15	23.99	33.56
प्रदेश की भागीदारी	22.5%	21%	

जलवायु

गेहूँ मुख्यतः एक ठंडी एवं शुष्क जलवायु की फसल है। अतः फसल बोने के समय 20 से 22 डिग्री, बढ़वार के समय इष्टतम तापमान 25 डिग्री तथा पकने के समय 14 से 15 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान उत्तम रहता है। तापमान 25 डिग्री से ज्यादा होने से फसल जल्दी पक जाती है तथा उपज घट जाती है। बाली आने के समय पाला पड़ने से बीज अंकुरण शक्ति खो देते हैं तथा फसल को बहुत नुकसान होता है। इसकी खेती के लिए 60-100 से मी वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र उपयुक्त होते हैं। गर्म एवं नाम जलवायु गेहूँ के लिए उचित नहीं होती क्योंकि ऐसे क्षेत्रों में फसल में रोग अधिक लगते हैं।

भूमि का चयन

गेहूँ सभी प्रकार की कृषि योग्य भूमियों में पैदा हो सकता है परन्तु दोमट से भारी दोमट, जलोढ़ मृदाओं में गेहूँ की खेती सफलतापूर्वक की जाती है। जल निकास की सुविधा होने पर मटियार दोमट तथा काली मिट्टी में भी इसकी अच्छी फसल ली जा सकती है। कपास की काली मृदा में गेहूँ की खेती के लिए सिंचाई की आवश्यकता कम पड़ती है। भूमि का पीएच मान 5 से 7.5 के बीच में होना फसल के लिए उपयुक्त रहता है क्योंकि अधिक क्षारीय या अम्लीय भूमि गेहूँ के लिए अनुपयुक्त होती है।

भूमि की तैयारी

गर्मियों में गहरी जुताई करना चाहिए। अच्छे अंकुरण के लिए भुर-भुरी मिट्टी की आवश्यकता होती है। समय पर जुताई खेत में नमी संरक्षण के लिए भी आवश्यक है। खेत इस प्रकार तैयार करना चाहिए की बोआई के समय खेत खरपतवार मुक्त हो, भूमि में पर्याप्त नमी हो तथा मिट्टी इतनी भुर-भुरी हो जाएं की बोनी वांछित गहराई व दूरी पर की जा सके। खरीफ फसलों की कटाई के तुरंत बाद खेत की 2-3 जुताई देसी ह्ल-बखर या ट्रेक्टर से करना चाहिए। यदि खेत कड़ा हो गया हो तो सिंचाई देकर बतर आने पर जुताई करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाकर खेत समतल कर लेना चाहिए। ट्रेक्टर चालित रोटावेटर से खेत से खेत एक बार में बुवाई हेतु तैयार हो जाता है। सिंचित क्षेत्र में धान-गेहूँ फसल चक्र में विलम्ब से खाली होने वाले धान के खेत में समय से बुवाई करने के लिए धान की कटाई से पूर्व सिंचाई कर देते है तथा शून्य भू-परिष्करण बुवाई करके निम्न लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं- मृदा की भौतिक अवस्था का संरक्षण, समय से बुवाई, उत्पादन लागत में कमी व सघन कृषि हेतु अनुकूल

परिस्थितियों का निर्माण। इस हेतु जीरो टिल ड्रिल अथवा हेप्पी टर्बो सीडर नामक बोनी मशीनों का उपयोग किया जा सकता है। धान- गेहूँ फसल चक्र वाले क्षेत्रों में यह विधि बहुत प्रचलित होती जा रही है।

बोने का समय

असिंचित दशा-बारानी गेहूँ का उपयुक्त समय 15 अक्टूबर से 30 अक्टूबर है। भूमि की दशा अनुसार बोनी 10 नवम्बर तक की जा सकती है।

सिंचित दशा (समय से बोनी)-15 नवंबर से 30 नवंबर तक
सिंचित दशा (देर से बोनी)-15 दिसम्बर से 20 दिसम्बर तक

गेहूँ के साथ अंतरवर्तीय फसलें

बारानी क्षेत्रों में भिन्न स्वभाव वाली अंतरवर्तीय फसलें लगाना लाभदायक होता है।

गेहूँ	चना	2:1
गेहूँ	मटर	2:1 (सिंचित)
गेहूँ	सरसों	2:1 (सिंचित)
गेहूँ	मसूर	2:1
गेहूँ	कुसुम	2:1

बीज की मात्रा

औसत रूप में 100 किग्रा/हे (1000 दानों का वजन 40 ग्राम तक हेतु) इसके पश्चात् हजार दानों का वजन 1 ग्राम बढ़ने पर (40 ग्राम के ऊपर) 2.5 किलोग्राम/हे. बढ़ाते जाएं। असिंचित/अर्धसिंचित दशा में कतार से कतार की दूरी 25 से मी व सिंचित समय से बुवाई की दशा में 20 से मी रखें बीज की बोनी सीड ड्रिल से ही करें एवं बोनी की गहराई 5 से मी से ज्यादा न बढ़ाएं। बीज को उर्वरक के साथ न मिलाएं इससे अंकुरण क्षमता में कमी हो सकती है।

बीजोपचार

बुवाई से पूर्व बीजों को उपचरित कर ही बोएं, बीजोपचार के लिए बेवेस्टिन/कार्बेन्डाजिम फफूंदनाशी 2.5 से 3 ग्राम/किलो बीज हेतु पर्याप्त होती है। पीएसबी कल्चर 5 ग्राम/किलो बीज से उपचारित करने पर फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है। एजोटोबेक्टर कल्चर मिलाने से प्राकृतिक नत्रजन की उपलब्धता बढ़ती है।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवारों द्वारा उपज में 25-35 प्रतिशत तक उपज में कमी आने की संभावना बनी रहती है। यह कमी फसल में खरपतवारों की सघनता पर निर्भर करती है। खरपतवार फसल को दिए गए पोषक तत्वों, जल, सूर्य प्रकाश व स्थान का उपयोग अपनी वृद्धि हेतु करते है जिससे उपज में कमी आती है। गेहूं की फसल में मुख्यतः दो प्रकार के खरपतवार पाए जाते हैं:

चौड़ी पत्ती: बथुआ, सेंजी, दुधी, कांसनी, जंगली पालक, अकरी, जंगली मटर, कृष्णनील, सत्यानाशी व हिरनखुरी

संकरी पत्ती: चिरैया बाजरा (गुल्ली डंडा), जंगली जई, कांस, मोथा व अन्य घास

यदि खेत में खरपतवार ज्यादा हों तो फसल चक्र अपनाएं जैसे बरसीम या रिजका की फसल गेहूँ के स्थान पर लेते हैं तो चारे की कटाई के साथ खरपतवार बार बार कटकर बीजोत्पादन नहीं कर पाते एवं नष्ट हो जाते हैं। जीरो टिलेज अपनाने से चिरैया बाजरा की समस्या बहुत कम हो जाती है। खड़ी फसल में हैण्ड हो 20-25 दिन व 35-40 दिन पर चलाने से यह समस्या कम हो जाती है। रासायनिक खरपतवारनाशी का प्रयोग करने से समय की बचत होती है तथ यह अपेक्षाकृत सस्ता भी पड़ता है।

पौध संरक्षण

1. जड़ गलन एवं पद गलन रोगों की रोकथाम हेतु फफूंदनाशी (बेवेस्टिन/कार्बेन्डाजिम 2.5 से 3 ग्राम/किलो बीज) से बीजोपचार करके बोएं।
2. गेरुआ तथा ब्लाइट रोगों से बचाव हेतु टेबुकोनाजोल या प्रोपाकोनाजोल का छिड़काव 700 मि ली प्रति हे की दर से करें
3. कंडुवा रोग से बचाव हेतु वीटावैक्स (दैहिक फफूंदनाशी) से 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से करें।
4. दीमक कीट का प्रकोप प्रायः असिंचित गेहूं तथा हलकी भूमि में लगाए असिंचित भूमि पर होता है। कीट के प्रभावी नियंत्रण हेतु खेतों के आसपास दीमक की बाम्बियों को नष्ट करें। रोकथाम हेतु क्लोरोपय्रिफोस 5 ली/हे की दर से बोने के पूर्व मिट्टी में छिड़काव करें या 500 मि ली दवा का 2 लीटर पानी में घोल बनाएं तथा बीज को उपचारित करें। इससे कटुआ इल्ली की भी रोकथाम होगी।
5. जड़ माहू के नियंत्रण हेतु क्लोरोपायरीफोस का छिड़काव 2.5 ली/हे की दर से कर के पानी लगा दें।

फसल की कटाई एवं भण्डारण

जैसे ही फसल तैयार हो कटाई करना चाहिए। बौनी जाति के गेंहू को पकने के बाद खेत में नहीं छोड़ना चाहिए। कटाई में देरी करने से दाने झड़ने लगते हैं और पक्षियों द्वारा नुकसान की संभावना रहती है। भण्डारण के पहले गेहूँ को अच्छे से सुखा लें। फसल काटने के बाद नरवाई में आग लगाने की बजाये स्ट्रा रीपर से भूसा बना लें व पशु को खिलाएं। भंडारण पूर्व कोठियों एवं बारदानों पर मेलाथियान का छिड़काव करें। गोदामों की दरारों को बंद कर दें एवं सल्फोस गोली रखकर बारदानों को ढंककर रखें।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

पशुओं में लिस्टीरिओसिस रोग एवं बचाव

डॉ. रवि सिकरोडिया, दलजीत छाबरा, अंकित जैन
जोयसी जोगी राखी गांगिल एवं राकेश शारदा
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू (म.प्र.)

पशुओं में होने वाला यह एक बैक्टीरिया जनित संक्रामक रोग है जो कि लिस्टीरिआ मोनोसाइटोजीनस अथवा लिस्टीरिआ आइवेनोवीआई नामक ग्राम पॉजिटिव बैक्टीरिया के द्वारा होता है इस बीमारी में मुख्यतः पशुओं में मेनिंगोइनसिफेलाईटिस, अबॉर्शन और स्टिलबर्थ जैसे लक्षण देखने को मिलते हैं।

रोग का कारण

लिस्टीरिआ की अनेक प्रजातियों में से लिस्टीरिआ मोनोसाइटोजीनस नामक ग्राम पॉजिटिव बैक्टीरिया के द्वारा यह बिमारी पशुओं में मुख्य रूप से होती है यह एक स्पोर ना बनाने वाला, कोकाई, चैन में मिलने वाला जीवाणु है यह ब्लड अगर पर आसानी से ग्रो करता है यह बैक्टीरिया लिस्टीरिओलाइसिन नामक एक टोक्सिन भी उत्पन्न करता है जो सेल्स के लिए काफी घातक होता है उच्च तापमान एवं सामान्यतः उपयोग में लाये जाने वाले जीवाणुनाशकों के उपयोग से यह जीवाणु आसानी से मृत हो जाता है

यह बीमारी विश्वभर में पशुओं को प्रभावित करती है गो वंशीय पशु लिस्टीरिओसिस बिमारी के प्रति सवेंदनशील होते है इसके अलावा कुछ वन्यजीवों, सूअर एवं पक्षियों में भी यह बीमारी देखने को मिल सकती है अनेक पशु इस बिमारी के जीवाणु के लिए रिजर्वायर का काम करते है यह बैक्टीरिया खराव साईलेज जिसका चभ् 5.5 से अधिक हो में पाया जा सकता है गो वंशीय पशु में यह बिमारी ऐसे दुषित साईलेज के खिलाने से हो सकती है चूहे व कुछ वन्य जीव बीमारी के जीवाणु को फैलाने में भूमिका निभाते है जो की जीवाणु के रिजर्वायर भी होते है इस बिमारी में समय पर जांच व इलाज ना मिलने पर पशुपालक को पशु की मृत्यु के रूप में अत्यधिक नुकसान हो सकता है।

गो वंशीय पशुओं में लिस्टीरिओसिस बीमारी

रूमिनेंट पशुओं में मुख्य लक्षणों के रूप में इनसिफेलाईटिस, अबॉर्शन और सेप्टिसीमिया अथवा एण्डओप्थ्लमाइटिस देखने को मिलता है सामान्यतः प्रभावित पशुओं में इनमें से कोई एक लक्षण मिलता है नवजात पिग, घोड़ों, बर्ड के बच्चों में सेप्टिसीमिया प्रमुखतः पाया जाता है। जिन पशुओं में नर्वस सिस्टम प्रभावित होता है उसको न्यूरल लिस्टीरिओसिस अथवा सर्कि्लग बिमारी कहते है इसका इन्क्यूबेशन पीरियड 14 से 40 दिन तक हो सकता है इसमें प्रभावित पशु सुस्त, भूख कम लगना, एक गोलाकार रूप से गोल-गोल चक्कर लगाने लगता है इस कारण इसे सर्कि्लग बिमारी भी कहते है इसमें फेस के एक आधे भाग की पैरालिसिस हो जाती है सलैवा टपकने लगता है पलकें व कान नीचे हो जाते है शुरुआत में फीवर भी हो जाता है भेड़ एवं बकरी में रोग की घातकता के साथ पशु लेट जाता है व मृत्यु भी तुरंत देखने को मिल सकता है गो वंशीय पशुओं में किसी अन्य लक्षणों के दिखये बिना गर्भपात भी देखने को मिलता है

सेप्टिसीमिया की स्तिथि में इन्क्यूबेशन पीरियड 2 से 3 दिन तक का होता है जो की भेड़ के बच्चों में सामान्यतः देखने को मिलता है गाय व भेड़ों में ओकुलर लिस्टीरिओसिस भी देखने को मिलती है जिसमें की किरेटोकंजन्क्टवाइटीस और आईराइटिस प्रमुख लक्षण है

रोग का निदान

- पशुपालक के द्वारा रोग के इतिहास, लक्षण की जाकारी रोग के पहचान में सहायक होती है
- इस बैक्टीरिया की पहचान के लिए मृत पशु के नर्वस टिश्यू को सैंपल के रूप में लेना चाहिए व बैक्टीरिया को बिभिन्न मीडिया पर अलग करने की कोशिश करना चाहिए
- पोस्टमॉर्टेम में मिलने वाले लीजन भी रोग की पहचान में सहायक है
- मॉलिक्यूलर मेथोड्स द्वारा बैक्टीरिया और बीमारी का पता किया जा सकता है

रोग का बचाव व रोकथाम

- रोगी पशु का पता चलते ही पशु डॉक्टर से संपर्क कर इलाज शुरू करवा देना चाहिए
- पशु को अगर साईलेज किलय जा रहा था तो तुरंत बंद कर देना चाहिए
- प्रभावित पशु तो अन्य स्वस्थ्य पशुओं से अलग कर देना चाहिए
- रोग के फैलाने में सहायक चुहों व अन्य जीवों की रोकथाम के लिए तुरंत प्रयास करना चाहिए
- चूँकि यह बैक्टीरिया मनुष्यों को भी बीमार कर सकता है तो पशु के संपर्क में आने सभी पशुपालक, व्यक्ति को भी अपना ध्यान रखना चाहिए

मृदा परीक्षण एवं जैविक खेती पर प्रशिक्षण

शहडोल। कृषि विज्ञान केंद्र शहडोल एवं किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग शहडोल के सन्युक्त तत्वाधान में ग्राम शहरगढ़ एवं खरपा में कृषक खेत भ्रमण किया गया। जिसमे मृदा परीक्षण एवं जैविक खेती विषय पर तकनीकी प्रषिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया। जिसमे कृषि विज्ञान केंद्र के वैज्ञानिक डॉ. ब्रजकिषोर प्रजापति ने किसानो को बताया कि मृदा स्वास्थ्य कार्ड जिस पर निम्न जानकारी जैसे मृदा का पी.एच. मान, ई.सी., कार्बनिक पदार्थ, नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश, सल्फर, जिंक, लोहा, कॉपर, मैग्नीज, बोरान, अंकित कर कृषकों को उपलब्ध कराया जाता है। जिससे कृषक अपनी फसलानुसार, क्षेत्र अनुसार संतुलित उर्वरकों का प्रयोग कर अच्छा उत्पादन प्राप्त कर सकें। यदि हमें मिट्टी की सुरक्षा करनी है तो उसके बारे में जानकारी होनी भी जरूरी है। मिट्टी की शक्ति और उसकी स्थिति के बारे में हमें तभी जानकारी हो पाएगी, जब हम उसका समय-समय पर परीक्षण कराते रहे। कृषि में मृदा परीक्षण या भूमि की जांच एक मृदा के किसी नमूने की रासायनिक जांच हैं जिससे भूमि में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा के बारे में जानकारी मिलती हैं। इस परीक्षण का उद्देश्य भूमि की उर्वरकता मापना तथा यह पता करना है कि उस भूमि में कौन से तत्वों की कमी है। इसके अतिरिक्त डॉ. प्रजापति ने यह भी जानकारी दी कि पौधों की वृद्धि एवं समुचित विकास के लिये 17 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है जिनमें से किसी एक की कमी हो जाने से पौधों पर विपरीत असर होता है और उसके विकास के साथ-साथ उत्पादन में भी फर्क पडने लगता है। बढ़ती जनसंख्या, घटती जोत और कम क्षेत्र से अधिक अन्न उत्पादन की दौड़ में भूमि से पोषक तत्वों का दोहन कई गुना अधिक होने लगा है, परिणाम स्वरूप भूमि की दशा में उसके स्वास्थ्य पर विपरीत असर देखा जाने लगा। अधिक उत्पादन लेने के लिये रसायनिक उर्वरकों का असंतुलित तथा सिंचाई जल का अंधाधुंध उपयोग करने से परिस्थिति और बिगडने लगी। साथ ही साथ बताया की कई दशकों से फसलों के उत्पादन वृद्धि हेतु रसायनों जैसे उर्वरकों, कीटनाशक एवं खरपतवारनाशी दवाओं का प्रयोग बढ रहा है जो कि मानव समाज व पर्यावरण दोनों के लिए अत्यन्त हानिकारक है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

कीटनाशकों द्वारा बाह्य पशु परजीवियों का रोकथाम

डॉ. सविता बिसेन, डॉ. अमित गुप्ता
डॉ. सोनाली पृष्टिद्ध
(सहायक प्राध्यापक) पशु चिकित्सा एवं पशु पालन महाविद्यालय, अंजोरा, दाऊ श्री वासुदेव चन्द्राकर कामधेनु विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

जो परजीवी पशु शरीर के ऊपर पाए जाते हैं। उन्हें बाह्य पशु-परजीवी कहते हैं जिनमें किलनी, पिस्सु जुएं, मक्खी, मच्छर, खटमल आदि प्रमुख हैं। प्रत्यक्ष रूप से, ये परजीवी पीड़ादायक काटने, रक्त-चूसने, घाव-उत्पन्न करने एवं विभिन्न अंगों पर आक्रमण से पशु के शरीर को हानि पहुंचाते हैं। अप्रत्यक्ष रूप से संक्रमित बाह्य परजीवी, पशुओं को काटने के दौरान कई प्रकार के जीवाणु, विषाणु, रिकेटसिया, प्रोटोजोआ और कृमि संचारित करते हैं जिससे पशु विभिन्न बीमारियों से ग्रसित हो सकता है। बाह्य परजीवी, पशु-पालकों को पशु की मृत्यु अथवा रूग्णता द्वारा आर्थिक नुकसान पहुंचाते हैं। ये परजीवी, पशु के दुग्ध-उत्पादन में कमी, पशु के परिश्रम करने की क्षमता में कमी, त्वचा एवं खाल की हानि, मांस-उत्पादन में कमी, ऊन की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में कमी इत्यादि के कारक होते हैं।

बाह्य परजीवियों से बचाव हेतु कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग- बाह्य पशु परजीवियों को समाप्त करने के लिए पशुओं के शरीर पर तथा पशुशाला के अन्दर कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग अति आवश्यक है। चूंकि प्रयोग में लाई जाने वाली ज्यादातर दवाइयां जहरीली होती है। अतः इनका प्रयोग सावधानी से तथा बताई गई मात्रा में ही करना चाहिए।

ये कीटनाषक दवाइयां निम्नलिखित तरीकों से प्रयोग में लाई जा सकती हैं:

छिड़काव (स्प्रेयींग): इस तरीके में, कीटनाशक में उचित मात्रा में पानी मिलाकर, पशु के शरीर के ऊपर तथा पशुशाला में पंप द्वारा छिड़काव किया जाता है। छिड़काव करते समय पशु के मुंह, आंख व नाक को बचाकर रखना चाहिए। जहां ये परजीवी ज्यादा पनपते हैं जैसे कि पशु के शरीर का निचला हिस्सा, पैरों की अन्दरूनी सतह तथा पूंछ इत्यादि जगहों पर अच्छी तरह से छिड़काव करना चाहिए। इस तरीके से पशुशाला के हर कोने में कीटनाशक का अच्छी तरह से तथा आसानी से छिड़काव किया जा सकता है।

छिड़काव की उपयोगिता

- यह तरीका बड़े पशुओं (गाय, भैंस आदि) में बहुत ही कारगर है।
- छिड़काव करते समय पशु के शरीर पर लगा हुआ गोबर, मिट्टी तथ अन्य गंदगी भी साफ हो जाती है।

छिड़काव की अनुपयोगिता

- यह तरीका भेड़ व बकरियों हेतु कारगर नहीं है क्योंकि इन पशुओं में घने ऊन/बालों के कारण कीटनाशक अच्छी तरह से लगाना मुश्किल है।
- इस तरीके के कारण वायु प्रदूषण का खतरा रहता है।

(कीटनाशक के घोल में डुबोना (डीपींग): इस विधि में, उचित मात्रा में बनाए गए कीटनाशक के घोल में पशुओं को एक-एक करके टैंक में नहलाया जाता है। हर पशु को कम से कम दो मिनट तक (मुंह, नाक, कान तथा आंख बचाकर) कीटनाशक के घोल में डुबोया जाता है। यह तरीका मुख्यतः भेड़ एवं बकरियो के लिए काम में लिया जाता है। **इस विधि को अपनाने के लिए एक कांक्रीट का पक्का टैंक बनाया जाता है, जिसकी माप निम्नलिखित हो सकती है:-**

गहराई	-	05 फीट
चौड़ाई	-	3.3 फीट
ऊपरी सतह की लंबाई	-	8.3 फीट
नीचे की सतह की लबाई	-	05 फीट

डीपींग की उपयोगिता

1. यह तरीका भेड़ एवं बकरियों के लिए बहुत ही कारगर है क्योंकि इसमें कीटनाशक का घोल, गहरे बालों/ऊन में भी अच्छी तरह से पहुंच जाता है।
2. यह आसान तरीका है एवं इसमें समय की भी बचत होती है।
3. इस विधि के द्वारा पशु के शरीर से गोबर, मिट्टी तथा अन्य गंदगी की भी अच्छी तरह से सफाई हो जाती है।

डीपींग की अनुपयोगिता

1. यह तरीका बड़े पशुओं के लिए कारगर नहीं है।
2. यह तरीका ग्याभिन भेड़ व बकरियों के लिए नुकसानदायक हो सकता है।
3. पशु के शरीर पर कोई घाव होने पर भी यह विधि अनुपयोगी है एवं नुकसानदायक हो सकती है।
4. इस विधि द्वारा बाह्य परजीवियों के उपचार करने का खर्चा भी ज्यादा आता है, क्योंकि इसमे कीटनाशक के घोल की मात्रा ज्यादा बनानी पड़ती है।
5. इस विधि को अपनाने के लिए उचित प्रकार के टैंक बनाने की जरूरत होती है।

धूड़ना/कीटनाषक पाऊडर लगाना (डस्टींग): इस विधि में कीटनाशक पाउडर को पशु के शरीर के ऊपर, हाथ से या डस्टर से लगाया जाता है।

डस्टिंग की उपयोगिता

1. यह कीटनाशक लगाने का काफी आसान तरीका है।
2. जिन पशुओं के शरीर पर घाव है, उनमें इस विधि द्वारा कीटनाषक आसानी से घाव को बचाकर लगाया जा सकता है।

डस्टिंग की अनुपयोगिता

1. यह तरीका भेड़ एवं बकरियों में गहरे तथा लंबी ऊन/बालों के कारण कारगर नहीं है।
2. इस विधि में कीटनाशक पाउडर काफी मात्रा में व्यर्थ हो जाता है।
3. डस्टिंग के दौरान डस्टिंग करने वाले व्यक्ति के शरीर में कीटनाशक पाउडर जाने का खतरा रहता है। इसलिए उसे काफी सावधानी बरतनी पड़ती है।

साबुन/शैम्पू से नहलाना- पशुओं में बाह्य परजीवियों के उपचार के लिए कई प्रकार के साबुन एवं शैम्पू भी बाजार में उपलब्ध है

साबुन/शैम्पू की उपयोगिता

1. ज्यादातर साबुन/शैम्पू चूंकि हर्बल उत्पाद है। अतः इनको किसी भी प्रकार के एवं किसी भी उम्र के पशुओं के लिए उपयोग किया जा सकता है।
2. ये उत्पाद ग्याभिन पशुओं एवं शरीर पर घाव वाले पशुओं पर भी बिना किसी नुकसान के लगाए जा सकते हैं।

साबुन/शैम्पू की अनुपयोगिता

1. ये काफी महंगे पड़ते हैं।
2. जिन पशुपालको के पास पशु (भेड़ एवं बकरी) ज्यादा संख्या में हैं, उनके लिए यह विधि ज्यादा कारगर नहीं है।
3. इनके प्रयोग में ज्यादा समय लगता है।
4. ये उत्पाद, सभी प्रकार के बाह्य परजीवियों के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

टीका लगवाना: बाह्य परजीवियों से बचाने के लिए पशुपालक पशुओं को कीटनाषक का टीका भी पशु चिकित्सक से लगवा सकते हैं।

टीके की उपयोगिता

1. बाह्य परजीवियों से बचाने के लिए, ज्यादातर पशुओं में एक टीका ही कारगर सिद्ध होता है।
2. यह टीका पशु चिकित्सक की देखरेख में किसी भी पशु को उचित मात्रा में आसानी से लगवाया जा सकता है।
3. आईवरमेक्टीन का टीका, बाह्य परजीवियों के अलावा कई प्रकार के आंतरिक परजीवियों के खिलाफ भी असरदायक है।

टीके की अनुपयोगिता

1. यह टीका ऊपर बताए गए अन्य तरीकों के मुकाबले थोड़ा महंगा पड़ता है।
2. टीका लगाने से केवल पशु के शरीर पर मौजूद बाह्य परजीवियों का ही उपचार होता है, परन्तु पशुशाला में उपस्थित परजीवियों को समाप्त करने के लिए कोई भी अन्य तरीका अपनाना पड़ता है।

बाह्य परजीवियों से पशुओं को बचाने हेतु निम्नलिखित कीटनाषक दवाइयों का उपयोग किया जा सकता है।

कीटनाशक का नाम	पशु पर छिड़काव/डीपींग/डस्टिंग हेतु कीटनाशक की मात्रा	पशुशाला में छिड़काव हेतु कीटनाशक की मात्रा
1. डैल्टामैथरीन	2-3 मी.ली./एक लीटर पानी में	5 मी.ली./एक लीटर पानी में
2. साईपरमैथरीन	1 मी.ली./एक लीटर पानी में	20 मी.ली./एक लीटर पानी में
3. मैलाथीयोन	10 मी.ली./एक लीटर पानी में	10 मी.ली./एक लीटर पानी में
4. बेन्जीन हेक्सा क्लोराइड	5% डस्ट/पाउडर शरीर पर लगाएं	पशुशाला में छिड़काव करें

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कृषि वानिकी की पहाड़ियों इलाकों में भूमिका

डॉ. ज्ञान श्री कौशल शोधार्थी, वानिकी (वन-संवर्धन और कृषि वानिकी), सैम हिगिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

मोहम्मद वामिक पीएच.डी. शोध छात्र (सब्जी विज्ञान विभाग), सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

कृषि वानिकी

पहाड़ियों इलाकों में खेतों और घरों के आसपास पेड़ उगाने की एक लंबी ऐतिहासिक परंपरा है। होमगार्डन बढ़ते पेड़ों के सबसे उपयुक्त उदाहरणों में से एक है। होमगार्डन एक प्रकार के एग्रोफोरेस्ट्री (एग्रोसिल्वोपास्टरल) का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिसमें "पेड़ों, झाड़ियों, लताओं और शाकाहारी प्रजातियों सहित विभिन्न आर्थिक रूप से उपयोगी पौधों के बहु-प्रजाति संयोजन, अक्सर पशुधन के सहयोग से, घर के आसपास के छोटे जोत में शामिल होते हैं। एग्रोफोरेस्ट्री कोई भी स्थायी भूमि-उपयोग प्रणाली है जो खाद्य फसलों (वार्षिक) को पेड़ की फसलों और भूमि की एक ही इकाई पर पशुधन के साथ जोड़कर कुल पैदावार को बनाए रखती है, या तो वैकल्पिक रूप से या एक ही समय में, प्रबंधन प्रथाओं का उपयोग करके जो स्थानीय लोगों की सामाजिक और सांस्कृतिक विशेषताओं और क्षेत्र की आर्थिक और पारिस्थितिक स्थितियों के अनुरूप है। एग्रोफोरेस्ट्री संभावित रूप से बाजरा को बढ़ावा देने के लिए सरकार की रणनीति में योगदान कर सकती है। यह **Mission LiFE** (पर्यावरण के लिये जीवन शैली) हेतु कार्य योजना का भी समर्थन कर सकता है, जो पर्यावरण संरक्षण और संरक्षण को एक सहभागी प्रक्रिया बनाता है।

राष्ट्रीय कृषि वानिकी नीति (एनएपी, 2014)

भारत की राष्ट्रीय कृषि वानिकी नीति (एनएपी, 2014) एक व्यापक नीतिगत ढांचा है जिसे जलवायु परिवर्तन को कम करने के लिए कृषि उत्पादकता को अधिकतम करके कृषि आजीविका में सुधार करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। भारत की राष्ट्रीय कृषि वानिकी नीति (एनएपी, 2014) कृषि वानिकी को ग्रामीण कृषक आबादी के जीवन को बदलने, पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा करने और स्थायी साधनों के माध्यम से खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक पथ-प्रदर्शक है। परंपरागत रूप से, लोगों ने 6Fs के अलावा तीन घटकों, अर्थात् पेड़ों, फसलों और पशुधन के अंतर-निर्भर लाभों के लिए कृषिवानिकी प्रथाओं का सहारा लिया, यानी भोजन, फल, चारा, ईंधन, उर्वरक और फाइबर। पोषक तत्वों के चक्रण विनिमय और प्रत्येक घटक के सकारात्मक स्पिल-ऑफ प्रभावों ने कृषि उत्पादन तंत्र में स्थिरता लाई।

कृषि वानिकी प्रथाओं से कई लाभों के बावजूद, अधिकांश किसान मुख्य रूप से पेड़ के घटक के बारे में कुछ आशंकाओं जैसे कि लंबे रोटेशन, सकल क्षेत्र में कमी और पेड़ की खेती के व्यापार और बाजार में उतार-चढ़ाव में शामिल जटिल कानूनी प्रक्रियाओं के कारण बड़े पैमाने पर इन प्रणालियों को अपनाने में संकोच कर रहे हैं। विशाल क्षमता के बावजूद एग्रोफोरेस्ट्री को बड़े पैमाने पर अपनाने में प्रमुख चिंताओं में से एक कृषि-वानिकी उपज की कटाई, परिवहन और विपणन से संबंधित नियमों और दिशानिर्देशों के एक अच्छी तरह से परिभाषित सेट की कमी है। परंपरागत रूप से, पहाड़ियों में लोग उच्च ढलानों पर खेती करते हैं और झूम खेती के अभ्यास में कुछ वर्षों के बाद भूखंडों को छोड़ देते हैं। कृषि योग्य भूमि कुल मिलाकर सीमांत है और इसलिए कृषि लगातार निर्वाह स्तर पर रही है।

कृषि-जलवायु क्षेत्र

1. उप उष्ण कटिबंधीय मैदानी क्षेत्र 2. उप उष्णकटिबंधीय पहाड़ी क्षेत्र 3. शीतोष्ण उप अल्पाइन क्षेत्र और 4. माइल्ड ट्रॉपिकल हिल जोन

समशीतोष्ण और उप-अल्पाइन कृषि-जलवायु क्षेत्रों

1. खेत/सब्जी फसलों (मटर, मूली, आलू, शकरकंद, गोभी, शलजम, फूलगोभी, सरसों, मक्का और तारो) के साथ चीड़
2. सब्जियों के साथ प्लम (मटर, मूली, गोभी, फूलगोभी, बीन)
3. सब्जी और झाड़ू घास के साथ नाशपाती (गोभी, फूलगोभी, और बीन और झाड़ू घास के साथ नाशपाती)

उपोष्ण कटिबंधीय पहाड़ियों

1. बड़ी इलायची के साथ एल्डर/नीडलवुड 2. अनानास के साथ सुईवुड 3. अदरक और हल्दी के साथ सुईवुड 4. अनानास/सब्जी फसलों के साथ खासी मंदारिन (अनानास/बीन्स/मूली/अदरक/हल्दी/कोल फसलों आदि के साथ मंदारिन)
5. अमरूद, केला और मोरिंगा (पेड़ टमाटर, अमरूद, केला और मोरिंगा रसोई के बगीचे या खेत की सीमाओं में उगाई जाने वाली फल फसलें हैं) 6. सिरिस/अंजीर राइजोमेटस फसलों के साथ (सिरिस/अंजीर अदरक, हल्दी और तारो के साथ)
7. झाड़ू और नेपियर के साथ अंजीर/कचनार

मध्य उष्णकटिबंधीय पहाड़ियों और मैदानी इलाकों में कृषि जलवायु क्षेत्र

1. फसलों (सेम, मिर्च, अदरक और हल्दी) के साथ मंदारी 2. पान की बेल से सुपारी 3. अनानास के साथ सुपारी 4. अनानास और पान की बेल के साथ सुपारी 5. काली मिर्च के साथ सुपारी 6. अनानास और काली मिर्च के साथ सुपारी 7. अनानास के साथ केला 8. वासभूमि में मछली तालाब के आसपास नारियल, सुपारी, कटहल और केला आदि

कृषि वानिकी पर उप मिशन का प्रजातियों के संयोजन

क) **उखरुल जिले में (वृक्ष प्रजातियां:** कदंबा, एल्डर, ट्रीबीन और ओक और फलों की प्रजातियां: सेब, कीवी, इलायची और एवोकैडो)

ख) **सेनापति जिले में (वृक्ष प्रजातियां:** कदंब, एल्डर और ट्रीबीन और फलों की प्रजातियां: सेब, कीवी, बेर और आड़ू)

ग) **कामजोंग जिले में (वृक्ष प्रजातियाँ:** कदंबा, एल्डर और ट्रीबीन और फलों की प्रजातियाँ: बेर, अनार और अमरूद)

घ) **चर्चंदपुर जिले में (वृक्ष प्रजातियां:** कदंब, ट्रीबीन, चंपक, बीचवुड, बादाम और लाल देवदार और फल प्रजातियां: अमरूद, लीची और काजू)

ई) **जिरिबाम जिले में (वृक्ष प्रजातियां:** रबर का पेड़, चंपक, कदंबा, बादाम, सागौन, अगर की लकड़ी, ट्रीबीन, कटहल और तेज पत्ती और फलों की प्रजातियां: लीची, साइट्रस, नींबू, इमली, काजू और नारियल)

आधुनिक कृषि टिकाऊ नहीं है। मुख्यतः उत्पादन पर हमारे अत्यधिक जोर और अनुपयुक्त भौतिक, रासायनिक और जैविक हेरफेर के माध्यम से इसकी उपलब्धि के कारण जिसके परिणामस्वरूप कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर रखरखाव कार्यों की उपेक्षा होती है। एग्रोफोरेस्ट्री एक समग्र, विविध और टिकाऊ उत्पादन प्रणाली है। यह पारिस्थितिकी तंत्र के कामकाज और भूमि, जल और जैविक संसाधनों के बेहतर प्रबंधन को अनुकूलित करने में मदद करता है। क्षेत्र के लिए अनुशंसित प्रजातियों की रचनाओं का मिट्टी और जल संसाधनों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा और स्थानीय आबादी की जरूरतों को पूरा करने और कृषक समुदायों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में सुधार करने में मदद करने के लिए उपयुक्त तकनीकी हस्तक्षेपों के साथ और सुधार करने की आवश्यकता है।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता: पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कृषि विपणन : एक परिचय

ज्ञान प्रकाश एवं मनीष कुमार
कृषि सांख्यिकी विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

कृषि विपणन (अर्थात एग्रीकल्चरल मार्केटिंग) के अन्तर्गत वे सभी वस्तुएं तथा सेवाएँ आती हैं जो कृषि उत्पाद को खेत से लेकर उपभोक्ता तक पहुंचाने में सहायक होती हैं। कृषि विपणन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसान कृषि उपज को खरीदारों को बेचकर कृषि उत्पादन से लाभ कमाते हैं । प्रत्येक देश की अर्थव्यवस्था में कृषि का मुख्य योगदान है।

परिचय: कृषि विपणन के अंतर्गत बागवानी तथा अन्य कृषि उत्पादों के भंडारण प्रसंस्करण तथा विपणन के साथ-साथ कृषि क्षेत्र मे प्रयोग की जाने वाली मशीनों का वितरण राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कृषि वस्तुओं का आवागमन सम्मिलित हैं। कृषि उत्पादन में वृद्धि हेतु तकनीकी सहायता प्रदान करना तथा सहकारी विपणन को प्रोत्साहित करना भी कृषि विपणन की गतिविधियों के अंतर्गत आता है। कृषि विपणन में उपयोग की जानें वाली गतिविधियां (जैसे की प्रसंस्करण, ग्रेडिंग, पैकिंग, परिवहन, भंडारण, वितरण तथा बिक्री) प्रत्येक देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहां की लगभग 58% जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। किसानों की आय का मुख्य स्रोत कृषि उत्पाद एवं पशुपालन है। अधिकांश श्रमिकों को रोजगार कृषि क्षेत्र मे ही प्राप्त है। पिछले कुछ वर्षों से गेहूं, चावल, तिलहन, दाल, गन्ना, आलू तथा अन्य नकदी फसलों के उपज में वृद्धि हुई है, जिसके कारण भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान होने के साथ-साथ विश्व में भी कृषि क्षेत्र की साख बनी हुई है। चाय, नारियल, काजू, आम, केला, दूध, जूट तथा मसालों के उत्पादन में विश्व में भारत का पहला स्थान है। भारत का गेहूं, चावल, तिलहन, गन्ना, रेशम, कपास, फल तथा सब्जी के उत्पादन में विश्व में दूसरा तथा तंबाकू उत्पादन में विश्व में भारत का तीसरा स्थान है।

कृषि विपणन के उद्देश्य

कृषि विपणन के मुख्यत: तीन उद्देश्य है-1) उत्पादक के लिए 2. उपभोक्ता हेतु 3. मध्यस्थों (बिचौलियों) हेतु

1.उत्पादक के लिए: उत्पादक (किसानो) के लिए कृषि विपणन का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि का बाजार में विक्रय करके अधिकतम लाभ प्राप्त करना।

2.उपभोक्ता के लिए: एक कुशल विपणन व्यवस्था के लिए आवश्यक है कि उपभोक्ता की आवश्यक वस्तुएँ (अनाज, दलहन, तिलहन तथा नकदी फसलें आदि) उसकी क्रय क्षमता के अनुकूल कीमत पर उपलब्ध हो।

3.मध्यस्थों (बिचौलियो) के लिए: विपणन में मध्यस्थों का मुख्य उद्देश्य अपनी सेवाओं एवं कार्यों के द्वारा अधिकतम् लाभ प्राप्त करना है।

कृषि विपणन का महत्व

1.एक कुशल कृषि विपणन प्रणाली संसाधनों के उपयोग और उत्पादन प्रबंधन के अनुकूलन की ओर ले जाती है।

चित्र-1 कृषि उत्पाद

चित्र-2 कृषि मंडी

2.विपणन प्रणाली उत्पादों को देश के भीतर और बाहरी क्षेत्रों में ले जाकर उत्पादों के बाजार का विस्तार करती है।

3.एक कुशल विपणन प्रणाली किसानों और विक्रेताओं के लिए उच्च स्तर की आय सुनिश्चित करती है।

कृषि विपणन की कमिया

1.बाजार में मध्यस्थों का होना: कृषि विपरण की कमियां बाजार में मध्यस्थ का होना कृषि बाजार में किसानों तथा उपभोक्ताओं के मध्य बिचौलियों का होना बहुत आवश्यक है परन्तु आज के समय में किसानों तथा उपभोक्ताओं के मध्य बिचौलियों की संख्या आवश्यकता से अधिक हैं जिसके कारण उपभोक्ताओं तक कृषि उत्पाद पहुंचने तक उनके मूल्य में काफी वृद्धि हो जाती है और उपभोक्ता जो मूल्य बाजार में चुकाते हैं उसकी अपेक्षा किसानों को बहुत कम मूल्य मिल पाता है।

2.कृषि विपणन हेतु मूलभूत सुविधाओं का अभाव होना: आज भी कई गांवों में मूल-भूत सुविधाएं जैसे परिवहन, वेयर हाउसिंग आदि सुविधाओं का अभाव है तथा इसमें कई तरह की कमियां हैं। भारत में आधिकांश सड़के कच्ची हैं जिस पर मोटर परिवहन आसानी से नहीं गुजर पता है। किसके कारण वस्तुओ के मूल्य में वृद्धि हो जाती है।

3.लाभ कम होना: किसी भी बाजार व्यवस्था में बिचौलियों से सेवा लेना अनिवार्य है लेकिन आज परिस्थित ऐसी है कि वे अपनी सेवाओं की तुलना में लाभ अधिक मात्रा में कमा रहे हैं जो कि पूर्णतः गलत है। एक रिसर्च के माध्यम से यह पता लगा है कि ग्राहक द्वारा खर्च किए गए कुल धन का केवल 45% से 50% हिस्सा ही किसानों तक पहुंच पता बाकी का 50% से 55% हिस्सा बिचौलियों के पास चला जाता है।

4.कृषि बाजार मूल्य निर्धारण नीति में कमी: कृषि बाजार में उपज का मूल्य निर्धारण करने की व्यवस्था में कई कमियां हैं। आज भी कृषि उत्पाद का बाजार में सही तरीके से नीलामी नही होती हैं। कई बाजार में व्यापारी आपस में मिलकर कृषि उत्पादों को मूल्य निर्धारित करते हैं जिसके कारण किसानों को उनके उत्पादों का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है।

कृषि विपणन व्यवस्था को सुधारने के उपाय

मुख्यत: दो उपाय निम्नलिखित हैं-

1.सरकार द्वारा किसानो को सस्ती दर पर बैंकों द्वारा ऋण उपलब्ध कराने की व्यवस्था सकार द्वार की जाए ताकि किसान साहूकार के कर्ज से मुक्ति प्राप्त कर सके।

2.परिवहन के साधनों की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए ताकि किसान अपनी फसल को मंण्डी तक आसानी से पहुंचाकर अधिकतम लाभ प्राप्त कर सके।

कृषि बाजार के साथ जुडी कुछ प्रमुख संस्थाएं

1. विश्व व्यापार संगठन (डब्लू. टी. ओ.) 2. भारतीय खाद्य निगम (एफ. सी. आई.) 3. भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ (नेफेड) 4. कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपिडा) 5. राज्य कृषि बाजार बोर्ड

निष्कर्ष

कृषि विपणन कृषि-आधारित उद्योगों के विकास में मदद करता है और अर्थव्यवस्था की समग्र विकास प्रक्रिया का नेतृत्व करता है। यह किसानों को अर्थव्यवस्था की जरूरतों के अनुसार कृषि उत्पादन की योजना बनाने की सुविधा देता है और रोजगार सृजन करके राष्ट्रीय आय की वृद्धि में सहायक होता है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

जीरो बजट प्राकृतिक खेती

सिद्रा किदवई (शोध छात्रा) सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, (उ.प्र.)

सौरभ भारती (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

शिवम् कौशिक (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

प्रवीण कुमार (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

तनु शर्मा परास्नातक छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

प्राकृतिक कृषि हेतु जीरो बजट क्या है?

जीरो बजट प्राकृतिक गौमूत्र और गोबर पर आधारित है। तीस एकड़ जमीन पर देसी गौमूत्र और गोबर की खेती जीरो बजट पर की जा सकती है। जीवामृत, घनजीवामृत और जामन बीजामृत देसी प्रजाति के गौवंश के गोबर और मूत्र से बनाया जाता है। खेत में इनका उपयोग करने से मिट्टी में पोषक तत्वों का विस्तार होता है और जैविक गतिविधियां बढ़ती हैं। खेत में जीवामृत को महीने में एक या दो बार छिड़काया जा सकता है।जबकि बीजामृत बीजों को इलाज करने में प्रयुक्त होता है। इस तरीके से खेती करने वाले किसान को बाजार से खाद और कीटनाशक रसायन खरीदना होगा। नहीं है। वर्तमान खेती-बाड़ी की तुलना में फसलों की सिंचाई के लिए बिजली और पानी का खर्च भी केवल दस प्रतिशत है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती के कुछ महत्वपूर्ण पहलू हैं

1. **जैविक खाद का इस्तेमाल:** कृषक जैविक खाद का उपयोग करते हैं, जैसे खाद्य साबुत, गोबर और कम्पोस्ट। ये सभी प्राकृतिक स्रोत हैं और जमीन को बेहतर बनाते हैं।

2. **जलरक्षा:** किसान बारिश का पानी बचाने के लिए विभिन्न तरीके अपनाते हैं, जैसे बुआई के खेतों में मुल्चिंग करना या बारिश का पानी संचित करना।

3. **उन्नत प्रबंधन:** किसानों को बीज संरक्षण, पौधों की सही देखभाल और कीट प्रबंधन पर अधिक ध्यान देना चाहिए।

4. **स्वयंरक्षा:** किसान अपने उत्पादों को संवेदनशील बनाते हैं और स्थानीय बाजारों में बेचते हैं, जिससे उन्हें बड़े और मध्यम किसानों से अधिक नकदी मिलती है।

पर्यावरणीय प्रभाव: कृषि वैज्ञानिकों और इसके जानकारों ने बताया कि वर्मीकम्पोस्ट और गोबर की खाद खेत में डाली जाती है, जिसमें 46% उड़नशील कार्बन होता है, जो हमारे देश में 36 से 48 डिग्री सेल्सियस तापमान पर खाद से बाहर निकलता है। इसमें मिथेन, नायट्रस और ऑक्साइड भी निकलते हैं, जो वायुमंडल में हरितगृहों का निर्माण करते हैं। हमारे देश में दिसंबर से फरवरी के बीच केवल तीन महीने ऐसे हैं जब तापमान उक्त खाद के उपयोग के लिए उपयुक्त है।

पर्यावरण पर जैविक खेती का प्रभाव कई मायनों में होता है, और यह तकनीक पर्यावरण के साथ संगत होने के कारण बहुत सारे लाभ प्रदान कर सकती है। **निम्नलिखित कुछ मुख्य प्रभाव हैं-**

- जल संरक्षण जैविक खेती में, जल संरक्षण के लिए विभिन्न तकनीकों का प्रयोग किया जाता है, जैसे की मुल्चिंग और सूखा प्रतिरोधक वनस्पतियों का उपयोग करना। इससे जल संसाधनों की बचत होती है और जल प्रदूषण को रोकने में मदद मिलती है।
- मिट्टी स्वास्थ्य जैविक खेती में, जैविक खाद का उपयोग करने से मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार होता है। यह मिट्टी को पोषक तत्वों से भर देता है और पौधों को स्वस्थ बनाता है।
- जैव विविधता जैविक खेती करने से, संरक्षित क्षेत्रों का उपयोग करके प्राकृतिक जीवन और जैव विविधता को बचाया जा सकता है।
- वायु प्रदूषण कम करना जैविक खेती में केमिकलों का कम उपयोग किया जाता है, जिससे वायु प्रदूषण की मात्रा कम होती है।
- बायो-बिन जैविक खेती में जैविक खाद का उपयोग करके बायो-बिन का उपयोग किया जाता है, जो उत्पादन और खेती के अवशेषों को पुनः उपयोग के लिए बनाया जाता है।
- इस प्रकार, जैविक खेती पर्यावरण के संरक्षण और प्रकृति से मिलते जुलते हैं, जिससे सामाजिक, आर्थिक, और पर्यावरणिक लाभ प्राप्त होते हैं।

आयातित केचुआ और देसी केचुआ दोनों ही जीरो बजट खेती पर प्रभाव डाल सकते हैं, लेकिन यहाँ कुछ मुख्य विभिन्नताएं हैं

- जल संरक्षण जीरो बजट खेती में जल संरक्षण की जरूरत होती है, जिसमें केचुआ की प्रजातियों का चयन महत्वपूर्ण हो सकता है। देसी केचुआ के प्रजातियाँ अक्सर स्थानीय मौसम और जल संसाधनों के साथ संगत होती हैं, जबकि आयातित केचुआ के प्रजातियाँ यह नहीं होतीं हैं। इसलिए, देसी केचुआ की खेती जल संरक्षण को बढ़ावा देती है।
- बीजों की उपलब्धता आयातित केचुआ की प्रजातियों के बीजों की उपलब्धता कभी-कभी स्थानीय बाजारों में प्राप्त नहीं होती है, जबकि देसी केचुआ के बीज सामान्यतरू स्थानीय उत्पादों के रूप में उपलब्ध होते हैं। इससे जीरो बजट खेती के लिए उपयुक्त बीजों की उपलब्धता में अंतर हो सकता है।

- प्राकृतिक रोग प्रतिरोध देसी केचुआ की प्रजातियों में प्राकृतिक रोग प्रतिरोधी गुण हो सकते हैं, जो की केमिकल उपयोग के आवश्यकता को कम कर सकते हैं। इसके विपरीत, आयातित केचुआ की प्रजातियों में ऐसे गुण संभावित होते हैं, लेकिन यह स्थानीय शर्तों के साथ संगत नहीं हो सकते हैं।
- स्थानीय प्रजातियों का संरक्षण देसी केचुआ की खेती स्थानीय प्रजातियों के संरक्षण और स्थानीय जैव विविधता के लिए अधिक सहायक हो सकती है। इसके विपरीत, आयातित केचुआ की खेती अधिक विदेशी प्रजातियों के आने का कारण बन सकती है, जिससे स्थानीय प्रजातियों का संरक्षण प्रभावित हो सकता है।
- इस रूपरेखा के आधार पर, देसी केचुआ अक्सर जीरो बजट खेती के लिए अधिक उपयुक्त हो सकता है, लेकिन यह प्रत्येक क्षेत्र के आधार पर भिन्न हो सकता है।

जीरो बजट खेती करने से सफलता प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित कुछ महत्वपूर्ण कदम अपनाए जा सकते हैं

- संवेदनशीलता और ज्ञान सफल जीरो बजट खेती के लिए सबसे पहला कदम यह है कि आपको संवेदनशीलता और ज्ञान होना चाहिए। आपको स्थानीय मौसम, मिट्टी की गुणवत्ता, पौधों की जीवन प्रक्रिया, कीट प्रबंधन, और जल संरक्षण के बारे में अच्छी जानकारी होनी चाहिए।
- सही बीजों का चयन जीरो बजट खेती में, सही बीजों का चयन करना महत्वपूर्ण है। स्थानीय बीजों का प्राथमिकता देना और प्राकृतिक रूप से संरक्षित बीजों का उपयोग करना बेहद महत्वपूर्ण है।
- जल संरक्षण जीरो बजट खेती में, जल संरक्षण का महत्वपूर्ण योगदान है। आपको जल संचयन के लिए उपयुक्त तकनीकों का उपयोग करना चाहिए, जैसे कि मुल्चिंग, बारिश के पानी का संचयन, और धानी की निर्मित तलाबों का उपयोग।

जैविक खाद जीरो बजट खेती में, जैविक खाद का उपयोग करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इससे मिट्टी की गुणवत्ता बनी रहती है और पौधों की स्वस्थ वृद्धि होती है।

बायो-बिन खेती के अवशेषों को पुनः उपयोग के लिए बायो-बिन का उपयोग करना भी महत्वपूर्ण है। इससे खेती में निर्मित अपशिष्टों का उपयोग होता है और खेती की पुनर्चक्रण की प्रक्रिया को समर्थित किया जाता है। इन सभी कदमों का सही तरीके से पालन करके, जीरो बजट खेती में सफलता प्राप्त की जा सकती है और आप उचित उत्पादकता के साथ पर्यावरण के संरक्षण में भी योगदान कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

भिण्डी की उन्नत खेती

डॉ. तेजराज सिंह हाडा
असिस्टेंट प्रोफेसर (उद्यान विज्ञान)
रोशन सिंह बलवंत विध्यापीठ रूरल इंस्टीट्यूट, बिचपुरी, आगरा (उ.प्र.)

देश के किसान विभिन्न प्रकार की सब्जियों की खेती करते हैं। इनमें भिण्डी का एक प्रमुख स्थान है। इसको लेडी फिंगर या ओकरा भी कहा जाता है। किसान भिण्डी की अगेती खेती करके खूब मुनाफा कमा सकते हैं। गर्मियों में भिंडी की काफी मांग होती है। क्योंकि इसमें विटामिन ए, सी समेत कई कई पोषक तत्व पाए जाते हैं।

आजकल कृषि वैज्ञानिकों द्वारा कई नई तकनीक द्वारा भिंडी की खेती की जा रही है। इसके साथ ही कई उन्नत किस्म भी विकसित हो चुकी है जिनके द्वारा किसान भिंडी की फसल से अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं।

उपयुक्त जलवायु

भिण्डी की खेती के लिए उष्ण और नम जलवायु की आवश्यकता होती है। इसके बीजों के जमाव के लिए करीब 20 से 25 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान चाहिए होता है। गर्मी में 42 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा तापमान इसकी फसल को नुकसान पहुंचाता है, क्योंकि ऐसे में इसके फूल गिरने लगते हैं। इसका सीधा असर उपज पर पड़ता है।

उपयुक्त भूमि

भिंडी की खेती सभी प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है, लेकिन हल्की दोमट मिट्टी अच्छी मानी जाती है। इससे जल निकास अच्छी तरह हो जाता है। इसकी खेती के लिए भूमि में कार्बनिक तत्व होना जरूरी है, साथ ही पी.एच. मान करीब 6 से 6.8 होना चाहिए।

खेत की तैयारी

इसकी खेती में सबसे पहले खेत की 2 से 3 बार जुताई कर लें। इसके साथ ही खेत को भुर-भुरा करके पाटा चला लें, ताकि खेत समतल हो जाए।

उन्नत किस्में

भिंडी की कई उन्नत किस्में हैं। इन किस्मों द्वारा किसान खेती करके फसल की उपज को बढ़ा सकते हैं। किसानों को भिंडी की किस्मों का चयन अपने क्षेत्र की जलवायु और मिट्टी के अनुसार करना चाहिए। भिंडी की प्रमुख किस्मों में वर्षा उपहार, अर्का अभय, अर्का अनामिका, परभनी क्रांति शामिल हैं।

निराई-गुड़ाई

भिंडी के खेत को खरपतवार मुक्त रखने के लिए फसल की बुवाई के करीब 15 से 20 दिन बाद पहली निराई-गुड़ाई कर देना चाहिए। भिंडी के खेत में खरपतवार नियंत्रण के लिए रासायनिक का भी प्रयोग कर सकते हैं।

बीज और बीजोपचार

भिंडी की बुवाई के लिए 1 हेक्टेयर खेत में करीब 18 से 20 किग्रा बीज की जरूरत पड़ती है। बीजों को बोने से पहले करीब पानी में 24 घंटे तक डुबाकर रखने से बीजों का अंकुरण अच्छा होता है। इसके अलावा बीजों को थायरम या कार्बेन्डाजिम से भी उपचारित करना चाहिए।

बुवाई

भिंडी की बुवाई कतारों में करनी चाहिए। खेत में कतारों की दूरी करीब 25 से 30 सेंमी होनी चाहिए। इसके साथ ही पौधों की दूरी करीब 15 से 20 सेमी की रखनी चाहिए।

सिंचाई

गर्मियों में भिंडी फसल की सिंचाई 5 से 7 दिन के अंतराल पर करते रहना चाहिए। खेत में नमी न हो, तो फसल की बुवाई से पहले भी एक सिंचाई कर सकते हैं।

तोड़ाई और उपज

भिंडी के फलों की तुड़ाई उसकी किस्म पर निर्भर होती है, वैसे इसकी तुड़ाई करीब 45 से 60 दिनों में शुरू कर देनी चाहिए। तुड़ाई 4 से 5 दिनों के अंतराल पर रोजाना तुड़ाई करें।

उपज

अगर किसान भिंडी की खेती उन्नत किस्मों और अच्छी देखभाल के साथ की जाए, तो इससे प्रति हेक्टेयर करीब 60 से 70 विक्टंल उपज प्राप्त हो जाती है।

02/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

गर्मियों के दिनों में मुर्गियों में तनाव को कम करने हेतु आहार के साथ पीने के पानी में पुदीने का महत्व

डॉ. आशीष अवस्थी पी.एच.डी (पशुधन उत्पादन एवं प्रबंधन) चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

पोल्ट्री आज भारत में मांस का प्रमुख स्रोत है। कुल मांस खपत में इसकी हिस्सेदारी 28 प्रतिशत है, जबकि दस साल पहले यह 14 प्रतिशत थी। इसने अपने दो प्रतिस्पर्धियों - बीफ और वील, और भैंस के मांस को पीछे छोड़ दिया है। उच्च मटन की कीमतें, गोमांस और सूअर के मांस पर धार्मिक प्रतिबंध, और तटीय क्षेत्रों के बाहर मछली की सीमित उपलब्धता ने पोल्ट्री मांस को भारत में सबसे पसंदीदा और सबसे अधिक खपत मांस बनाने में मदद की है। घरेलू उत्पादन के विस्तार और एकीकरण में वृद्धि ने पोल्ट्री मांस की कीमतों को नीचे की ओर धकेल दिया है और इसकी खपत को प्रोत्साहित किया है।

प्रोटीन के बहुत सारे स्रोत हैं लेकिन ब्रॉयलर के बिना मांग को पूरा करना संभव नहीं है। क्योंकि ब्रायलर पालन की अवधि बहुत कम है और 36-42 दिनों के भीतर यह विपणन के लिए तैयार है और मानव उपभोग के लिए उपयुक्त है। यह किसान को बहुत कम समय में लाभ भी देता है। ब्रॉयलर का मांस हम सभी के लिए लोकप्रिय है। पोल्ट्री के अंडे और मीट प्रोटीन के अच्छे स्रोत हैं। पोल्ट्री के मांस पौष्टिक, स्वादिष्ट होते हैं और इसमें वसा कम होती है। इसका स्वास्थ्य पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है।

पुदीना

पुदीना एक बहुमुखी जड़ी बूटी है जिसके मनुष्यों और जानवरों के लिए कई लाभ हैं; मुर्गियां कोई अपवाद नहीं हैं। मुर्गियों के आहार में पुदीने को शामिल करने के कुछ फायदे यहां दिए गए हैं।

कीट विकर्षक

पुदीने में एक मजबूत गंध होती है जो कृन्तकों और कीड़ों जैसे कई कीटों के लिए अप्रिय होती है। अपने चिकन कॉप के पास बढ़ते टकसाल इन अवांछित आगंतुकों को खाड़ी में रखने में मदद कर सकते हैं जबकि आपकी मुर्गियों को एक स्वादिष्ट इलाज दे सकते हैं।

पाचन स्वास्थ्य

पुदीना अपने पाचन लाभों के लिए जाना जाता है। यह मुर्गियों को अपने भोजन को अधिक कुशलता से पचाने में मदद कर सकता है, जिससे खट्टी फसल जैसे पाचन मुद्दों का खतरा कम हो जाता है, एक ऐसी स्थिति जहां फसल प्रभावित हो जाती है और किण्वन भोजन से भर जाती है।

श्वसन स्वास्थ्य

पुदीने में मेन्थॉल होता है, एक यौगिक जो भीड़ को साफ करने और श्वसन स्वास्थ्य में सुधार करने में सहायता कर सकता है। पुदीने का सेवन करने वाली मुर्गियों को श्वसन संबंधी समस्याओं से राहत का अनुभव हो सकता है, खासकर ठंड के महीनों के दौरान जब ऐसी समस्याएं अधिक प्रचलित होती हैं।

तनाव से राहत

पुदीने का मुर्गियों पर शांत प्रभाव पड़ता है, तनाव कम होता है और विश्राम को बढ़ावा देता है। एक खुश, तनाव मुक्त चिकन लगातार अंडे देने की संभावना है और स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से कम प्रवण है।

प्रतिउपचायक और विटामिन

पुदीना विटामिन ए और सी और प्रतिउपचायक का एक अच्छा स्रोत है, जो एक स्वस्थ प्रतिरक्षा प्रणाली का समर्थन करने में मदद करता है। एक मजबूत प्रतिरक्षा प्रणाली आपकी मुर्गियों को संक्रमण और बीमारियों से लड़ने में मदद कर सकती है।

शोध कार्य

पुदीना के पत्तों के पेस्ट के विकास और ब्रॉयलर पर प्रदर्शन के प्रभाव की जांच करने के लिए पांच सप्ताह तक की उम्र के 45 दिन पुराने ब्रॉयलर पर प्रयोग किया गया था। 45 दिन पुराने ब्रॉयलर को बेतरतीब ढंग से पांच समूहों में विभाजित किया गया था, जिनमें से प्रत्येक में 4 चूजों के चार उप समूह थे। नियंत्रण (प्रथम) समूह को मानक ब्रॉयलर आहार प्राप्त हुआ। दूसरे, तीसरे, चौथे और पांचवें समूह के चूजों को क्रमशः पुदीना के पत्तों के पेस्ट 2.5, 5.0, 7.5 और 10 ग्राम के साथ पूरक मानक ब्रॉयलर प्राप्त हुए।

परिणामों से पता चला कि पुदीना के पत्तों के विभिन्न स्तर के पेस्ट का शरीर के वजन, फ़ीड सेवन और ब्रॉयलर के वजन में वृद्धि पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। पुदीना के पत्तों के पेस्ट के साथ पूरक फ़ीड पर ब्रॉयलर की फ़ीड दक्षता में भी सुधार किया गया था।

निष्कर्ष

यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ब्रॉयलर के पानी में ताजे पुदीना के पत्तों के पेस्ट के पूरक का लाभकारी प्रभाव शरीर के वजन, वजन में वृद्धि और ब्रॉयलर के फ़ीड रूपांतरण अनुपात पर पड़ा था। आर्थिक दृष्टिकोण से, ताजे पुदीना के पत्तों के पेस्ट ञ्च 10.0 ग्राम के साथ पूरक पानी सभी उपचारों की तुलना में सबसे अच्छा पाया गया।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार
खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335
01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

रोजगार और आर्थिक विकास में नकदी फसलों का महत्व

ओपेन्द्र सिंह पी.एच.डी. शोध छात्र, मृदा विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

डॉ. मनोज पाण्डेय सह प्राध्यापक, मृदा विज्ञान विभाग, राजा बलवंत सिंह कॉलेज, बिचपुरी आगरा (उ.प्र.)

रिंकू भास्कर पी.एच.डी. शोध छात्र,पादप रोग विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

कु. शिवानी स्नातकोत्तर छात्र, अर्थशास्त्र विभाग, एस.आर.के (पी. जी.) कॉलेज, फिरोजाबाद, (उ.प्र.)

परिचय: नकदी फसलें विश्व की कृषि उत्पादन के महत्वपूर्ण हिस्से हैं। ये उत्पाद ऐसे होते हैं जो बाजार में तुरंत बेचे जा सकते हैं और उन्हें लंबे समय तक संचित नहीं किया जा सकता। इन फसलों की प्रमुखता के कारण, किसानों के लिए इसका व्यापार करना आसान हो जाता है, और इससे उन्हें तत्परता मिलती है क्योंकि इससे उन्हें तुरंत लाभ प्राप्त होता है। नकदी फसलों का उत्पादन विभिन्न प्रकार की खेती से होता है। इसमें तिलहन, सब्जियां, जूट, कॉफी, कोको, गन्ना, केला, संतरा और कपास जैसी फसलें शामिल होती हैं। इनमें से कुछ फसलें वाणिज्यिक उपयोग के लिए होती हैं, जबकि कुछ का उपयोग खाद्य और अन्य उपयोगों के लिए होता है। नकदी फसलों का उत्पादन न केवल किसानों को लाभ प्रदान करता है, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था को भी मजबूत करता है। इन फसलों के व्यापार से सरकार को अधिक राजस्व प्राप्त होता है, जो अन्य सेक्टरों में निवेश के लिए उपयुक्त होता है। इसके साथ ही, नकदी फसलों के उत्पादन से विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है जो विदेशी व्यापार को प्रोत्साहित करता है और विदेशी निवेश को आकर्षित करता है।

नकदी फसलों की पैदावार से कमाएं ज्यादा मुनाफा: भारतीय किसान अब खेती में नए-नए प्रयोग करके अधिक मुनाफा कमाने लगे हैं। किसान परंपरागत खेती को छोड़कर नकदी फसलों को उगाने में ज्यादा दिलचस्पी दिखा रहे हैं। नकदी फसलों को वाणिज्यिक या व्यापारिक फसल भी कहते हैं। किसान इन फसलों को दूसरों उद्योगों के लिए उगाता है और फसल को बेचकर तुरंत नकद राशि प्राप्त करता है। प्रायः नकदी फसलों की खेती बड़े स्तर पर की जाती है और उत्पादन की मात्रा अधिक रहती है। नकदी फसलों में उन व्यापारिक फसलों को शामिल किया जाता है जिनके माध्यम से उद्योगों को कच्चा माल प्राप्त होता है। भारत में पैदा होने वाली प्रमुख नकदी फसलों में गन्ना, कपास, तंबाकू, चाय, काफी, जूट, रबड़, कोको, अलसी, मेस्ट, सरसों, मूंगफली, आलू, फल-सब्जी और दाल आदि को शामिल किया जाता है।

भारत में नकदी फसलें: भारतीय कृषि में नकदी फसल का योगदान लगातार बढ़ता जा रहा है। पहले किसानों का नकदी फसलों की तरफ रुझान कम था। बहुत कम किसान नकदी फसल करते थे। लेकिन अब इनके उत्पाद बेचने पर अधिक लाभ मिलने के कारण किसानों की रूचि नकदी फसलों की तरफ बढ़ी है। अधिकांश नकदी फसलों को विदेशों में निर्यात किया जाता है जिससे देश के राजस्व में वृद्धि होती है। देश में नकदी फसलों की उत्पादन क्षमता में बढ़ोतरी होने से देश की अर्थव्यवस्था मजबूत हो रही है।

1.गन्ना की फसल :आज हर परिवार गन्ना और उससे बनने वाले उत्पादों का उपयोग करता है। गन्ने का उपयोग चीनी बनाने में सबसे ज्यादा होता है। चीनी आज हर घर की जरूरत बन गई है। इसके अलावा गन्ना का उपयोग शक्कर, गुड़, एल्कोहल, इथेनॉल, खांडसारी, राब, मिश्री आदि बनाने में किया जाता है। गन्ना उत्पादन में भारत का ब्राजील के बाद दूसरा स्थान है जबकि चीनी की खपत में भारत का पहला स्थान है। गन्ना एक उष्णकटिबंधीय फसल है और भारत की सर्वाधिक सिंचित फसल है। गन्ने की फसल को पूरी तरह से तैयार होने में करीब एक साल का समय लगता है। भारत में सबसे ज्यादा गन्ना और चीनी उत्पादक राज्य उत्तरप्रदेश है। दूसरे नंबर पर महाराष्ट्र आता है। सबसे ज्यादा चीनी की मीलें महाराष्ट्र में है। भारत में कपड़ा उद्योग के बाद चीनी उद्योग दूसरा सबसे बड़ा कृषि आधारित उद्योग है। भारत में गन्ने के प्रमुख उत्पादक राज्यों में उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडू, आंध्रप्रदेश व गुजरात शामिल है।

2.कपास की फसल: भारत का सबसे बड़ा संगठित उद्योग कपड़ा उद्योग है। कपड़ा उद्योग की अधिकांश जरूरतों को कपास से ही पूरा किया जाता है। भारत में कपास की खेती का क्षेत्रफल विश्व में सर्वाधिक है। कुल उत्पादन या प्रति उत्पादन के मामले में चीन के बाद भारत का दूसरा स्थान है। भारत में कपास उत्पादन में गुजरात पहले स्थान पर है। यह कुल उत्पादन में 34 प्रतिशत की हिस्सेदारी रखता है। कपास के प्रमुख उत्पादक राज्यों में महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश और पंजाब भी शामिल है। कपास की खेती काली या रेगुर मिट्टी में की जाती है। कपास की दो किस्में पाई जाती है, 1. देशी कपास 2. अमेरिकन कपास।

3.तंबाकू की फसल: तंबाकू की खेती से किसानों को कम खर्च में अधिक कमाई होती है। तंबाकू का उपयोग सूखाकर धुआं या धुआं रहित नशे की चीजों में किया जाता है। तंबाकू का उपयोग गुटखा, खैनी, बीड़ी, सिगरेट, सिगार, जर्दा, पान मसालों आदि में किया जाता है। तंबाकू की दो किस्में निकोटियाना टोबैकम और रस्टिका प्रसिद्ध है। निकोटियाना टोबैकम भारत में उगाई जाती है। तंबाकू के उत्पादन और उपभोग में भारत का विश्व में दूसरा नंबर है। पहले नंबर पर चीन आता है। भारत के शीर्ष 2 तंबाकू उत्पादक राज्य आंध्रप्रदेश और गुजरात है। तंबाकू का मूल स्थान अमेजन नदी की घाटी (ब्राजील) है।

4.जूट की फसल: जूट से बायोडिग्रेडेबल प्रॉडक्ट्स का बड़ा बाजार खड़ा किया गया है, जिसके बाद इसकी खपत काफी बढ़ गई है. जूट एक रेशेदार फसल है। इसके रेशे बोरे, दरी, तम्बू, तिरपाल, टाट, रस्सियां, निम्नकोटि के कपड़े, कागज, हेसियन, पैकिंग के कपड़े, कालीन, परदे, घरों की सजावट का सामान, अस्तर और रस्सियां बनाने के काम आता है। इसका डंठल जलाने के काम आता है और उससे बारूद के कोयले भी बनाए जा सकते हैं। भारत में जूट उत्पादन में पश्चिम बंगाल पहले स्थान पर है। यहां कुल उत्पादन का 70% जूट पैदा होता है। गंगा-ब्रह्मपुत्र डेल्टा को जूट उत्पादन में एकाधिकार प्राप्त है।

5.चाय की फसल: भारत में चीनी की तरह चाय भी आज हर घर की जरुरत बन चुकी है। चाय की खेती भारत में सबसे पहले 1834 में अंग्रेजों ने असम घाटी में शुरू की थी। आज असम भारत का शीर्ष चाय उत्पादक राज्य है। यहां कुल उत्पादन की 50% चाय पैदा होती है। असम की सुरमा और ब्रह्मपुत्र घाटी में चाय की खेती की जाती है। चाय उत्पादन में असम के बाद पश्चिम बंगाल और तमिलनाडू का नंबर आता है। विश्व के टॉप 3 चाय उत्पादक देशों में भारत दूसरे नंबर पर है। जबकि पहले नंबर पर चीन और तीसरे नंबर पर केन्या आता है। चाय के पौधे से एक साल में तीन बार पत्तियां चुनी जाती है।

6. काफी की फसल: भारत में काफी की खेती की शुरुआत 17वीं शताब्दी में मानी जाती है। इसे अरब से लाकर दक्षिण भारत में बाबा बुदन की पहाड़ी पर लगाया गया था। काफी को कहवा भी कहा जाता है। इसका मूल स्थान अमेजन नदी की घाटी (ब्राजील) है। भारत में कॉफी या कहवा की खेती दक्षिण भारत के पर्वतीय ढलान वाले क्षेत्रों में होती है। कहवा के उत्पादन में टॉप 3 राज्य कर्नाटक, केरल व तमिलनाडू है। सर्वाधिक 68 प्रतिशत उत्पादन कर्नाटक में होता है। विश्व में सबसे ज्यादा कहवा का उत्पादन ब्राजील में होता है। भारत में केवल अरेबिका और रोबस्टा किस्म की खेती होती है। कहवा का पौधा चार साल में एक बार कली देता है।

7.रबड़ की फसल: रबड़ की खेती हमारी दिनचर्या में रबड़ का इस्तेमाल कहीं न कहीं जरूर होता है. रबड़ के विभिन्न उत्पाद आम जिंदगी से जुड़े हुए हैं। रबड़ एक उष्णकटिबंधीय पौधा है। इसका मूल स्थान अमेजन नदी (ब्राजील) माना जाता है। कुल रबड़ उत्पादन में ब्राजील का विश्व में पहला स्थान है जबकि भारत चौथे स्थान पर आता है। वहीं प्रति हे. उत्पादन में भारत का पहला स्थान है। भारत में सर्वाधिक रबड़ का उत्पादन केरल में होता है। ÷पारा÷ किस्म का रबड़ विश्व में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। रबड़ की खेती के लिए उच्च तापमान और धूप की आवश्यकता होती है। 200 सेमी से अधिक वर्षा और लैटेराइट और लाल मृदा का क्षेत्र उपयुक्त रहता है। जहां प्रति हैक्टेयर पेड़ों से रबड़ की रिकॉर्ड उत्पादन लिया जाता है. रबड़ की खेती के लिये गर्मी, धूप, सिंचाई, बारिश और लाल मृदा की जरूरत होती है. बता दें कि रबड़ की पारा किस्म सबसे ज्यादा डिमांड में रहती है. दक्षिण भारत और केरल में रबड़ का सबसे अधिक उत्पादन होता है.

8.अलसी की फसल: अलसी एक तिलहनी और रेशे वाली फसल है। इसे मुख्यतः दो उपयोगों के लिए उगाया जाता है, 1. तेल के लिए 2. रेशे के लिए। अलसी के तेल का उपयोग खाने, औषधिक उपयोग एवं अन्य विभिन्न प्रकार के औद्योगिक उत्पाद बनाने में किया जाता है। इसके तेल से पारदर्शी साबुन, पेंट, प्रिंटिंग इंक और वारनेश आदि बनाए जाते हैं। इसकी खली का उपयोग पशुओं को खिलाने के रूप में किया जाता है। भारत अलसी की खेती में पहले नंबर पर है। इसकी खेती मुख्य रूप से मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार, हिमाचल प्रदेश एवं महाराष्ट्र आदि राज्यों में की जाती है। अलसी की खेती ठंडी व शुल्क जलवायु और काली भारी एवं दामेट (मटियार) मिट्टियां बेहतर मानी गई हैं।

9.मूंगफली की फसल: मूंगफली मूल रूप से ब्राजील की फसल है। भारत में विश्व का 30 प्रतिशत भाग उत्पादित किया जाता हैं। भारत में खरीफ और जायद सीजन में मूंगफली की खेती की जाती है। देश में कुल तिलहन फसल उत्पादन का 45 प्रतिशत भाग मूंगफली से प्राप्त किया जाता है। प्रमुख मूंगफली उत्पादक राज्य गुजरात, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र तथा कर्नाटक हैं। इन राज्यों में मूंगफली की 85 प्रतिशत पैदावार होती है। मूंगफली का अधिकांश उपयोग तेल बनाने में किया जाता है। मूंगफली उष्णकटिबंधीय जलवायु का पौधा है। इसकी फसल को ज्यादा बारिश की जरुरत नहीं होती है। राजस्थान के कई जिलों में इसकी भरपूर खेती होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

जीन संपादन : एक परिचय

रवि कुमार सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

सूरज सिंह, राजेंद्र प्रसाद, राम अजीत चौधरी (शोध छात्र) चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

दीपक कुमार (शोध छात्र) छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

जीन संपादन या जीन एडिटिंग, एक ऐसी तकनीक है जिसके द्वारा किसी जीव के डीएनए को बदला जा सकता है। जीन एडिटिंग वैज्ञानिकों को एक विशिष्ट डीएनए अनुक्रम को लक्षित करने के लिए इंजीनियर किए गए एंजाइमों का उपयोग करके एक जीवित जीव के डीएनए में अत्यधिक विशिष्ट परिवर्तन करने की विशेष क्षमता देता है। ये एंजाइम डीएनए स्ट्रैंड में कटौती शुरू करते हैं जो मौजूदा डीएनए को हटाने में सक्षम बनाता है जिसे बाद में नए डीएनए से बदल दिया जाता है। अमेरिकी वैज्ञानिक जेनिफर डौडना और फ्रांसीसी वैज्ञानिक इमैनुएल चारपेंटियर ने जीन एडिटिंग की सुविधा देने वाली CRISPR-cas9 जैसी शक्तिशाली तकनीकों के आविष्कार के लिए सामूहिक रूप से रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार 2020 साझा किया।

जीन एडिटिंग क्या है?

- जीन डीएनए से बने होते हैं जो किसी की विरासत के बारे में प्रासंगिक जानकारी प्रदान कर सकते हैं।
- उनमें से कुछ निर्देश के रूप में कार्य करते हैं और अणुओं का निर्माण करते हैं जिन्हें प्रोटीन कहा जाता है। माता-पिता दोनों से विरासत में मिले प्रत्येक मानव शरीर में जीन के दो सेट होते हैं।
- किसी व्यक्ति के जीन में छोटे अंतर उनकी अलग पहचान में योगदान करते हैं।
- जीन एडिटिंग या जीनोम एडिटिंग एक हाई-एंड तकनीक है जो वैज्ञानिकों को किसी जीव के डीएनए को संशोधित करने की क्षमता देती है।
- इस पद्धति में जीवित जीव के जीनोम में विशिष्ट स्थानों पर डीएनए डाला, संशोधित या प्रतिस्थापित किया जाता है।
- CRISPR-Cas9 जीनोम एडिटिंग के लिए हालिया दृष्टिकोण है जो अन्य संपादन तकनीकों के बीच सबसे उन्नत और लागत प्रभावी तरीका है।
- 2018 में चीन के शेनझेन में दक्षिणी विज्ञान और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के एक शोधकर्ता और पूर्व-प्रोफेसर हे जियानकुई ने पहले आनुवंशिक रूप से संपादित शिशुओं हुला और नाना का निर्माण किया।

सीआरआईएसपीआर-कैस9 क्या है?

- CRISPR का मतलब है क्लस्टर्ड रेगुलरली इंटरस्पेस्ड शॉर्ट पालिंड्रोमिक रिपीट और कैस 9 प्रोटीन से जुड़ा है।
- यह एक जीन संपादन तकनीक है जो वैज्ञानिकों को विशिष्ट जीन स्थान को लक्षित करने और डीएनए अनुक्रमों को बदलने और संपादित करने में मदद करती है।
- इसके परिणाम स्वरूप, यह जीव में विशिष्ट जीन को बदल या संशोधित कर सकता है।
- क्लस्टर्ड रेगुलर इंटरस्पेस्ड शॉर्ट पैलिंड्रोमिक रिपीट (CRISPR) डीएनए या जेनेटिक कोड के सेक्शन हैं जिनमें बेस सीक्वेंस की छोटी पुनरावृत्ति होती है।
- कैस 9 एक CRISPR से जुड़ा प्रोटीन है जो एक एंजाइम है। यह आरएनए के उपयोग के साथ डीएनए के भीतर एक निर्दिष्ट स्थान पर एक डबल-स्ट्रैंड ब्रेक का परिचय देता है।
- CRISPR-Cas9 की कार्यप्रणाली
- CRISPR-Cas9 में ये दो प्रमुख अणु होते हैं
- Cas9 एंजाइमः यह आणविक कैंची है जो डीएनए के दो स्ट्रैंड्स को काटती है जहां डीएनए के बिट्स को जोड़ा या हटाया जा सकता है।
- **गाइड आरएनए:** यह आरएनए एक लंबे आरएनए मचान के भीतर डिज़ाइन किए गए आरएनए अनुक्रम के छोटे टुकड़ों से बना है। ये मचान Cas9 को जीनोम के दाहिने हिस्से में निर्देशित करते हैं।
- कैस 9 डीएनए अनुक्रम में स्थान के लिए गाइड आरएनए द्वारा पहचाने गए स्थान का अनुसरण करता है और डीएनए के दोनों पहलुओं में कटौती करता है।
- कोशिका इस प्रकार पहचानती है कि डीएनए क्षतिग्रस्त है और इसकी मरम्मत करने की कोशिश करती है।
- इस मरम्मत मशीनरी का उपयोग वैज्ञानिकों द्वारा एक या अधिक जीनों में परिवर्तन लाने हेतु किया जा सकता है।
- CRISPR Cas 9 ने कैंसर, हेपेटाइटिस बी और उच्च कोलेस्ट्रॉल जैसी चिकित्सीय स्थितियों में अच्छे परिणाम दिखाए हैं।
- स्टेम सेल अनुसंधान के लिए राष्ट्रीय दिशानिर्देशों द्वारा मानव जर्मलाइन संपादन और प्रजनन क्लोनिंग पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। फिर भी, इस फैसले को लागू करने वाला कोई कानून नहीं है।

जीन एडिटिंग का कार्य

डीएनए पर कार्य करने वाले न्यूक्लियेज नामक एंजाइम का उपयोग करने के लिए जीन संपादन के लिए उपलब्ध विभिन्न विधियाँ। इसमें शामिल सिद्धांत यह है कि एंजाइम को दो तरीकों से जीनोम में निर्दिष्ट लक्ष्य साइट पर निर्देशित किया जाता है:

- गाइड अनुक्रम
- विशिष्ट डीएनए बाध्यकारी डोमेन

एक बार जब न्यूक्लियस लक्ष्य डीएनए से बंध जाता है, तो ऐसे कई तरीके हैं जिनमें संपादन किया जा सकता है।

- यदि डबल-स्ट्रैंडेड ब्रेक हैं, तो उनकी मरम्मत गैर-होमोलॉगस एंड जॉइनिंग या होमोलॉजी-निर्देशित मरम्मत द्वारा की जाएगी।
- यदि लक्ष्य के समरूपता वाला एक नया डीएनए अनुक्रम प्रदान किया जाता है, तो होमोलॉजी डायरेक्टेड रिपेयर इसे डबल-स्ट्रैंडेड ब्रेक्स की मरम्मत के लिए एक टेम्पलेट के रूप में उपयोग करेगा।

जीन एडिटिंग के लाभ और हानियां

लाभ

- CRISPR भ्रूण में रोग पैदा करने वाले जीन को संशोधित कर सकता है और किसी व्यक्ति के भविष्य के आनुवंशिक कोड में दोषपूर्ण लिपियों को हटा सकता है। डायबिटीज और सिस्टिक फाइब्रोसिस को ऐसे ही खत्म किया जा सकता है।
- एक अनुवांशिक रोग को कम किया जा सकता है और समाप्त भी किया जा सकता है।
- स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थ बनाने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है क्योंकि जेनेटिक इंजीनियरिंग के उपयोग से ऐसा भोजन तैयार किया जा सकता है जो स्वास्थ्यवर्धक हो, पोषक तत्वों से भरपूर हो, और कठोर परिस्थितियों का सामना कर सके।
- आनुवंशिक संपादन मानव जीवनकाल को बढ़ा सकता है क्योंकि आनुवंशिक संपादन मानव स्वास्थ्य में गिरावट के लिए जिम्मेदार कारणों को उलट सकता है और इस प्रकार मानव जीवन की अवधि और गुणवत्ता दोनों को शैशवावस्था में ला सकता है।

हानियां

- परिवर्तन अपरिवर्तनीय हैं और एक जोखिम भरा मानव प्रयोग भी है
- इसे कभी-कभी अनैतिक माना जाता है क्योंकि CRISPR के उपयोग में एक छोटी सी गलती आने वाली पीढ़ियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है और यहां तक कि एक नई वंशानुगत बीमारी भी पेश कर सकती है।
- वांछित विशेषताओं में भी सुधार किया जा सकता है जैसे कि बुद्धि और आकर्षण जिससे समाज में असमानता और सामाजिक असमानता में वृद्धि हो सकती है। धनवान और ऐसी तकनीकों को वहन करने में सक्षम व्यक्ति अपने लाभ के लिए उनका उपयोग कर सकता है
- एक जीन को बदलने से दूसरे जीन भी प्रभावित हो सकते हैं। जिससे आने वाली पीढ़ियों के लिए अनपेक्षित परिणाम हो सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

किसानों की आय दोगुनी करने के लिए सहजन का मूल्य संवर्धन

नीरज कुमार प्रजापति उद्यानिकी विभाग,
बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

वर्तमान समय में किसानों की आय बढ़ाना एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय है। इस समस्या का समाधान खोजने के लिए, सहजन के मूल्य संवर्धन पर ध्यान केंद्रित करना महत्वपूर्ण है। सहजन एक बहुमूल्य पौधा है जिसका उपयोग खाद्य, औषधीय और कृषि उद्योगों में किया जा सकता है। इस लेख में, हम सहजन के विभिन्न उत्पादों के मूल्य संवर्धन के माध्यम से किसानों की आय को दोगुना करने के तरीकों का पता लगाएंगे।

सहजन की विशेषताएँ और उपयोग: सहजन एक बहुउपयोगी पौधा है जिसका उपयोग विभिन्न प्रकार से किया जा सकता है। सहजन के पत्ते, फूल, फल, बीज और जड़ें सभी खाद्य, औषधीय और औद्योगिक उद्देश्यों के लिए उपयोगी हैं। सहजन में प्रोटीन, विटामिन, खनिज और एंटीऑक्सीडेंट्स की उच्च मात्रा पाई जाती है, जो इसे एक पोषक और स्वास्थ्यवर्धक पौधा बनाती है। सहजन का उपयोग सूप, सलाद, रस, चिप्स और अन्य खाद्य उत्पादों में किया जा सकता है। इसके अलावा, सहजन का उपयोग दवाओं, कोस्मेटिक्स, बायोडीजल और अन्य औद्योगिक उत्पादों में भी किया जा सकता है।

किसानों की आय को दोगुना करने के लिए सहजन के मूल्य संवर्धन के तरीके

1. सहजन के पत्तों का मूल्य संवर्धन: सहजन के पत्तों का उपयोग विभिन्न प्रकार के खाद्य उत्पादों में किया जा सकता है। पत्तों का सूखा पाउडर बनाकर इसे चाय, समोसे, खीर, रसगुल्ले और अन्य भोजन में मिलाया जा सकता है। इससे न केवल पौष्टिकता बढ़ती है, बल्कि इसकी उपलब्धता और उपभोक्ता मांग भी बढ़ जाती है, जिससे किसानों की आय बढ़ जाती है।

सहजन पत्ते पाउडर के उत्पादन और विपणन से होने वाली आय

विवरण	मात्रा (किग्रा)	दर (रु. प्रति किग्रा)	कुल आय (रु.)
सहजन पत्ते	1000	200	2,00,000
श्रम लागत	-	50	50,000
अन्य लागत	-	20	20,000
कुल लागत	-	-	70,000
शुद्ध आय	-	-	1,30,000

2. सहजन के फूलों का मूल्य सवर्धन: सहजन के फूलों का उपयोग कई प्रकार के व्यंजनों और डिशों में किया जा सकता है। फूलों का सूखा पाउडर बनाकर इसका उपयोग चटनी, काढ़ा, सलाद और अन्य व्यंजनों में किया जा सकता है। इससे न केवल पोषण मूल्य बढ़ता है, बल्कि इसकी मांग भी बढ़ जाती है, जिससे किसानों की आय में वृद्धि होती है।

सहजन फूल पाउडर के उत्पादन और विपणन से होने वाली आय

विवरण	मात्रा (किग्रा)	दर (रु. प्रति किग्रा)	कुल आय (रु.)
सहजन फूल	500	300	1,50,000
श्रम लागत	-	80	40,000
अन्य लागत	-	30	15,000
कुल लागत	-	-	55,000
शुद्ध आय	-	-	95,000

3. सहजन के फलों का मूल्य संवर्धन: सहजन के फलों का उपयोग कई प्रकार के व्यंजनों और जूसों में किया जा सकता है। फलों को सूखा कर पाउडर बनाया जा सकता है, जिसका उपयोग कई उत्पादों में किया जा सकता है। इससे न केवल पोषण मूल्य बढ़ता है, बल्कि इसकी मांग भी बढ़ जाती है, जिससे किसानों की आय में वृद्धि होती है।

सहजन फल पाउडर के उत्पादन और विपणन से होने वाली आय

विवरण	मात्रा (किग्रा)	दर (रु. प्रति किग्रा)	कुल आय (रु.)
सहजन फल	800	150	1,20,000
श्रम लागत	-	40	32,000
अन्य लागत	-	20	16,000
कुल लागत	-	-	48,000
शुद्ध आय	-	-	72,000

4. सहजन के बीजों का मूल्य संवर्धन: सहजन के बीजों से तेल और बायोडीजल उत्पादित किया जा सकता है। बीजों से प्राप्त तेल का उपयोग खाद्य और कोस्मेटिक उत्पादों में किया जा सकता है। इससे न केवल अतिरिक्त आय प्राप्त होती है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी मदद मिलती है।

सहजन बीज तेल के उत्पादन और विपणन से होने वाली आय

विवरण	मात्रा (किग्रा)	दर (रु. प्रति किग्रा)	कुल आय (रु.)
सहजन बीज	1000	80	80,000
श्रम लागत	-	20	20,000
अन्य लागत	-	10	10,000
कुल लागत	-	-	30,000
शुद्ध आय	-	-	50,000

5. सहजन के पत्तों का ताजा उपयोग: ताजे सहजन पत्तों का उपयोग सलाद, स्मूदी और अन्य व्यंजनों में किया जा सकता है। ताजे पत्तों की बिक्री से किसानों को अच्छी आय प्राप्त हो सकती है।

ताजे सहजन पत्तों की बिक्री से होने वाली आय

विवरण	मात्रा (किग्रा)	दर (रु. प्रति किग्रा)	कुल आय (रु.)
ताजे सहजन पत्ते	2000	50	1,00,000
श्रम लागत	-	10	20,000
अन्य लागत	-	5	10,000
कुल लागत	-	-	30,000
शुद्ध आय	-	-	70,000

6. सहजन के फलों का ताजा उपयोग: ताजे सहजन फलों का उपयोग सब्जियों, फलों और अन्य व्यंजनों में किया जा सकता है। ताजे फलों की बिक्री से किसानों को अच्छी आय प्राप्त हो सकती है।

ताजे सहजन फलों की बिक्री से होने वाली आय

विवरण	मात्रा (किग्रा)	दर (रु. प्रति किग्रा)	कुल आय (रु.)
ताजे सहजन फल	3000	30	90,000
श्रम लागत	-	8	24,000
अन्य लागत	-	4	12,000
कुल लागत	-	-	36,000
शुद्ध आय	-	-	54,000

7. सहजन आधारित कोस्मेटिक उत्पादों का उत्पादन: सहजन के पत्ते, फूल और बीज से कई कोस्मेटिक उत्पाद जैसे क्रीम, तेल, साबुन आदि बनाए जा सकते हैं। इन उत्पादों की बिक्री से किसानों को अच्छी आय प्राप्त हो सकती है।

सहजन आधारित कोस्मेटिक उत्पादों के उत्पादन और विपणन से होने वाली आय

विवरण	मात्रा (किग्रा)	दर (रु. प्रति किग्रा)	कुल आय (रु.)
सहजन के कोस्मेटिक उत्पाद	500	300	1,50,000
सामग्री लागत	-	100	50,000
श्रम लागत	-	50	25,000
अन्य लागत	-	20	10,000
कुल लागत	-	-	85,000
शुद्ध आय	-	-	65,000

इन सभी तरीकों का उपयोग करके किसानों की आय को बढ़ाया जा सकता है। सहजन के विभिन्न उत्पादों के मूल्य संवर्धन से न केवल किसानों की आय बढ़ेगी, बल्कि पोषण और स्वास्थ्य लाभ भी प्राप्त होंगे। इसके अलावा, पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान मिलेगा। इस प्रकार, सहजन का मूल्य संवर्धन किसानों की आय को दोगुना करने का एक महत्वपूर्ण और बहुआयामी उपाय है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

मवेशियों की निगरानी के लिए कृत्रिम तकनीकें

विशाल कुमार (शोध छात्र) डेयरी विज्ञान और खाद्य प्रौद्योगिकी विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी (उ.प्र.)

आकांक्षा (स्नातकोत्तर छात्रा) डेयरी विज्ञान और खाद्य प्रौद्योगिकी विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

परिचय: वैश्विक जनसंख्या वृद्धि जैसे कई कारकों के कारण पशु प्रोटीन की मांग बढ़ रही है बढ़ती आय, आदि। हालांकि, पारंपरिक अभ्यास, जलवायु के मिश्रण के कारण खेती की उत्पादकता स्थिर हो रही है परिवर्तन, सामाजिक-आर्थिक और पर्यावरणीय घटनाएँ। बुद्धिमान धारणा के साथ, सटीक पशुधन खेती इसके मूल में उपकरण, और विभिन्न सेंसरों या प्लेटफार्मों से बड़ी मात्रा में डेटा प्राप्त करने की क्षमता है बेहतर प्रबंधन और कृषि उत्पादकता में नाटकीय रूप से वृद्धि करने की क्षमता के लिए व्यक्तिगत पशु का विश्लेषण करें। अनुसंधान को सुविधाजनक बनाने और संबंधित क्षेत्रों के विकास को बढ़ावा देने हेतु, यह समीक्षा संक्षेप में प्रस्तुत करती है पहचान से संबंधित तकनीकों पर ध्यान केंद्रित करते हुए सटीक पशु पालन में उपयोग की जाने वाली मुख्य मौजूदा तकनीकों का विश्लेषण करता है, शरीर की स्थिति स्कोर मूल्यांकन, और लाइव वजन अनुमान।

मवेशी की पहचान: मवेशियों की पहचान व्यक्तिगत पशु स्तर प्रबंधन को सक्षम बनाती है। अलग-अलग जानवरों को पहचानने और पहचानने की क्षमता एक पूर्वापेक्षा है प्रति-पशु आधारित पीएलएफ के लिए, एसोसिएशन और ट्रैकिंग की अनुमति देता है समय के साथ किसी व्यक्ति के लिए प्रासंगिक सुविधाएँ। विभिन्न व्यक्तिगत मवेशियों की पहचान के लिए उपकरण और तरीके प्रस्तावित किए गए हैं मैन्युअल से स्वचालित तरीकों तक ईयर-टैग आधारित दृष्टिकोण ।

दृश्यमान ईयर टैगिंग और रेडियो फ्रीक्वेंसी आइडेंटिफिकेशन (आरएफआईडी) उपकरण आमतौर पर मवेशियों की पहचान करने के लिए उपयोग किया जाता है। दृश्यमान कान टैगिंग विधि एक नंबर के साथ एक प्लास्टिक लेबल का उपयोग करती है जिसे पंचर द्वारा नस्लों के कान से जोड़ा जाता है। दृश्य कान टैग में समस्या हो सकती है अवधारण। हाल ही में, पशुधन खेती में आरएफआईडी उपकरणों का व्यापक रूप से उपयोग किया गया है व्यक्तिगत पहचान, दूध और मांस का पता लगाने के लिए।

पारंपरिक ईयर-टैग आधारित मवेशी पहचान प्रणालियों के साथ एक आम समस्या उपकरणों को जानवरों से मैन्युअल रूप से जोड़ने की लागत और आवश्यकता है। इसके अलावा, चुनौतीपूर्ण वातावरण में बड़ी संख्या में जानवरों की निगरानी में इसकी विश्वसनीयता खराब हो सकती है ।

बायोमेट्रिक और विज़ुअल फ़ीचर-आधारित दृष्टिकोण: चूंकि प्रत्येक जानवर में अद्वितीय बाहरी विशेषताएं होती हैं जैसे थूथन पैटर्न, रेटिना संवहनी पैटर्न और कोट पैटर्न, बायोमेट्रिक और दृश्य सुविधा आधारित दृष्टिकोण कंप्यूटर विज़न और डेटा विश्लेषण के माध्यम से, तेजी से पेशकश की जा सकती है और जानवरों या प्रजातियों की पहचान के लिए सुरक्षित समाधान। मौजूदा दृष्टिकोण, उनकी अपनाई गई विशेषताओं के अनुसार, तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है-मवेशी का थूथन, रेटिना और आईरिस, चेहरे और कोट का पैटर्न।

मवेशी थूथन पैटर्न-आधारित दृष्टिकोण: मवेशियों के थूथन पैटर्न की विशिष्टता को तब से मान्यता दी गई है1922. थूथन छवियों को डिजिटल का उपयोग करके एकत्र किया जा सकता है कैमरे (लाइव-कैप्चर की गई छवियां), फिर पैटर्न विवरण के लिए उपयोग किया जाता है। कई मामलों में, फ़ीचर-विवरण एल्गोरिदम जैसे स्केल-इनवेरिएंट फ़ीचर ट्रांसफ़ॉर्म या स्पीड-अप रोबस्ट फ़ीचर हैं कार्यरत । इस बीच, सुविधाएँ जैसे स्थानीय बाइनरी पैटर्न और गैबोर का उपयोग मवेशियों की पहचान के लिए भी किया जाता है ।

चेहरे और कोट पैटर्न आधारित दृष्टिकोण: फेशियल निकालने के लिए मशीन लर्निंग तरीकों को भी अपनाया गया है और/या कोट की विशेषताएं, जिनका उपयोग आगे व्यक्तिगत जानवर हेतु किया जाता है पहचान स्थानीय विशेषताएँ निकालीं चेहरे की छवियों से और फिर इन्हें मवेशियों की पहचान के लिए मशीन लर्निंग मॉडल में डाला गया। मुख्य विशेषताएं (उदाहरण के लिए, पिक्सेल तीव्रता) व्यक्तिगत मवेशियों की पहचान करने के लिए, परिणामी सटीकता से अधिक के साथ 5000 मवेशियों के चेहरे की छवियों पर 85त्न पहचानने के लिए स्थानीय कोट डिस्क्रिप्टर और सपोर्ट वेक्टर मशीन का उपयोग किया गया। व्यक्तिगत मवेशी- इसके अलावा एक गाय त्रि-आयामी वीडियो विश्लेषण के आधार पर पहचान विधि आरजीबी-डी कैमरे। प्रस्तावित दृष्टिकोण ने चाल और बनावट को एकीकृत किया पहचान हेतु सुविधाएँ, जिसने 84.2% सटीकता हासिल की।

गहन शिक्षण आधारित दृष्टिकोण: शक्तिशाली फीचर निष्कर्षण के साथ गहन शिक्षण दृष्टिकोण और छवि प्रतिनिधित्व क्षमता ने दृश्य के कार्यों में लोकप्रियता हासिल की है पहचान, छवि विभाजन,और स्वचालित दृश्य सुविधा निष्कर्षण इसे हाल ही में मवेशियों की पहचान के उद्देश्यों के लिए लागू किया गया है किसी भी विशेषता के पूर्व-विनिर्देश की आवश्यकता के बिना।

हालाँकि, गहन शिक्षण दृष्टिकोण को दो चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। सबसे पहले, गहन शिक्षण मॉडल के प्रशिक्षण के लिए बड़े पैमाने की आवश्यकता होती है डेटासेट हालाँकि डेटा संवर्द्धन तकनीकें प्रशिक्षण नमूनों को बढ़ा सकती हैं फ्लिपिंग या रोटेशन के माध्यम से, वास्तव में कम से कम कई सैकड़ों या यहां तक कि जटिलता के आधार पर हजारों छवियों की भी आवश्यकता होती है कार्यों और सटीकता की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, गहन शिक्षण-आधारित पहचान दृष्टिकोण अक्सर सामान्यीकरण में सीमाओं का अनुभव करते हैं नए डेटासेट या अन्य प्रकार के जानवर।

मवेशी के शरीर की स्थिति का स्कोर: बॉडी कंडीशन स्कोर (बीसीएस) सबसे महत्वपूर्ण संकेतकों में से एक है पशु कल्याण के लिए जो मवेशियों के मोटापे/पतलेपन को दर्शा सकता है,उनकी उत्पादकता, स्वास्थ्य और दीर्घायु बीसीएस के निम्न मूल्यों को आम तौर पर माना जाता है स्वास्थ्य जोखिमों, निम्न उत्पादकता स्तर और ख़राब गर्भावस्था का संकेत दरबीसीएस में कमर, दुम, पिन हड्डियां, कंद त्रिक (हुक) और पूंछ सिर शामिल हैं। बीसीएस प्रणाली आमतौर पर 5-बिंदु पैमाने का उपयोग करती है 0.25 या 0.5 अंक की वृद्धि (1 दुर्बल मवेशियों का प्रतिनिधित्व करता है और 5 मोटे मवेशियों का प्रतिनिधित्व करता है)। परंपरागत रूप से, बीसीएस आमतौर पर किसी अनुभवी द्वारा मैन्युअल रूप से प्राप्त किया जाता है किसान स्पर्श या दृश्य विधियों का उपयोग कर रहा है। हालाँकि, मैन्युअल विधि हेतु अनुभवी किसानों की आवश्यकता होती है और इसमें समय भी लगता है. इसके अलावा, परिणाम व्यक्तिपरक हैं जो बाहरी वातावरण और से प्रभावित होने की संभावना रखते हैं अनुभव। इसलिए, वस्तुनिष्ठ, सटीक की तत्काल मांग हैऔर मजबूत बीसीएस माप ।

निष्कर्ष: पशु कल्याण के लिए पीएलएफ के लिए मवेशियों की पहचान महत्वपूर्ण हो गई है निगरानी, रोग नियंत्रण, टीकाकरण प्रबंधन, उत्पादन आपूर्ति, और स्वामित्व प्रबंधन। परंपरागत मवेशियों की पहचान के लिए कान में टैग लगाने या गोदने के तरीके असुरक्षित हैं हानि, क्षति और लुप्त होने के लिए। आरएफआईडी पहचान प्रणाली प्रदान करते हैं शास्त्रीय की तुलना में नाटकीय लाभ और परिचालन सुधार तरीके, लेकिन इसमें कई सुरक्षा और गोपनीयता चुनौतियाँ शामिल हैं जो प्रस्तुत करती हैं ऐसी कोई भी प्रणाली विभिन्न जोखिमों के प्रति संवेदनशील होती है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

युवाओं में तनाव : कारण, लक्षण एवं उपाय

अदिति दत्त (शोध छात्रा) मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग, होम साइंस महाविद्यालय, चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं तकनीकि विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

आकृति दत्त तकनीकी सहायक, जिला कृषि विभाग, आजमगढ़ (उ.प्र.)

आजकल युवा तनाव, चिंता, तीव्र भय और आशंका का अनुभव करते हैं। कोविड-19 के कारण तनाव बढ़ गया है। खराब जीवन शैली और नौकरी के दबाव के कारण, युवा आजकल अधिक चिंतित हैं। अत्यधिक मानसिक या शारीरिक तनाव का नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मानसिक स्वास्थ्य तनाव से सीधे प्रभावित होता है। दबाव हर किसी को प्रभावित करता है, लेकिन आप इसे कैसे संभालते हैं, यह अधिक मायने रखता है। विशेषज्ञों का कहना है कि थोड़ा तनाव लोगों के लिए फायदेमंद होता है, लेकिन अधिक तनाव मन के लिए बुरा होता है। पहले तनाव बच्चों को प्रभावित नहीं करता था, लेकिन अब यह होता है। 9-12 साल के बच्चे अब कहते हैं कि वे तनावग्रस्त हैं। पढ़ाई का बोझ और पढ़ाई की आदत इसके लिए जिम्मेदार हैं। शोध से पता चलता है कि वयस्कों की तुलना में किशोर अधिक चिंतित होते हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि दोनों आयु समूहों में मानसिक स्वास्थ्य के मुद्दे बढ़ रहे हैं। यह बड़े पैमाने पर वयस्कों में देखा गया था, लेकिन तेजी से किशोर और बच्चे प्रभावित हो रहे हैं।

तनाव के सामान्य लक्षण: सिरदर्द, कम ऊर्जा, चक्कर आना, दांत पीसना, मनोदशा में परिवर्तन, चिंता, कम सेक्स ड्राइव, पाचन संबंधी समस्या, नींद संबंधी समस्या ।

तनाव के प्रकार

दीर्घकालिक तनाव: इस तरह का तनाव स्थायी होता है और अक्सर काम के कारण होता है। यह परेशान करने वाली यादों के कारण भी हो सकता है।

एपिसोडिक तीव्र तनाव: यह अल्पकालिक तनाव व्यक्ति के लिए फायदेमंद हो सकता है।

यूस्ट्रेस: उत्तेजक और असाधारण तनाव। एड्रेनालाईन प्रवाह से जुड़ा हुआ होता है। सकारात्मक तनाव व्यक्तियों को ऊर्जावान बनाता है।

तनाव और चिंता: तनाव और चिंता समान हैं। चिंता अत्यधिक तनाव से आती है। चिंता तनाव प्रबंधन को कठिन बनाती है। चिंता पेट की समस्याओं, दुख और बीमारी का कारण बन सकती है। यह मांसपेशियों में तनाव, उच्च रक्तचाप और खराब नींद का कारण बनता है। विशेषज्ञों का कहना है कि तनाव आंतरिक बेचैनी का कारण बनता है। तनाव शरीर को छोड़ देता है, लेकिन चिंता बनी रहती है।

तनाव के प्रभाव: मानव स्वास्थ्य को तनाव से काफी नुकसान होता है। यह रोजमर्रा के जीवन में बाधा डालता है, संबंधों को नुकसान पहुंचाता है और स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाता है। अत्यधिक तनाव में, लोग उचित रूप से कार्य करते हैं। हालांकि मामूली तनाव झुंझलाहट और चिंता का कारण बन सकता है, लगातार तनाव अवसाद, चिंता, विकार और जलन का कारण बन सकता है। तनाव के कारण होने वाली समस्याओं में शामिल हैं: मधुमेह और अल्सर, ओबेसिटी, हृदय रोग, बालों का झड़ना, यौन अक्षमता, हाइपरथायराइडिज्म ।

सरल तनाव निवारक : हर किसी को तनाव होता है, लेकिन इसे नियंत्रित किया जा सकता है। इन आसान चरणों से तनाव को कम किया जा सकता है:

नियमित रूप से व्यायाम करें: दुनिया भर के विशेषज्ञ और वैज्ञानिक लगातार व्यायाम करने की सलाह देते हैं। उनका कहना है कि सरल व्यायाम तनाव को कम करते हैं। संभावित कसरतों में दौड़ना, लंबा चलना, स्ट्रेचिंग, स्किपिंग, लीपिंग, पुल-अप और पुश-अप शामिल हैं। नियमित बुनियादी गतिविधियाँ मानसिक स्वास्थ्य को संतुलित करती हैं।

बर्नआउट लक्षण: अत्यधिक बर्नआउट तनाव को बहुत बढ़ा देती है। बर्नआउट भावनात्मक या शारीरिक थकान है जो संतुष्टि और पहचान को कम करती है। अवसाद भी बर्नआउट का कारण बनता है। जब आप भावनात्मक रूप से थका हुआ महसूस करते हैं, तो यह तनाव से निपटने का समय होता है। तनाव को कम करने के लिए, दैनिक स्व-देखभाल गतिविधियों को अपनी दिनचर्या में शामिल करें। अपने शरीर, मन और आत्मा को आराम दें और तरोताजा करें। पूरी तरह से जीने का तरीका खोजें।

ध्यान का अभ्यास करें: माइंडफुलनेस चेतना की एक बुनियादी स्थिति है। अपना दिन बिताने के लिए विचारशील तरीके खोजें।

तनाव दूर करने का उपाय: इस समस्या का कोई इलाज नहीं है। तनाव के लक्षणों को कम करने के लिए दवाएं दी जाती हैं। इनमें अवसादरोधी, एंटासिड, नींद सहायक और चिंता-रोधी दवाएं शामिल हैं। मनोचिकित्सा, जैसे कि माइंडफुलनेस-बेस्ड स्ट्रेस रिडक्शन (एमबीएसआर) और कॉग्निटिव बिहेवियरल थेरेपी (सीएटी) प्रभावी रूप से तनाव का प्रबंधन कर सकते हैं। एमबीएसआर माइंडफुलनेस और मेडिटेशन के माध्यम से तनाव को कम करता है। संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा में सकारात्मक भावनाओं और नकारात्मक भावनाओं से बचने का उपयोग किया जाता है।

पूरक और वैकल्पिक चिकित्सा: ध्यान, योग, एक्यूपंक्चर, मालिश और अरोमाथेरेपी तनाव के स्तर को कम कर सकते हैं।

माता-पिता द्वारा तनाव प्रबंधन: माता-पिता और करीबी दोस्त चिंतित, दुखी और चिंतित व्यक्तियों की मदद करते हैं। माता-पिता के संपर्क में कमी और पारिवारिक परेशानियां तनाव पैदा कर सकती हैं, लेकिन वे बच्चों के तनाव को भी कम कर सकती हैं। स्वस्थ जीवन और तनाव प्रबंधन उनके बच्चों के जीवन को रोशन कर सकता है। युवा नकारात्मक विचारों से ग्रस्त होते हैं, जैसे 'मैं अंकगणित में भयानक हूं', 'मेरा जीवन नरक बन गया है', और 'दुनिया में कुछ भी अच्छा नहीं है'। अपने बच्चों को याद दिलाएँ कि उन्होंने अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिए कड़ी मेहनत की और बच्चों के समान समस्याओं का सामना किया।

युवाओं को खुद से लड़ने दें: स्वाभाविक रूप से माता-पिता अपने बच्चों की समस्याओं को हल करना चाहते हैं। हर कदम पर अपने बच्चे की मदद करना उसे सामना करना सीखने से रोकता है। अपने युवाओं को कम जोखिम वाली चुनौतियों को हल करने के लिए कहें। वे निराशाओं से निपटने में आत्मविश्वास प्राप्त करेंगे। आनंद के लिए समय निकालें-हर किसी को आराम करने की जरूरत है, इसलिए आनंददायक गतिविधियों का समय निर्धारित करें। एक आदर्श के रूप में, माता-पिता अपने बचपन से समस्याग्रस्त स्थितियों के साथ अपने अनुभवों को साझा कर सकते हैं। उनके युवा प्रेरित होंगे।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला–ग्वालियर (म.प्र.)

04/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

रिंग पिट विधि से गन्ने की बुवाई : उत्तर प्रदेश के किसानों के लिए एक लाभदायक तकनीक

श्रीगोविन्द, कपिल गौतम (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

केशव बाबू (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि. कानपुर

रवि दीक्षित (शोध छात्र) बीज विज्ञान एवं प्रौ. विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

रिंग पिट विधि गन्ने की बुवाई का एक आधुनिक तरीका है। यह विधि पारंपरिक तरीकों से अधिक कुशल और लाभदायक है। गन्ना भारत में व्यापक रूप से उगाई जाने वाली फसल है। गन्ने को रोपण की बेहतर विधि जैसे कि पिट प्लांटिंग द्वारा लगाया जा सकता है, जो गन्ने की उपज को दोगुना कर सकती है। गन्ने को गोलाकार आकार के गड्ढों में लगाया जाता है, इसलिए इस विधि को %रिंग-पिट प्लांटिंग% कहा जाता है। गन्ने की फसल में मदर शूट और टिलर शामिल होते हैं। चूँकि मदर शूट के उभरने के लगभग 45 से 60 दिनों के बाद टिलर उभरने लगते हैं, इसलिए ये तुलनात्मक रूप से कमज़ोर होते हैं और अंत में कम लंबाई, परिधि और वजन वाले मिल योग्य गन्ने बनते हैं। इसलिए, एक ही स्थान पर अधिक संख्या में मदर शूट को समायोजित करने के लिए, गन्ने के टिलर को दबाने की आवश्यकता होती है।

खेत की तैयारी: खेत को अच्छी तरह से जुताई और बारीक कर लें। मिट्टी में पर्याप्त नमी होनी चाहिए, खरपतवारों को हटा दें।

गड्ढा खोदना: इन रेखाओं के प्रत्येक क्रॉसिंग बिंदु पर, यदि उपलब्ध हो या मैन्युअल रूप से गड्ढा खोदने वाले यंत्र से 75 सेमी व्यास और 30 सेमी गहराई वाले गड्ढे खोदें। प्रत्येक गड्ढे की परिधि पर खोदी गई मिट्टी रखें। एक हेक्टेयर क्षेत्र में, लगभग 9000 गड्ढे बनाए जाते हैं। गड्ढों को इस तरह बनाएं कि पानी निकल सके और मिट्टी में जमा न हो। यदि पानी जमा हो जाता है, तो यह जड़ों को सड़ने और पौधों को मरने का कारण बन सकता है। गड्ढों को थोड़ी ढलान के साथ बनाना चाहिए ताकि पानी आसानी से निकल सके।

सेट कटिंग और उपचार: अनुशंसित किस्म के बीज वाले गन्ने का चयन करें। स्वस्थ कलियों वाले गन्ने का चयन करें जो कीटों और बीमारियों से मुक्त हों। गन्ने को 2 कलियों वाले सेट में काटें। 100 लीटर पानी में 200 ग्राम बाविस्टिन घोलकर घोल तैयार करें। कटे हुए पौधों को 10-15 मिनट के लिए बाविस्टिन के घोल में डुबोकर रखें, ताकि पौधे जनित रोगों पर नियंत्रण पाया जा सके। स्वस्थ और रोगमुक्त गन्ने के बीज का चुनाव करें, 2 आंखों वाले बीजों का उपयोग करें।

रोपण : प्रत्येक गड्ढे में 3 किलोग्राम FYM, 8 ग्राम यूरिया, 20 ग्राम डीएपी, 16 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश (MOP), 2 ग्राम जिंक सल्फेट डालें। इसे मिट्टी में अच्छी तरह मिलाएँ। प्रत्येक गड्ढे में 20 दो-कली (2 आंखों वाले) उपचारित पौधे साइकिल के पहिये में स्पोक के समान पैटर्न में रखें।

पौधे की स्थिति: दीमक और आर्मी वर्म को नियंत्रित करने हेतु एक हे. क्षेत्र में 1500-1600 लीटर पानी में 5 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ईसी घोल का छिड़काव करें। 200 किग्रा. एफवाईएम या प्रेस मड के साथ 20 किग्रा. ट्राइकोडर्मा को प्रति हेक्टेयर सेट पर डालें। अब सेट को 3-4 सेमी मिट्टी की परत से ढक दें। यदि मिट्टी की नमी अंकुरण के लिए पर्याप्त नहीं है, तो रोपण के तुरंत बाद इंटरकनेक्टेड चैनल के माध्यम से हल्की सिंचाई करें।

अतर-संस्कृति संचालन: मिट्टी की नमी काम करने योग्य स्थिति में पहुंचने पर मिट्टी की परत को तोड़ दें। मिट्टी और मौसम की स्थिति के आधार पर, 20-25 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई करें। आवश्यकतानुसार गड्ढों में निराई करें। जून के तीसरे सप्ताह में प्रति गड्ढे 16 ग्राम यूरिया डालें। जून के अंतिम सप्ताह में, शीर्ष बोरर को नियंत्रित करने के लिए प्रति हेक्टेयर 33 किलोग्राम फ्यूराडान 3ज डालें। यूरिया और फ्यूराडान के आवेदन के बीच कम से कम 3-4 दिनों का अंतर रखें। जून के अंतिम सप्ताह तक गड्ढों को खोदी गई मिट्टी से पूरी तरह भर दें। मानसून आने से पहले मिट्टी चढ़ा दें। अगस्त के पहले पखवाड़े में प्रत्येक गड्ढे के गन्ने को निचली सूखी पत्तियों के साथ बांध दें। सितंबर में विपरीत पंक्तियों के गुच्छों को एक साथ बांध दें। अगस्त-सितंबर के महीनों के दौरान निचली सूखी पत्तियों को हटा दें। अच्छी अगली पेड़ी फसल लेने और उपज हानि से बचने के लिए गन्ने की कटाई ज़मीन के स्तर के करीब करें। रिंग पिट विधि से 1200 क्विं. से अधिक प्रति एकड़ गन्ना उत्पादन।

रिंग पिट विधि के लाभ

पानी की बचत: रिंग पिट विधि में, पानी गड्ढों में जमा होता है और धीरे-धीरे पौधों तक पहुंचता है। यह पारंपरिक तरीकों की तुलना में पानी की हानि को कम करता है, जहाँ पानी खेत में फैल जाता है और वाष्पीकरण हो जाता है। गड्ढों में मिट्टी ढीली रहती है, जिससे पानी का रिसाव बेहतर होता है और जड़ों तक अधिक पानी पहुंचता है। सिंचाई की मात्रा और आवृत्ति को मिट्टी की नमी और फसल की जरूरतों के अनुसार समायोजित किया जा सकता है, जिससे पानी की बचत होती है।

खरपतवार नियंत्रण में आसानी: गड्ढों में खरपतवारों का उगना मुश्किल होता है, क्योंकि वे सीधी धूप और हवा के संपर्क में नहीं आते हैं। गड्ढों के बीच की जगह को ढीला रखने से खरपतवारों को अंकुरित होने से रोका जा सकता है। निराई-गुड़ाई कम करने की आवश्यकता होती है, जिससे समय और श्रम की बचत होती है।

उर्वरक का बेहतर उपयोग: रिंग पिट विधि में, उर्वरक गड्ढों में डाला जाता है और जड़ों के पास केंद्रित होता है। इससे उर्वरक का बेहतर उपयोग होता है और पोषक तत्वों का अपव्यय कम होता है। उर्वरक की मात्रा और प्रकार को मिट्टी की उर्वरता और फसल की जरूरतों के अनुसार समायोजित किया जा सकता है, जिससे उर्वरक की बचत होती है।

रोगों और कीटों का कम प्रकोप: गड्ढों में नमी का स्तर नियंत्रित रहता है, जिससे फफूंद रोगों का प्रकोप कम होता है।

उत्पादन में वृद्धि: पानी, खरपतवार नियंत्रण, उर्वरक और रोग-कीट नियंत्रण में सुधार से पौधों का स्वस्थ विकास होता है। पौधों को पर्याप्त जगह और पोषक तत्व मिलते हैं, जिससे उपज में वृद्धि होती है। गन्ने के डंठल मोटे और भारी होते हैं, जिससे चीनी की मात्रा बढ़ जाती है।

लागत में कमी: पानी, खाद और उर्वरक की बचत से लागत कम होती है। निराई-गुड़ाई और रोग-कीट नियंत्रण में कमी से श्रम लागत कम होती है। उच्च उपज और बेहतर गुणवत्ता वाली फसल से किसानों को अधिक लाभ होता है।

अधिक उपज: इस विधि से, पारंपरिक तरीकों की तुलना में गन्ने की उपज 1.5-2.0 गुना बढ़ जाती है। रोपण की गड्ढा प्रणाली सबसे अच्छी उपज दे सकती है। एसएसआई अधिक उपज का पक्षधर हो सकता है।

जल की बचत: सिंचाई जल की बचत 30-40 प्रतिशत तक होती है, क्योंकि केवल गड्ढों की सिंचाई की जाती है तथा पंक्तियों के बीच की जगह की सिंचाई नहीं की जाती।

उच्च इनपुट उपयोग दक्षता: केवल गड्ढों में स्थानीयकृत अनुप्रयोग के कारण जल उपयोग दक्षता 30-40 प्रतिशत तथा पोषक तत्व उपयोग दक्षता 30-35 प्रतिशत तक बढ़ जाती है।

उच्च चीनी प्राप्ति: मातृ प्ररोहों के कारण चीनी प्राप्ति में 0.5 इकाई तक की वृद्धि होती है। मातृ प्ररोहों से प्राप्त मिल योग्य गन्ने, टिलर से प्राप्त गन्ने की तुलना में अधिक चीनी प्राप्ति देते हैं।

उच्च लाभप्रदता: अधिक गन्ना उपज तथा अधिक पेड़ी तथा अधिक चीनी प्राप्ति के कारण किसानों तथा मिल मालिकों का लाभ बढ़ जाता है।

बेहतर पेड़ी योग्यता: किसान 3-4 पेड़ी सफलतापूर्वक ले सकते हैं।

कम गिरना: अधिक गहराई पर रोपण के कारण पेड़ों का गिरना तथा उखड़ना कम होता है।

जय शीतला खाद बीज भण्डार
उच्च क्वालिटी के बीज, कीटनाशक दवाईयां एवं खाद के थोक व खेरीज विक्रेता
विवेक सिंह (लोहगढ़ वाले)
मोबाइल : 9425116760, 7000820097
आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के पास, जवाहरगंज, डबरा, जिला-ग्वालियर
03/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

संरक्षण कृषि : एक आधुनिक कृषि विधि

शिवम् कौशिक (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

प्रवीण कुमार (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

सिद्रा किदवई (शोध छात्रा) सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

सौरभ भारती (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

तनु शर्मा (परास्नातक छात्रा) सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

इतिहास

पुराने काल में खेती के विकास में पानी, उर्वरक और ऊर्जा का अधिक इस्तेमाल करने वाली तकनीकों का महत्वपूर्ण योगदान था। लेकिन समय बदल रहा है। आज कृषि के विकास के साथ-साथ इस बात का भी खास ख्याल रखा जा रहा है कि इनका कम से कम इस्तेमाल किया जाए, ताकि लागत कम होने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण की सेहत पर भी इसका बुरा असर न हो। 2000 के आसपास इस नई खेती की शुरुआत हुई थी।

कृषि एक ऐसा क्षेत्र है जो हमारे जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। हम सभी जानते हैं कि खाद्य संसाधनों की अधिकता के समय में, आदर्श तरीके से खेती करना अत्यंत जरूरी है। लेकिन, ऐसा कैसे किया जा सकता है? जब हम बड़े पैमाने पर खेती करते हैं, तो परंपरागत तरीके से खेती करने के लिए योग्य साधनों की भरमार होती है, जो अक्सर पर्याप्त नहीं होती है। इसी समस्या का समाधान करने के लिए, आधुनिक कृषि के क्षेत्र में 'संरक्षण कृषि' का उदय हुआ है। संरक्षण कृषि एक ऐसी कृषि पद्धति है जो भूमि के संरक्षण, परिस्थिति के प्रति सचेतता, और उत्पादकता को बढ़ावा देती है। यह एक आधुनिक और सतत प्रणाली है जो भूमि को स्वस्थ और पौधों को पोषण से भरा रखती है। इसका उद्देश्य खेती के प्रदूषण को कम करना, जैव विविधता को बढ़ावा देना, और उत्पादकता में वृद्धि करना है।

संरक्षण कृषि क्या है?

संरक्षण कृषि (सीए) मिट्टी के स्वास्थ्य और उत्पादकता को बनाए रखने के लिए प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को प्राथमिकता देने वाली कृषि प्रणाली है। इसमें तीन प्रमुख सिद्धांत शामिल हैं:

न्यूनतम मृदा से छेड़छाड़: कम से कम जुताई या बिना जुताई वाली तकनीकें मिट्टी के ढांचे को बनाए रखती हैं और मृदा अपरदन को रोकती हैं।

स्थायी वनस्पति आवरण: खेतों में फसल अवशेषों को मल्च के रूप में प्रयोग किया जाता है या जायद फसलें उगाई जाती हैं, जिससे मिट्टी की नमी बनी रहती है और खरपतवार नियंत्रण में मदद मिलती है।

विविधीकरण: विभिन्न फसलों का चक्र या मिश्र फसलें उगाने से मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है और कीटों एवं रोगों का प्रकोप कम होता है।

संरक्षण कृषि के मुख्य सिद्धांतों में से एक है कि यह भूमि के संरक्षण को प्राथमिकता देती है। इसका मतलब है कि खेती की प्रक्रिया में ऐसे तरीके का चयन किया जाता है जो भूमि को क्षति से बचाते हैं, जैसे कि भूमि की क्षमता को बनाए रखना, भूमि के अनुकूल तापमान और नमी

को बनाए रखना, और भूमि की असमानता को कम करना। इसके अलावा, संरक्षण कृषि भूमि की स्वस्थता को बनाए रखने के लिए उत्पादन की प्रक्रिया में जैविक तत्वों का उपयोग करती है। यह आम रूप से खाद्य संयंत्रों, कम्पोस्ट, और अन्य जैविक खाद्य पदार्थों का उपयोग करके किया जाता है, जो न केवल पौधों को पोषित करते हैं, बल्कि भूमि को भी स्वस्थ और प्रजातियों के लिए सुरक्षित बनाए रखते हैं। संरक्षण कृषि की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह जल संरक्षण को भी बढ़ावा देती है। इसमें जल संचयन की तकनीकों का उपयोग किया जाता है, जैसे कि बारिश के पानी को संचित करने के लिए काल और जल संचार की व्यवस्था करना। यह न केवल जल संसाधनों को बचाता है, बल्कि भूमि की नमी को भी सुनिश्चित करता है, जिससे फसलों की उत्पादकता में सुधार होता है।

संरक्षण कृषि के लाभ

मिट्टी का संरक्षण: मिट्टी का क्षरण रुकता है, कार्बनिक पदार्थों में वृद्धि होती है और मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है।

जल संरक्षण: मिट्टी में नमी का बेहतर संधारण होता है, जिससे सिंचाई की आवश्यकता कम हो जाती है।

लागत में कमी: कम जुताई और रासायनिक उर्वरकों की कम आवश्यकता से उत्पादन लागत कम हो जाती है।

जलवायु परिवर्तन शमन: कार्बन का वायुमंडल में उत्सर्जन कम होता है और जलवायु परिवर्तन को कम करने में मदद मिलती है।

फसल उत्पादकता में वृद्धि: कुछ अध्ययनों में संरक्षण कृषि से पारंपरिक कृषि की तुलना में फसल उत्पादकता में वृद्धि देखी गई है।

संरक्षण कृषि का दायरा

- भारत जैसे देशों में जहां अधिकांश किसान छोटे और सीमांत किसान हैं, वहां संरक्षण कृषि को बढ़ावा दिया जा रहा है।
- यह तकनीक विभिन्न प्रकार की मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों के लिए उपयुक्त है।
- गेहूं, धान, मक्का, दलहन और कपास जैसी कई फसलों के लिए संरक्षण कृषि अपनाई जा सकती है।

संरक्षण कृषि की सीमाएं

- शुरुआती दौर में खरपतवार नियंत्रण एक चुनौती हो सकती है।
- जैव विविधता को ध्यान में रखते हुए खरपतवारनाशियों के प्रयोग में सावधानी बरतनी चाहिए।
- कुछ फसलों के लिए बीजों की उपलब्धता और विशेष कृषि यंत्रों की आवश्यकता हो सकती है।
- दीर्घकालिक लाभों को देखने के लिए किसानों को प्रशिक्षण और सहायता की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष

संरक्षण कृषि एक टिकाऊ कृषि पद्धति है जो मिट्टी के स्वास्थ्य, जल संरक्षण और उत्पादकता को बढ़ावा देती है। यद्यपि इसकी कुछ सीमाएं हैं, लेकिन अनुसंधान और किसानों के लिए उचित समर्थन के साथ यह तकनीक भारतीय कृषि के भविष्य के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

आहार और स्वास्थ्य के लिए जीवंत शैली

सीमा कनौजिया, फौज़िया बानो
(शोध छात्रा) खाद्य एवं पोषण विभाग , एरा विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ. प्र.)

आहार और स्वास्थ्य के लिए जीवंत शैली का मतलब है कि हम स्वस्थ और सक्रिय जीवन जीने के लिए अपनी आहार, व्यायाम, और जीवनशैली में संतुलन बनाए रखें। इसमें कुछ मुख्य तत्व शामिल होते हैं:

1.संतुलित आहार: संतुलित आहार का मतलब है कि हमें सभी पोषक तत्वों को सही मात्रा में और सही संघटन में लेना चाहिए, ताकि हमारे शारीर को उसकी आवश्यकता के अनुसार सभी आवश्यक ऊर्जा और पोषण मिल सके। एक संतुलित आहार में निम्नलिखित तत्वों का समावेश होता है।

प्रोटीन–प्रोटीन एक महत्वपूर्ण पोषण तत्व है जो हमारे शारीर के निर्माण, रखरखाव, और परिष्कृति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह उत्तम स्वास्थ्य और विकास हेतु आवश्यक होता है। यहां कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं पर प्रोटीन की अवश्यकता और स्रोतों का उल्लेख किया गया है।

प्रोटीन की अधिकता या कमी दोनों ही स्वास्थ्य हेतु हानिकारक हो सकती है। इसलिए, संतुलित और विविध आहार में प्रोटीन का सही मात्रा में शामिल होना चाहिए।

कार्बोहाइड्रेट्स– कार्बोहाइड्रेट्स हमारे शारीर के मुख्य ऊर्जा का स्रोत होते हैं। ये खाद्य पदार्थों का एक महत्वपूर्ण पोषण तत्व होते हैं और हमें ऊर्जा प्रदान करते हैं जो हमारे रोजमर्रा के कार्यों के लिए आवश्यक होती है। कार्बोहाइड्रेट्स के मुख्य उपयोग शारीर को ऊर्जा प्रदान करना होता है, लेकिन वे भी शरीर के बनावट और कार्यक्रम के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। कार्बोहाइड्रेट्स को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है:

साधारण (सिंपल) कार्बोहाइड्रेट्स: इनमें ग्लूकोज और फ्रक्टोज जैसे छोटे चेन के शक्तिशाली अणु होते हैं, जो तेजी से शरीर में अवशोषित होते हैं। उदाहरण के रूप में, मीठा, चीनी, फल, और हलवाई कार्यों में इन्हें पाया जाता है।

संश्लेषित (कंप्लेक्स) कार्बोहाइड्रेट्स: ये लंबे चेन के अणु होते हैं और धीरे से अवशोषित होते हैं, जिससे ऊर्जा की दीर्घकालिक उपलब्धता होती है। इनमें अनाज, दाल, अन्न, और सब्जियां शामिल होती हैं।

फाइबर: ये कार्बोहाइड्रेट्स हमारे पाचन को सहायक होते हैं, जो भोजन को प्रक्रियात्मक रूप से सामग्री में बदलते हैं। इन्हें अनाज, सब्जियां, फल, और दाल में पाया जाता है।

कार्बोहाइड्रेट्स की सही मात्रा में शामिल करना हमें ऊर्जा प्रदान करता है और शारीरिक क्रियाओं को सही ढंग से संचालित रखता है। हालांकि, उच्च और अधिक साधारण कार्बोहाइड्रेट्स की मात्रा के अधिकतम सीमा का पालन करना महत्वपूर्ण है, क्योंकि अधिक कार्बोहाइड्रेट्स का सेवन शरीर के वजन वृद्धि और अन्य स्वास्थ्य समस्याओं का कारण बन सकता है।

विटामिन और मिनरल्स: विटामिन और मिनरल्स हमारे शारीर के संचालन के लिए आवश्यक होते हैं। ये हमें अच्छे स्वास्थ्य और विकास के लिए मदद करते हैं। इन्हें फल, सब्जियां, दूध उत्पाद,अंडे, और अनाज में पाया जाता है।

फाइबर: फाइबर हमारे पाचन को सुधारता है, लेकिन यह भी हमें बारीकी से खा कर लेना चाहिए। इसे अनाज, सब्जियां, फल, और दाल में पाया जाता है।

फल और सब्जियां हमारे आहार का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं और हमें विटामिन, मिनरल्स, और फाइबर प्रदान करते हैं।

उपजीवन: यह शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है, इसलिए हमें खाने में पर्याप्त मात्रा में पानी पीना चाहिए।

2. नियमित व्यायाम: नियमित शारीरिक गतिविधि जीवनशैली का अहम हिस्सा है। यह आपके शारीरिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाए रखने में मदद करती है, मनोबल को बढ़ाती है, और रोगों से बचाव करती है।

3.अधिक पानी पीना: पानी का पर्याप्त सेवन करना हमारे शरीर के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह हमें शारीरिक क्षमता बनाए रखने में मदद करता है, त्वचा को स्वस्थ और ताजगी बनाए रखता है, और मेटाबोलिज्म को बढ़ावा देता है।

4.नियमित ध्यान और प्राणायाम: मानसिक स्वास्थ्य को सुधारने के लिए ध्यान और प्राणायाम का अभ्यास करना फायदेमंद होता है। यह हमें स्थितिक और ध्यान की स्थिति में रहने में मदद करता है और स्ट्रेस को कम करता है।

5.अपने स्वास्थ्य का संभाल: अपने शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का संभालना आपके खुद के जिम्मेदारी में है। नियमित चेकअप और सही चिकित्सा देखभाल लेना महत्वपूर्ण है।

एक जीवंत और स्वस्थ जीवनशैली को अपनाने से हम अधिक सक्रिय, संतुलित, और खुशहाल जीवन जी सकते हैं। यह हमारे शारीरिक, मानसिक, और आत्मिक स्वास्थ्य को संतुलित रखने में मदद करता है।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

करौंदा के औषधीय गुण तथा उपयोग

आरती गौतम (शोध छात्रा) खाद्य विज्ञान एवं पोषण

विनीता सिंह (सह प्राध्यापक) खाद्य विज्ञान एवं पोषण चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

परिचय

करौंदा का वैज्ञानिक नाम कैरिसा कारांडस तथा यह एपोसाइनेसी कुल का पौधा है। इसका उत्पत्ति स्थान भारत (जावा) है। इसकी खेत के लिए ऊष्णकटिबन्धीय और उपोष्णकटिबन्धीय जलवायु, खारा और लवणीय मिट्टी सहित मिट्टी की एक विस्तृत श्रृंखला पर उगाया जा सकता है। भारत में मुख्य रूप से इसकी खेती राजस्थान, गुजरात, बिहार, पश्चिम बंगाल तथा उत्तर प्रदेश में की जाती है। करौंदा एक झाड़ी नुमा, कांटेदार, बहुत ही कमजोर और सूखा-सहनशील पौधा है जिसकी ऊँचाई लगभग 6-7 फीट तक होती है। इसके पत्तों के पास टहनियों में नुकीले और मजबूत कांटे होते है। इसके फूलों का रंग सफेद और पीला तथा गन्ध जूही के फूलों के समान होती है। इसके फल गोल, छोटे और हरे रंग के होते है। इसके पौधे दो प्रकार के होते है। एक प्रकार के करौंदा में छोटे फल लगते है तथा दुसरे प्रकार के विलायती करौंदा में बड़े फल लगते है। विलायती करौंदा का अधिकतर प्रयोग आचार और चटनी बनाने में प्रयोग किया जाता है।

करौंदा के कच्चे फल सफेद व लालिमा सहित अण्डाकार बैंगनी व लाल रंग के होते है। इसके फल देखने में बहुत सुन्दर तथा कच्चे फल को काटने पर दूध निकालता है। फल पक जाने पर काले रंग का हो जाता है। फल के अन्दर 3-4 बीज होते है। करौंदा में प्रचुर मात्रा में विटामिन-C (1619 IU/100 ग्राम) होने के साथ-साथ अत्यधिक एंटी-आक्सीडेंट भी होता है। ये विटामिन-E और C का भी अच्छा स्रोत है।

विभिन्न भाषाओं में करौंदा के अलग-अलग नाम

करौंदा, या करोंदी (हिंदी में), जस्मीड फ्लावर (अंग्रेजी), करमर्द, सुखेण और कृष्णापाक फल (संस्कृत में), कैरीसा करंदास (लैटिन में), करकचा (बंगाली में), मरवन्दी (मराठी में), करमंदी (गुजराती में) तथा बाका (तेलगु में) कहते हैं।

करौंदा के गुण

करौंदा का रंग सफेद, स्याह, सुर्ख और हरा होता है। कच्चा करौंदा का स्वाद खट्टा, भारी तथा स्वभाव तासीर गरम होता है। पका करौंदा हल्का मीठा, रुचिकर और वातकारी होता है। करौंदा में व्याप्त दोषों को नमक, मिर्च और मीठे पदार्थों से दूर किये जाते है। इसका अधिक प्रयोग करने से शरीर पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है जैसे- रक्त-पित्त और कफ को उभारता है।

करौंदा के उपयोग

- करौंदा का उपयोग सब्जी, अचार, चटनी, मुरब्बा, जैम, जेली, स्क़वास तथा सिरप आदि बनाने में तथा लकड़ियों को जलाने के उपयोग में किया जाता है । इसका अचार बहुत अच्छा और स्वादिष्ट होता है।
- कच्चा करौंदा भूख को बढ़ाता है तथा भोजन के प्रति रूचि उत्पन्न करता है। हल्के पके हुए रीगल, पित्त, रक्त, पित्त त्रिदोष और विष तथा वात विनाशक होते है।
- फलों के चूर्ण के सेवन से खट्टी डकार, पेट दर्द में आराम मिलता है, करौंदा भूख को बढ़ाता है और पित्त को शान्त करता है। प्यास को रोकता है और दस्तों को बन्द करने सहायक होता है। खासकर पैत्तिक दस्तों के लिए तो अत्यन्त लाभदायक चीज है।
- करौंदा के जड़ो का उपयोग बुखार होने पर पानी के साथ कुचलकर शरीर पर लेपित करते है और गर्मियों में लू लगने, दस्त या डायरिया होने पर फलों का जूस पिलाने से आराम मिलता है।
- ज्वर आने पर करौंदा की जड़ का क्वाथ बनाकर प्रयोग करने से रोगी को लाभ होता है।
- करौंदा की जड़ निकालकर साफ़ पानी में धोकर उसे पानी के साथ पीसकर पानी में डालकर खूब पकाने के बाद इस तेल को घाव के कीड़ों और खुजली पर लगाने से लाभ होता है।
- सूखी खाँसी होने पर करौंदा की पत्तियों के रस में शहद मिलाकर सेवन करना लाभकारी होता है।
- करौंदा का फल खाने से शरीर को कैल्शियम प्रदान कर हमारी हड्डियों तथा दांतों एवं मसूढ़ो को मजबूत बनाता है।
- दांतों को सड़न से बचाने के साथ-साथ सांस की दुर्गन्ध को रोकता है।
- करौंदा में कम कैलोरी उर्जा होने के कारण यह वजन घटाने में भी सहायक होता है।
- प्रतिदिन करौंदा के रस का सेवन करके स्तन कैंसर से बचा जा सकता है।
- करौंदा कोलेस्ट्राल के स्तर को कम करके हृदय सम्बन्धी रोगों से बचाता है।
- करौंदा का रस फेफड़ो के सूजन दूर करने में लाभदायक होता है।
- स्वस्थ प्रतिरक्षा प्रणाली का निर्माण कर हमें रोगों से लड़ने की शक्ति प्रदान करता है।
- स्त्री स्वास्थ्य सम्बन्धी रोगों में विशेष रूप से लाभप्रद होता है जैसे- मूत्र संक्रमण।
- करौंदा के रस का सेवन रक्तचाप को कम करता है।
- झुर्रियों के निर्माण की प्रक्रिया को रोक कर, झुर्रियों का आना कम करता है।
- करौंदा का प्रयोग मूंगा व चाँदी का भस्म बनाने में प्रयोग किया जाता है।
- जलंदर रोग में करौंदा का शर्बत पीने से लाभ होता है।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

ड्रिप सिंचाई पद्धति का महत्व

सौरभ भारती शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या
सिद्रा किदवई शोध छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या
प्रवीण कुमार शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
शिवम् कौशिक शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या
तनु शर्मा परास्नातक छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

ड्रिप सिंचाई पद्धति का जन्म सिमका ब्लोग नामक एक इजराइली इंजीनियर ने 1940 में देखा कि पानी के पाइप से रिसाव होने वाले स्थान के पौधों में वृद्धि अन्य क्षेत्र के पौधों की तुलना में अधिक है, इसके आधार पर उन्होंने 1964 में ड्रिप सिंचाई पद्धति विकसित की गई।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली सामान्य रूप से बागवानी फसलों में उर्वरक व पानी देने की सर्वोत्तम एवं आधुनिक विधि मानी जाती है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली में कम पानी से अधिक क्षेत्र की सिंचाई की जाती है। इस प्रणाली में पानी को पाइपलाइन के माध्यम से स्रोत से खेत तक पूर्व-निर्धारित मात्रा में पहुँचाया जाता है। इससे पानी की बर्बादी को तो रोका ही जाता है, साथ ही यह जल उपयोग दक्षता बढ़ाने में भी सहायक है। देखने में आया है कि सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली अपनाकर 30-40 फीसदी पानी की बचत होती है। इस प्रणाली से सिंचाई करने पर फसलों की गुणवत्ता और उत्पादकता में भी सुधार होता है। सरकार भी 'प्रति बूँद अधिक फसल' के मिशन के अंतर्गत फव्वारा व टपक सिंचाई पद्धति को बढ़ावा दे रही है। हमारे देश में अधिकांशतः खेतों में सिंचाई के लिये कच्ची नालियों द्वारा पानी लाया जाता है, जिससे तकरीबन 30-40 फीसदी पानी रिसाव की वजह से बेकार चला जाता है। ऐसे में सूक्ष्म सिंचाई पद्धति का इस्तेमाल करने में फायदा-ही-फायदा है ड्रिप सिंचाई प्रणाली का उपयोग ड्रिप सिंचाई प्रणाली का उपयोग कम पानी वाले क्षेत्रों एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों, उबड़-खाबड़ एवं पहाड़ी वाले क्षेत्रों, बागवानी की फसलों जैसे अंगूर, अनार, नींबू, केला, अमरुद, लीची, आम, पपीता आदि में किया जाता है। इस विधि का प्रयोग कतार में लगाई जाने वाली सब्जियों तथा गन्ना, कपास इत्यादि नगदी फसलों में किया जाता है। इस विधि का प्रयोग ग्रीन-हाउस में फूलों और सब्जियों की फसलों के लिये भी किया जाता है।

ड्रिप सिंचाई का उद्देश्य: ड्रिप सिंचाई प्रणाली का मुख्य उद्देश्य सिंचाई जल प्रयोग दक्षता, एक समान जल प्रदान करना तथा उपज की उचित वृद्धि के लिए फसल के जड़ क्षेत्र में जलधारण क्षमता के आस-पास नमी बनाए रखना। ड्रिप सिंचाई प्रणाली की कार्य विधि सिंचाई की इस प्रणाली में जल स्त्रोत से पानी उठाने के लिए पंप, डिलेवरी पाईप, बाईपास वाल्व, प्रेशर गेज, फिल्टर, मुख्य लाइन, लेटरल लाइन, एमिटर लगे रहते हैं । पंप से पानी डिलेवरी पाईप में, डिलेवरी पाईप से पानी मुख्य लाइन में, मुख्य लाइन से पानी लेटरल लाइन में, लेटरल लाइन से पानी एमिटर ओरिफिस एवं अंत में एमिटर से होता हुए पौधों की जड़ो में पहुंचता है। पानी को सिंचाई प्रणाली में कहीं रोकने या शुरू करने के लिए बाईपास वाल्व, पानी का दबाव नापने के लिए प्रेशर गेज, पानी की अशुद्धियों को छानने के लिये फिल्टर तथा पाइप की सफाई के लिए फ्लश वाल्व लगते हैं। फसल की आवश्यकता के अनुसार खाद तथा दवाई देने के लिए खाद का एक टेंक पानी की मुख्य लाइन के समानांतर लगा होता है. एक एमिटर प्रति घंटे 2-10 लीटर कि दर से पानी देता है। जिससे पौधे को प्रतिदिन की पानी की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना: जुलाई 2015 में केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना को मंजूरी दी थी। इसमें पाँच सालों (2015-16 से 2019-20) के लिये 50 हजार करोड़ रुपए की राशि का प्रावधान किया गया है। इस योजना के प्रमुख उद्देश्यों में निवेश में एकरूपता लाना, 'हर खेत को पानी' के तहत कृषि क्षेत्र का विस्तार करना, खेतों में पानी इस्तेमाल करने की दक्षता को बढ़ाकर पानी की बर्बादी को रोकना, सही सिंचाई और पानी को बचाने की तकनीक को अपनाना तथा हर बूँद अधिक फसल आदि शामिल हैं।

ड्रिप सिंचाई विधि में पानी का सही उपयोग करने के लिये निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है-

- भूमि की स्थलाकृति की पूर्ण रूप से जानकारी होना चाहिए।
- सिंचाई हेतु उपलब्ध जल की मात्रा की जानकारी होना चाहिए।
- जलशीर्ष व उपलब्ध जल दबाव का आकलन होना चाहिए।
- उगाई गई फसल की किस्म एवं जल उपयोग क्षमता का ज्ञान होना चाहिए।
- वाष्पोत्सर्जन की गणना करने के लिए जलवायु सम्बन्धी आंकड़े की जानकारी होना चाहिए।
- मृदा का प्रकार उसकी पारगम्यता एवं अंतःक्षरण की दर की जानकारी होना चाहिए।
- ड्रिप सिंचाई प्रणाली को उपयोग करने में निम्न सावधानियों को ध्यान रखना चाहिए

फर्टिगेशन का उपयोग: फर्टिगेशन दो शब्दों फर्टिलाइजर (उर्वरक) और इरीगेशन (सिंचाई) से मिलकर बना है। अपेक्षाकृत इस नई विधि में टपक विधि से सिंचाई करते समय पानी के साथ-साथ उर्वरकों को भी पौधों तक पहुँचाया जाता है। फर्टिगेशन को खेतों में उर्वरक डालने की सर्वोत्तम तथा अत्याधुनिक विधि माना गया है। इस विधि में उर्वरकों को कम मात्रा में कम अंतराल पर पूर्व-नियोजित सिंचाई के साथ दिया जा सकता है। इससे पौधों को आवश्यकतानुसार पोषक तत्त्व मिल जाते हैं और उर्वरकों का अपव्यय भी नहीं होता। सामान्यतः फर्टिगेशन में तरल उर्वरकों का ही इस्तेमाल किया जाता है, लेकिन दानेदार और शुष्क उर्वरकों को भी पानी में घोलकर इस विधि द्वारा दिया जा सकता है।

ड्रिप सिंचाई के फायदे

- स्थानीय अनुप्रयोग और कम लीचिंग के कारण उर्वरक और पोषक तत्वों का नुकसान कम हो जाता है।
- यदि सही ढंग से प्रबंधन किया जाए तो जल अनुप्रयोग दक्षता अधिक होती है।
- खेत को समतल करना आवश्यक नहीं है.
- अनियमित आकार वाले फील्ड आसानी से समायोजित हो जाते हैं।
- पुनर्चक्रित गैर-पीने योग्य पानी का सुरक्षित रूप से उपयोग किया जा सकता है।
- जड़ क्षेत्र के भीतर नमी को क्षेत्र की क्षमता पर बनाए रखा जा सकता है।
- सिंचाई की आवृत्ति में मिट्टी का प्रकार कम महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- मिट्टी का कटाव कम हो जाता है.
- खरपतवार की वृद्धि कम हो जाती है.
- जल वितरण अत्यधिक समान है, जो प्रत्येक नोजल के आउटपुट द्वारा नियंत्रित होता है।
- अन्य सिंचाई विधियों की तुलना में श्रम लागत कम है।
- वाल्व और ड्रिपर्स को विनियमित करके आपूर्ति में भिन्नता को नियंत्रित किया जा सकता है।

02/203-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

शून्य बजट प्राकृतिक खेती (जेडबीएनएफ): स्थिरता की खेती

रोहित, पवन कुमार गुप्ता, शिवम सिंह
शोध छात्र, कृषि प्रसार विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

अंकित सिंह शोध छात्र, कृषि प्रसार विभाग, प्रोफेसर राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय प्रयागराज

शून्य बजट प्राकृतिक खेती (जेडबीएनएफ) एक कृषि तकनीक है जो पर्यावरण के अनुकूल और आर्थिक रूप से टिकाऊ दृष्टिकोण के कारण दुनिया भर में लोकप्रियता हासिल कर रही है। भारत में कृषक सुभाष पालेकर द्वारा विकसित, शून्य बजट प्राकृतिक खेती रसायन-मुक्त खेती के तरीकों को बढ़ावा देता है जो उर्वरकों और कीटनाशकों जैसे बाहरी निवेश की आवश्यकता को खत्म करता है। 'शून्य बजट प्राकृतिक खेती' विषय को तब प्रमुखता मिली जब वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने अपने 2019 के बजट भाषण में इसका उल्लेख किया और इसे किसानों की आय दोगुनी करने का एक स्रोत बताया। सीधे शब्दों में कहें तो, शून्य बजट प्राकृतिक खेती एक कृषि तकनीक है जो पर्यावरण के साथ सामंजस्य बिठाकर फसल उगाने पर जोर देती है। परंपरागत कृषि विकास योजना नामक विशिष्ट कार्यक्रम के तहत, सरकार जैविक खेती को प्रोत्साहित कर रही है। **यहां बताया गया है कि शून्य बजट प्राकृतिक खेती कैसे काम करता है और इसके लाभ क्या हैं:**

शून्य बजट प्राकृतिक खेती के सिद्धांत

शून्य बजट दृष्टिकोण: शून्य बजट प्राकृतिक खेती बिना किसी बाहरी वित्तीय निवेश के खेती पर जोर देता है। किसान उर्वरक और कीट नियंत्रण के लिए अपने खेतों पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों, जैसे गाय के गोबर, मूत्र और स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्रियों पर भरोसा करते हैं।

प्राकृतिक खेती की तकनीकें: शून्य बजट प्राकृतिक खेती पारंपरिक और स्वदेशी तरीकों जैसे मल्चिंग, इंटरक्रॉपिंग और गाय के गोबर और मूत्र आधारित तैयारी के साथ बीज उपचार को नियोजित करता है। ये तकनीकें मिट्टी की उर्वरता, जल धारण और जैव विविधता को बढ़ाती हैं।

न्यूनतम बाहरी निवेश: कृषि पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करके, शून्य बजट प्राकृतिक खेती रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों जैसे महंगे बाहरी निवेश पर निर्भरता कम करता है, जिससे उत्पादन लागत कम होती है और किसानों की आय में सुधार होता है।

शून्य बजट प्राकृतिक खेती में प्रमुख अभ्यास

मल्चिंग: मिट्टी को फसल के अवशेषों या सूखे पत्तों जैसे कार्बनिक पदार्थों से ढकने से नमी बनाए रखने, खरपतवारों को दबाने और माइक्रोबियल

गतिविधि को बढ़ावा देकर मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने में मदद मिलती है।

बीज उपचार: अंकुरण बढ़ाने और बीमारियों से बचाने के लिए बीजों को गाय के गोबर, गोमूत्र, गुड़ और बेसन के मिश्रण से उपचारित किया जाता है।

अंतरफसल और फसल चक्र: विभिन्न फसलों को एक साथ उगाने और उन्हें मौसम के अनुसार चक्रित करने से कीटों का प्रकोप कम होता है, मिट्टी में पोषक तत्वों की पूर्ति होती है और समग्र लचीलेपन में सुधार होता है।

पशुधन एकीकरण: गाय और मुर्गी जैसे पशुधन प्रणाली में एकीकरन करने से खेत के कचरे को खाद और बायोगैस जैसे मूल्यवान इनपुट में पुनर्चक्रित करने में मदद मिलती है।

शून्य बजट प्राकृतिक खेती के लाभ

पर्यावरणीय स्थिरता: शून्य बजट प्राकृतिक खेती जैविक कृषि प्रथाओं को बढ़ावा देकर कृषि के पारिस्थितिक पदचिह्न को कम करता है जो मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाता है, पानी का संरक्षण करता है और जैव विविधता को संरक्षित करता है।

आर्थिक व्यवहार्यता: महंगे बाहरी इनपुट की आवश्यकता को समाप्त करके, शून्य बजट प्राकृतिक खेती उत्पादन लागत को कम करता है और किसानों की आर्थिक लचीलापन में सुधार करता है, जिससे लाभप्रदता और आय स्थिरता में वृद्धि होती है।

जलवायु लचीलापन: शून्य बजट प्राकृतिक खेती प्रथाए, जैसे मल्चिंग और जैविक मिट्टी संवर्धन, किसानों को मिट्टी की नमी बनाए रखने में सुधार और चरम मौसम की घटनाओं के प्रति संवेदनशीलता को कम करके जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने में मदद करती हैं।

स्वास्थ्य और पोषण: शून्य बजट प्राकृतिक खेती फार्मों से रसायन-मुक्त उत्पाद उपभोक्ताओं को हानिकारक कीटनाशकों और सिंथेटिक रसायनों के संपर्क को कम करते हुए पौष्टिक और सुरक्षित भोजन प्रदान करता है।

चुनौतिया और अपनाना

इसके कई लाभों के बावजूद, शून्य बजट प्राकृतिक खेती को व्यापक रूप से अपनाने से सीमित जागरूकता, प्रशिक्षण और संसाधनों तक पहुंच और पारंपरिक कृषि पद्धतियों से प्रतिरोध जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। सरकारें, गैर सरकारी संगठन और कृषि विस्तार सेवाए, प्रशिक्षण कार्यक्रमों, वित्तीय सहायता और नीति प्रोत्साहनों के माध्यम से शून्य बजट प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

अंत में, शून्य बजट प्राकृतिक खेती टिकाऊ कृषि के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती है जो आर्थिक व्यवहार्यता के साथ पर्यावरणीय प्रबंधन को संतुलित करती है। प्रकृति की शक्ति और पारंपरिक कृषि ज्ञान का उपयोग करके, शून्य बजट प्राकृतिक खेती भविष्य की पीढ़ियों के लिए ग्रह के संसाधनों की सुरक्षा करते हुए, कृषि परिदृश्य को बदलने की क्षमता रखता है।

08/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

खेतों में पानी बचाने वाली तकनीकें

अभिषेक सिंह यादव, कपिल कुमार यादव
शोध छात्र, मृदा एवं कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर

प्रदीप कुमार, जनार्दन प्रसाद बागरी शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, चन्द्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

भूजल लगातार भारतीय कृषि और पेयजल सुरक्षा की रीढ़ के रूप में उभरा है। सिंचाई में भूजल का योगदान लगभग 62 प्रतिशत, ग्रामीण जल आपूर्ति में 85% और शहरी जल आपूर्ति में 50% है। हालांकि, लगातार बढ़ती पानी की मांग के कारण देश के कई हिस्सों में भूजल का वार्षिक पुनःपूर्ति से अधिक दोहन हो रहा है। इसके परिणामस्वरूप पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, जिसमें भूजल स्तर में गिरावट, जलभृतों का असंतृप्ति और इसकी गुणवत्ता में गिरावट शामिल है। जल स्तर में यह गिरावट उत्तरी राज्यों पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में अधिक स्पष्ट है, जहां धान-गेहूं की एकल खेती को बड़े पैमाने पर स्वीकार किए जाने से किसानों की सिंचाई जल संसाधनों पर निर्भरता बढ़ गई है। इसके अलावा, कम गहराई से पानी उठाने के लिए भी अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिसके परिणामस्वरूप खेती की लागत बढ़ जाती है। यह भयावह स्थिति बहुमूल्य भूजल संसाधनों के अंधाधुंध उपयोग को रोकने के लिए कुशल जल प्रबंधन प्रथाओं की मांग करती है। कृषि फसलों में कुछ व्यावहारिक विकल्प और कुशल जल प्रबंधन तकनीकें इस प्रकार हैं:

1.सिंचाई चैनलों की मरम्मत और सफाई: सिंचाई चैनलों की मरम्मत और सफाई मौसम के दौरान फसलों की बुवाई से पहले की जानी चाहिए। भूमिगत पाइपलाइन प्रणाली का उपयोग सिंचाई के पानी के परिवहन के नुकसान को कम कर सकता है। इसके अलावा, बड़े खेतों को छोटे-छोटे हिस्सों में विभाजित करें। यह अभ्यास सिंचाई के पानी के एक समान उपयोग में मदद करता है, सिंचाई के समय को कम करता है और परिणामस्वरूप पानी की बचत करता है।

2.फसल विविधीकरण: इसका उद्देश्य अधिक पानी की खपत करने वाली धान की फसल (जो वर्तमान में पंजाब में 85त्न से अधिक फसली भूमि पर उगाई जाती है) को कम पानी की खपत वाली फसलों से बदलना है और इसे पंजाब में कृषि-जल चुनौतियों को कम करने की एक सफल रणनीति के रूप में देखा जा रहा है। राज्य का लक्ष्य भूजल संरक्षण के लिए 1.2 मिलियन हेक्टेयर धान (कुल 3 मिलियन हेक्टेयर में से) को वैकल्पिक फसलों (मक्का, गन्ना, तिलहन और दलहन, सब्जी की फसलें और फलों के बागान) में बदलना है। साहित्य में फसल विविधीकरण के कई लाभों का भी संकेत मिलता है जैसेः भूजल संरक्षण, नाइट्रोजन फिक्सिंग फसलों की खेती के माध्यम से मिट्टी का पुनरोद्धार, बेहतर उत्पादन, संसाधन उपयोग दक्षता, पारिस्थितिक लाभ, रोजगार सृजन और टिकाऊ कृषि।

3.चावल की सीधी बुआई (डीएसआर): मध्यम से भारी बनावट वाली मिट्टी में चावल की सीधी बुआई (टार-वाटर स्थितियां) भी पोखर में रोपे गए चावल की तुलना में 15 से 20 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत करने में मदद करती है। डीएसआर

तकनीक में, बुवाई के लगभग 21 दिन बाद पहली सिंचाई करें। उसके बाद, मिट्टी के प्रकार और वर्षा के आधार पर 5-7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें।

4.ड्रिप सिंचाई: ड्रिप सिंचाई को कभी-कभी ट्रिकल सिंचाई भी कहा जाता है और इसमें छोटे व्यास वाले प्लास्टिक पाइपों की एक प्रणाली से बहुत कम दरों पर मिट्टी पर पानी टपकाया जाता है, जिसमें एमिटर या ड्रिपर नामक आउटलेट लगे होते हैं। पौधों के करीब पानी डाला जाता है ताकि मिट्टी का केवल वह हिस्सा गीला हो जिसमें जड़ें उगती हैं, जबकि सतही सिंचाई में पूरी मिट्टी को गीला किया जाता है। ड्रिप सिंचाई के पानी के साथ, अन्य तरीकों की तुलना में अधिक बार (आमतौर पर हर 1-3 दिन में) पानी डाला जाता है और इससे मिट्टी में बहुत अनुकूल नमी का स्तर मिलता है जिसमें पौधे पनप सकते हैं। पानी और पोषक तत्व एमिटर से मिट्टी में प्रवेश करते हैं, गुरुत्वाकर्षण और केशिकाओं की संयुक्त शक्तियों के माध्यम से पौधों के जड़ क्षेत्र में चले जाते हैं। इस तरह, पौधे से नमी और पोषक तत्वों की वापसी लगभग तुरंत हो जाती है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि पौधे को कभी भी पानी की कमी का सामना न करना पड़े, जिससे गुणवत्ता में वृद्धि होती है, इष्टतम विकास और उच्च उपज प्राप्त करने की इसकी क्षमता बढ़ती है। आलू, मिर्च, प्याज, गेहूं, वसंत मक्का, मटर, बैंगन, हल्दी कपास, मेंथा, गोभी सरसों और किन्नू फसलों में, ड्रिप सिंचाई से लगभग 26-46% सिंचाई जल की बचत हो सकती है।

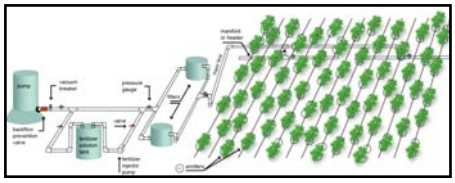

5.मल्चिंग: यह पौधों की वृद्धि, विकास और कुशल फसल उत्पादन के लिए अधिक अनुकूल परिस्थितियाँ बनाने के लिए मिट्टी/जमीन को ढकने की प्रक्रिया या अभ्यास है। मूल रूप से, मल्चिंग मिट्टी के वाष्पीकरण को कम करके और मिट्टी के तापमान को नियंत्रित करके मिट्टी के पानी को संरक्षित करती है, जिससे फसल की खेती के दौरान सिंचाई की माँग कम हो जाती है। मल्च सूरज की रोशनी को मिट्टी की ऊपरी परत तक पहुँचने से रोककर खरपतवारों के अंकुरण को कम करता है। मल्च बारिश की गतिज ऊर्जा को भी कम करता है और बारिश के पानी के प्रभाव को धीमा कर देता है, जो अपवाह को रोकता है और मिट्टी को बारिश के पानी को अवशोषित करने के लिए अधिक समय देता है। पूरक नमी पौधों की जड़ों की वृद्धि को बढ़ाती है, जिसके परिणामस्वरूप मिट्टी का स्थिरीकरण होता है। मल्चिंग पॉलीथीन शीट या फसल के बचे हुए हिस्से जैसे का उपयोग करके की जा सकती है। पंजाब में धान की पराली, गन्ने का कचरा आदि बहुत अधिक मात्रा में पैदा होता है, जिसका उपयोग खेतों में फसलों को मल्चिंग करने के लिए आसानी से किया जा सकता है, इस प्रकार यह राज्य में अवशेष जलाने की एक बड़ी समस्या का समाधान करने में भी मदद करता है।

6.मेड़/ क्यारी रोपण: भारी बनावट वाली मिट्टी में, सिंचाई के पानी को बचाने के लिए धान को मेड़ (60 सेमी) या क्यारी (67.5 सेमी) पर लगाया जा सकता है। नालियों की सिंचाई करें और पौधों को तुरंत मेड़ या क्यारी के ढलानों (दोनों तरफ) के बीच में रोपें, क्यारी पर 9 सेमी और मेड़ पर 10 सेमी की दूरी बनाए रखें। रोपाई के बाद पहले 15 दिनों के दौरान, दैनिक आधार पर सिंचाई करें। इसके बाद, तालाब के पानी के मिट्टी में घुसने के दो दिन बाद ही नालियों में सिंचाई करें। इस बात का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए कि खेत की नालियों में दरारें न पड़ें। इसी तरह गेहूं की फसल में 37.5 सेमी चौड़ी क्यारी पर 20 सेमी की दूरी पर दो कतारें बोई जा सकती हैं और दो क्यारियों के बीच 30 सेमी चौड़ी नाली बनाई जा सकती है। गोभी सरसों, सोयाबीन, मक्का, कपास, मूंग, माशा, मेंथा, चना आदि अन्य फसलें भी क्यारियों पर बोई जा सकती हैं, जिससे पानी और उर्वरकों का कुशल उपयोग होता है और खरपतवारों का उद्भव भी कम होता है।

7.लेजर भूमि समतलीकरण: सटीक भूमि समतलीकरण पानी के विवेकपूर्ण उपयोग के लिए सबसे महत्वपूर्ण कदम है और लेजर भूमि समतलीकरण एक ऐसा उपकरण है जो पानी के कुशल उपयोग को बढ़ावा दे सकता है। लेजर समतलीकरण एक लेजर निर्देशित सटीक समतलीकरण तकनीक है जिसका उपयोग कृषि क्षेत्र पर वांछित ग्रेड के साथ बहुत ही महीन समतलीकरण प्राप्त करने के लिए किया जाता है। लेजर समतलीकरण में एक लेजर ट्रांसमीटर इकाई का उपयोग किया जाता है जो लगातार आवश्यक क्षेत्र तल के समानांतर 360 डिग्री घूमने वाली किरण उत्सर्जित करती है। यह किरण स्क्रैपर इकाई पर मस्तूल पर लगे लेजर रिसीवर (प्राप्त करने वाली इकाई) द्वारा प्राप्त की जाती है। प्राप्त सिग्नल को कट और फिल लेवल समायोजन में परिवर्तित किया जाता है और स्क्रैपर स्तर में संबंधित परिवर्तन दो तरफा हाइड्रोलिक नियंत्रण वाल्व द्वारा स्वचालित रूप से किए जाते हैं। लेजर भूमि समतलीकरण का उपयोग करने से पहले खेत की जुताई और समतलीकरण किया जाता है। लेजर लेवलिंग से न केवल पानी, बिजली और समय की बचत होती है, बल्कि उर्वरकों, कीटनाशकों और शाकनाशियों आदि जैसे अन्य कृषि इनपुटों का विवेकपूर्ण उपयोग भी बेहतर होता है। इससे फसल की एक समान परिपक्वता, बेहतर गुणवत्ता और अधिक उपज भी मिलती है। इससे सिंचाई के पानी की लगभग 15-25% बचत होती है और 5-10% अतिरिक्त उपज का लाभ होता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

वैज्ञानिक विधि से पॉप कॉर्न की खेती

प्रवीण कुमार (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय मेरठ

शिवम् कौशिक शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

सौरभ भारती शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

सिद्रा किदवई शोध छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

तनु शर्मा परास्नातक छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

पॉपकॉर्न एक विशेष प्रकार की मक्का है जिसे वैज्ञानिक विधि से खरीफ मौसम में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। सामान्य अनाजों की तुलना में पॉपकॉर्न की उत्पादकता कम होती है लेकिन, इसका बाजार मूल्य बहुत अधिक होता है। इसकी खेती किसानों के लिए लाभदायक है, क्योंकि खेती की लागत सामान्य मक्का की फसल की तरह होती है और पॉप कॉर्न की कीमत अधिक होने के कारण शुद्ध लाभ अधिक होता है।

पॉप कॉर्न के दाने मे बहुत सख्त भ्रूणपोष होता है जिसमे नरम स्टार्च का केवल एक छोटा सा हिस्सा होता है। जब पॉप कॉर्न के दाने को गर्म किया जाता है, तो उसके अंदर का स्टार्च और प्रोटीन फैलता है और क्रिस्पी फूले हुए फ्लेक्स के रूप में बाहर निकलता है। मक्के की सामान्य अनाज की फसल की तुलना में पॉप कॉर्न का बाजार मूल्य अधिक होता है, इसलिए किसान सामान्य मक्का की अपेक्षा पॉप कॉर्न उगाकर अधिक लाभ कमा सकते हैं। साथ ही यह पसंदीदा और पौष्टिक स्नैक भोजन भी है। पॉप कॉर्न की

वैज्ञानिक विधि से खेती का विवरण

मृदा: मध्यम बनावट वाली मिट्टी इसकी खेती के लिए अच्छी होती है। लवणीय और क्षारीय मिट्टी भी इसके विकास के लिए अच्छी नहीं होती है। भूमि की पी.एच. 6.5 से 7.5 उत्तम रहता हैं।

मृदा की तैयारी: पॉप कॉर्न के लिए भूमि की तैयारी सामान्य मक्का के समान होती है। खेत को तैयार करने के लिए एक जुताई लगभग 20-25 से.मी. की गहराई तक करनी चाहिए ताकि मिट्टी भुरभुरी हो जाए। इसके बाद 2 से 3 बार हैरो करनी चाहिए। उचित जल निकासी और सिंचाई सुनिश्चित करने के लिए, खेत को समतल करना चाहिए। इसके अतिरिक्त पानी निकालने के लिए, उचित अंतराल पर जल निकासी के लिए नालियाँ बना देना चाहिए।

किस्में/प्रजातियाँ: वी.एल. अम्बर, पंत पॉपकार्न 1, अम्बर पॉपकार्न, जवाहर पॉपकार्न, पर्ल पॉप

बुवाई का समय: जून के द्वितीय सप्ताह से जुलाई प्रथम सप्ताह तक

बीज की मात्रा: पॉपकार्न के लिए 12 से 14 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर बीज का प्रयोग करना चाहिए।

बुवाई की विधि: बुवाई पंक्तियों में करें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 25 से.मी. रखनी चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 75 सेमी. रखने पर पौधे से पौधे की दूरी 20 से.मी. रखनी चाहिए। बीज लगभग 5 से.मी. गहराई पर बोना चाहिए।

उर्वरकों की मात्रा एवं प्रयोग विधि: पॉप कॉर्न के लिए 120 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। सम्पूर्ण फॉस्फोरस व पोटाश एवं एक चौथाई नत्रजन की मात्रा बुवाई के समय कूड़ों में प्रयोग करनी चाहिए। शेष नत्रजन बराबर-बराबर मात्रा में तीन बार में फसल की 3-4 पत्ती की अवस्था, पौधे की घुटने की ऊँचाई की अवस्था तथा फूल (नर मंजरी) निकलते समय टॉप-ड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण: दो निराई-गुड़ाई, प्रथम बोने के 20 दिन एवं द्वितीय 35 दिन बाद करने की आवश्यकता होती है। रासायनिक विधि से खरपतवार को नष्ट करने के लिए एट्राजीन 50 डब्लू. पी. 2.0 किग्रा. चूर्ण प्रति हैक्टेयर की दर से बुवाई के तुरंत बाद या बुवाई के 2 से 3 दिन के अन्दर छिड़कनी चाहिए। टेम्बोट्राइओन 286 मि.ली. प्रति हैक्टेयर या टोप्रामिजोन 75 मि.ली. प्रति हैक्टेयर खरपतवारनाशी का प्रयोग बुवाई के 20-25 दिन बाद करें। खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग के लिए पानी की मात्रा 500 लीटर/हैक्टेयर रखनी चाहिए।

सिंचाई: पौधों की प्रारम्भिक अवस्था, फसल की घुटनों तक की ऊँचाई तथा पुष्पन की अवस्था पर पर्याप्त नमी आवश्यक है। खरीफ ऋतु में सामान्यतः सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि जल की पूर्ति वर्षा से हो जाती है। यदि वर्षा न हो रही हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। भुट्टे के आरम्भिक अवस्था के समय पानी की कमी होने पर दाने कम तथा छोटे बनते हैं। वर्षा के बाद खेत से पानी के निकास का अच्छा प्रबंधन होना चाहिए अन्यथा पौधे पीले पड़ जाते हैं और उनकी वृद्धि रूक जाती है।

कीट नियंत्रण

तना छेदक: इस कीट की सूड़ियाँ तनों में छेद करके अन्दर ही अन्दर खाती रहती हैं जिसके कारण मृत गोभ बन जाती है और पूरा पौधा सूख जाता है। इसकी रोकथाम हेतु कार्बोफ्यूरान 3जी की 33 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से बुवाई के समय खेत में मिलायें। खड़ी फसल में इस कीट का प्रकोप होने पर सिंचाई के बाद इस कीटनाशी की 33 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से फसल की पंक्तियों में पौधों के पास डालें अथवा खड़ी फसल में डाईमिथोएट 30% ई.सी. की 660 मि.ली. मात्रा 500-600 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर क्षेत्र में छिड़काव करें।

प्ररोह मक्खी: ये पौधे की प्रारम्भिक अवस्था में मध्य प्ररोह में घुसकर उसके भीतरी भाग को खाते हैं। इस कीट का आक्रमण बसन्त ऋतु की मक्का में बहुत अधिक होता है। पौधे उगने के पश्चात् यदि 20-25 दिन तक फसल को बचा लिया जाए तो उसके पश्चात् इस कीट का आक्रमण नहीं होता है। इसके प्रकोप से बचने के लिए वही कीटनाशी का प्रयोग करें जो तना छेदक के नियंत्रक के लिए बताये गये हैं। परन्तु डाईमेथोएट की मात्रा 1155 मि.ली. प्रति हैक्टेयर रखें। बीज को इमिडाक्लोप्रिड 48 एफ.एस. से 1 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोयें। इस कीट का फसल पर अधिक प्रकोप होने पर मोनोक्रोटोफॉस की 625 मि.ली. या ऑक्सीडिमेटॉन मिथाइल 25 ई.सी. की 1000 मि.ली. मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

पतझड़ सैनिक कीट (फॉल आर्मी वर्म): यह एक नया कीट है इसके प्रकोप से मक्का की फसल में बहुत अधिक क्षति होती है। शुरूआत में इस कीट की सूंड़ी पत्तियों के हरे भाग को खुरचकर खाती है जिससे पत्तियों में सफेद जाली जैसी दिखायी पड़ती है। इस कीट की सूंड़ी के सिर पर उलटा वाई (Y) का निशान तथा पिछले हिस्से पर चार छोटे वर्गाकार काले रंग के धब्बे होते हैं। बड़ी अवस्था में इसकी सूंड़ी गोफ में तथा भुट्टे के अन्दर प्रवेश कर जाती है। ऐसी दशा में इस कीट का नियंत्रण संभव नहीं हो पाता है। अतः इस कीट के प्रकोप से बचने हेतु शुरूआती अवस्था से ही नियंत्रण करना चाहिए। इसके लिए स्पीनोट्राम 11.7% एस.सी. का 0.5 मि.ली./लीटर या क्लोरान्ट्रानीलीप्रोल 18.5 एस.सी. का 0.4 मि.ली./लीटर या थायोमिथेक्जाम 12%+लेम्डासाईहैलोथ्रिन 9.5% का 0.2 मि.ली./लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियंत्रण

वलय पत्ती एवं शीथ अंगमारी: यह रोग प्रायः 40-50 दिन के पौधों पर फूल खिलने के पहले लगता है जिसमें भूमि के सतह के ऊपर तनों पर भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में पत्ती पर भी बन जाते हैं जिसके पश्चात् पूरा पौधा सूख जाता है।

उपचार: रोग के लक्षण दिखाई देते ही निचली पत्तियों को तोड़कर हटा दें। अधिक प्रकोप होने पर इस रोग के नियन्त्रण के लिए बीमारी के लक्षण दिखते ही मैन्कोजेब का 2.5 कि.ग्रा. या वेलिडामाइसिन का 2 कि.ग्रा. या प्रोपिकोनाजोल या कार्बेन्डाजिम का 1 कि.ग्रा. की दर से 500-600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें। यदि आवश्यकता हो तो दूसरा छिड़काव 10 दिन पश्चात् करें।

तुलासिता रोग या भूरी धारीदार मृदुरोमिल आसिता: इस रोग में पत्तियों पर पीली धारियाँ पड़ जाती हैं। पत्तियों के नीचे की सतह पर सफेद रूई के समान फफूँदी दिखाई देती है। रोगी पौधों में भुट्टे कम बनते हैं या बनते ही नहीं हैं।

झुलसा रोग: इस रोग में पत्तियों पर लम्बे तथा कुछ अण्डाकार नाव के आकार के पीले से भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं जो बाद में काले हो जाते हैं और अधिक प्रकोप होने पर पत्तियाँ झुलस कर सूख जाती हैं।

उपचार: उपरोक्त दोनों रोगों की रोकथाम हेतु मैंकोजेब 75 डब्लू.पी. या जिनेब 75 डब्लू.पी. की 1.5-2.0 कि.ग्रा. मात्रा को 750-800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर की दर से बीमारी के लक्षण दिखाई देने पर छिड़काव करना चाहिए। दूसरा छिड़काव प्रथम छिड़काव के 10-15 दिन पर करना चाहिए।

तना सड़न रोग: यह रोग अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जहां अधिक पानी रूकता है, अधिक पाया जाता है। इसमें तने की पोरियों पर जलीय धब्बे दिखाई देते हैं जो शीघ्र ही सड़ने लगते हैं और उनमें से दुर्गन्ध आती है। पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती हैं तथा पौधे पोरी से टूटकर गिर जाते हैं।

उपचार: सिंचाई के पानी के साथ ब्लीचिंग पाउडर 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर खेत में डालें। खेत में पानी के निकास की उचित व्यवस्था बनाए।

कटाई एवं उपज: फसल पकने पर भुट्टों को ढ़कने वाली पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं। दानो में नमी की मात्रा लगभग 14% होनी चाहिए। दानों में नमी की मात्रा अधिक होने पर पॉप कार्न के दाने फूलते नही हैं। इसलिए दानों में नमी कम होने पर कटाई करनी चाहिए। पॉपकार्न की औसत पैदावार 30-35 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक प्राप्त हो जाती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

जल कुशल खेती: कृषि विज्ञान में इष्टतम सिंचाई की तकनीक

संदीप कुमार यादव, पीयूष यादव
ओम प्रकाश, सचिन कुमार
(परास्नातक छात्र) कृषि विभाग, इन्टीग्रल विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

डॉ. अभिनीत (सहायक प्राध्यापक) कृषि विभाग, इन्टीग्रल विश्वविद्यालय लखनऊ

रुद्रेश मिश्रा, आयुषी यादव (स्नातक छात्र) कृषि विभाग, इन्टीग्रल विश्वविद्यालय, लखनऊ

पानी हमारे ग्रह पर सबसे मूल्यवान संसाधनों में से एक है, विशेष रूप से कृषि के क्षेत्र में जहां यह फसलों को बनाए रखता है, आजीविका का समर्थन करता है और दुनिया की आबादी को खिलाता है। हालाँकि, जलवायु परिवर्तन और बढ़ती मांग के कारण पानी की बढ़ती कमी के साथ, जल-कुशल कृषि पद्धतियों की आवश्यकता कभी भी इतनी गंभीर नहीं रही है। कृषि विज्ञान के क्षेत्र में, जहां मिट्टी प्रबंधन और फसल उत्पादन का विज्ञान सर्वोपरि है, सिंचाई तकनीकों का अनुकूलन टिकाऊ और उत्पादक खेती की कुंजी है। आइए कुछ तकनीकों पर गौर करें जिनका उपयोग किसान और कृषिविज्ञानी इष्टतम सिंचाई के लिए कर रहे हैं।

बूंद से सिंचाई: ड्रिप सिंचाई एक ऐसी विधि है जहां पाइप, ट्यूब और एमिटर के नेटवर्क के माध्यम से पानी सीधे पौधे की जड़ों तक पहुंचाया जाता है। यह तकनीक वाष्पीकरण और अपवाह को कम करके पानी की बर्बादी को काफी कम कर देती है। ड्रिप सिंचाई ठीक उसी जगह पानी पहुंचाकर जहां इसकी आवश्यकता होती है, यह सुनिश्चित करती है कि पौधों को बिना अधिकता के नमी की निरंतर आपूर्ति मिलती रहे। यह कतार वाली फसलों, सब्जियों और बगीचों के लिए विशेष रूप से प्रभावी है। किसान अपनी फसलों की विशिष्ट आवश्यकताओं के आधार पर ड्रिप सिंचाई प्रणाली को अनुकूलित कर सकते हैं। इसमें जल वितरण की प्रवाह दर, अवधि और आवृत्ति को समायोजित करना शामिल है। इसके अतिरिक्त, ड्रिप सिंचाई को फर्टिगेशन के साथ जोड़ा जा सकता है, सिंचाई प्रणाली के माध्यम से उर्वरक वितरित करने की प्रथा, पानी का संरक्षण करते हुए फसल की वृद्धि को और बढ़ाती है।

परिशुद्धता कृषि: सटीक कृषि सिंचाई सहित कृषि पद्धतियों को अनुकूलित करने के लिए सेंसर, जीपीएस, ड्रोन और डेटा एनालिटिक्स जैसी तकनीक का उपयोग करती है। उदाहरण के लिए, मृदा नमी सेंसर, मिट्टी की नमी सामग्री पर वास्तविक समय डेटा प्रदान कर सकते हैं। इससे किसानों को कब और कितनी सिंचाई करनी है, इसके बारे में जानकारीपूर्ण निर्णय लेने में मदद मिलती है, जिससे अत्यधिक पानी भरने और पानी की बर्बादी को रोका जा सकता है।

मल्टीस्पेक्ट्रल कैमरों से लैस जीपीएस-निर्देशित ट्रैक्टर और ड्रोन खेतों के विस्तृत नक्शे बना सकते हैं, जो अलग-अलग नमी के स्तर या फसल के स्वास्थ्य वाले क्षेत्रों को उजागर कर सकते हैं। इसके बाद किसान अपनी सिंचाई योजनाओं को तदनुसार समायोजित कर सकते हैं, पानी ठीक वहीं लगा सकते हैं जहां इसकी आवश्यकता है और उन क्षेत्रों से बचें जो पहले से ही पर्याप्त

रूप से नम हैं। इससे न केवल जल संरक्षण होता है बल्कि फसल की पैदावार और गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

पलवार: मिट्टी की नमी को संरक्षित करने के लिए मल्चिंग एक सरल लेकिन प्रभावी तकनीक है। पौधों के चारों ओर की मिट्टी को पुआल, लकड़ी के चिप्स या प्लास्टिक फिल्म जैसी सामग्री से ढककर, किसान वाष्पीकरण को कम कर सकते हैं और खरपतवार की वृद्धि को रोक सकते हैं। इससे मिट्टी की नमी के स्तर को बनाए रखने में मदद मिलती है, जिससे कम बार और अधिक कुशल सिंचाई की अनुमति मिलती है। पुआल और लकड़ी के चिप्स जैसे कार्बनिक मल्च समय के साथ टूट जाते हैं, जिससे मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ जुड़ जाते हैं और इसकी जल-धारण क्षमता में सुधार होता है। दूसरी ओर, प्लास्टिक मल्च एक अवरोध पैदा करता है जो मिट्टी की सतह से पानी को वाष्पित होने से रोकता है। दोनों प्रकार की गीली घास को विभिन्न फसलों और बढ़ती परिस्थितियों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जा सकता है।

जल छाजन: वर्षा जल संचयन में बाद में सिंचाई में उपयोग के लिए वर्षा जल को एकत्र करना और भंडारण करना शामिल है। यह सरल तकनीकों के माध्यम से किया जा सकता है जैसे कि रेन बैरल स्थापित करना या अधिक जटिल प्रणालियाँ जैसे कि कुंड और जलाशय। संचयित वर्षा जल का उपयोग शुष्क अवधि के दौरान सिंचाई के पूरक के लिए किया जा सकता है, जिससे भूजल या सतही जल स्रोतों पर निर्भरता कम हो जाती है। जल संरक्षण के अलावा, वर्षा जल संचयन अतिरिक्त वर्षा जल को एकत्रित करके मिट्टी के कटाव और बाढ़ को कम करने में भी मदद कर सकता है। यह एक स्थायी अभ्यास है जो न केवल व्यक्तिगत खेतों को लाभ पहुंचाता है बल्कि आसपास के वातावरण में समग्र जल संरक्षण में भी योगदान देता है।

कवर क्रॉपिंग: कवर क्रॉपिंग में विशेष रूप से मिट्टी के स्वास्थ्य और नमी बनाए रखने में सुधार के उद्देश्य से फसलें लगाना शामिल है। ये कवर फसलें, जैसे तिपतिया घास, राई, या फलियां, उस अवधि के दौरान लगाई जाती हैं जब मुख्य नकदी फसल नहीं बढ़ रही होती है। वे मिट्टी के कटाव को रोकने, कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाने और जल घुसपैठ में सुधार करने में मदद करते हैं। कवर फसलों की जड़ प्रणालियाँ मिट्टी की संरचना को बढ़ाती हैं, जिससे पानी को जमीन में गहराई तक प्रवेश करने का मार्ग मिलता है। इससे नमी बेहतर बनी रहती है और बार-बार सिंचाई की आवश्यकता कम हो जाती है। जब कवर फसलों को वापस मिट्टी में शामिल किया जाता है, तो वे पोषक तत्वों का भी योगदान करते हैं, जिससे मुख्य फसल को फायदा होता है।

निष्कर्ष: बढ़ती पानी की कमी और जलवायु चुनौतियों के सामने कृषि की स्थिरता के लिए जल-कुशल खेती आवश्यक है। ड्रिप सिंचाई, सटीक कृषि, मल्चिंग, वर्षा जल संचयन और कवर क्रॉपिंग जैसी तकनीकों को अपनाकर, किसान जल संसाधनों का संरक्षण करते हुए अपनी सिंचाई प्रथाओं को अनुकूलित कर सकते हैं। इन तरीकों से न केवल पर्यावरण को लाभ होता है बल्कि फसल की पैदावार, मिट्टी के स्वास्थ्य और कृषि प्रणालियों की दीर्घकालिक व्यवहार्यता में भी सुधार होता है। जैसे-जैसे दुनिया की आबादी बढ़ती जा रही है, हमारे बहुमूल्य जल स्रोतों को संरक्षित करते हुए भविष्य की पीढ़ियों को खिलाने के लिए जल-कुशल कृषि तकनीकों को अपनाना महत्वपूर्ण होगा।

शिवहरे किसान सेवा केन्द्र डबरा
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाईयों के खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है

प्रो. ओमप्रकाश शिवहरे
82248-44542
78282-60543
पंजाब नेशनल बैंक के सामने, भितरवार रोड, डबरा
10/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कैसे करें मेंथा (पुदीना) उन्नत की खेती

बन्दना शाहू गुप्ता स्नातकोत्तर विद्यार्थी, विस्तार शिक्षा विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

बैसाखी सडांगी स्नातकोत्तर विद्यार्थी, विस्तार शिक्षा विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

पुदीने की फसल औषधीय रूप में की जाती है इसे पुदीना और मिंट के नाम से भी पुकारा जाता है इसके सम्पूर्ण पौधे को इस्तेमाल में लाया जाता है पुदीने का पौधा भूमि की सतह पर जड़ के रूप में फैलता है इसमें एक विशेष प्रकार की खुशबु पाई जाती है जिस वजह पुदीने का इस्तेमाल खाने वाली चीजों में खुशबु उत्पन्न करने के लिए भी किया जाता है मेंथा का इस्तेमाल विशेष रूप से दवाइयों को बनाने के अलावा पेय पदार्थों सौंदर्य प्रसाधनों सिगरेट और पान मसाला बनाने में भी करते है

पेट की बीमारियों के लिए पुदीना रामबाण औषधि मानी जाती है इसका सेवन करने से गर्मियों में लू से भी बचा जा सकता है इसके पौधों में कीट रोग का प्रकोप न के बराबर देखने को मिलता है, इसके पौधे की कटाई 3 से 4 बार की जा सकती है भारत में पुदीने की खेती बिहार, पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में मुख्य रूप से की जाती है किसान भाई पुदीने की खेत कर कम समय में अच्छी कमाई कर सकते है

पुदीना की खेती

पुदीने का पौधा शुष्क और अर्द्धशुष्क प्रदेशों में उगाया जाता है. इसका पौधा गर्म जलवायु में ज्यादा पानी देने पर अधिक पैदावार देता है. इस कारण इसकी खेती गर्मी के मौसम में ज्यादा की जाती है. अगर इसके पौधों को सर्दियों में पड़ने वाले पाले से बचा लिया जाए तो वर्षभर पैदावार दे सकते हैं. इसके पौधे को बारिश की आवश्यकता होती है. इसकी खेती के लिए सामान्य पी.एच. वाली भूमि उपयुक्त होती है.

उपयुक्त मिट्टी

मेंथा की खेती के लिए उचित जल निकासी वाली उपजाऊ भूमि की जरूरत होती है. जबकि भारी और चिकनी भूमि में इसकी खेती नही की जा सकती. क्योंकि इसकी पैदावार जमीन की ऊपरी सतह पर की जाती है, ऐसे में भारी चिकनी भूमि में जलभराव होने पर इसकी पैदावार खराब हो जाती है. इसकी अधिक पैदावार लेने के लिए भूमि में जीवाश्म और कार्बनिक पदार्थ पर्याप्त मात्रा में होने चाहिए. इसकी खेती के लिए जमीन का पी.एच. मान 6 से 7.5 के बीच होना चाहिए.

जलवायु और तापमान

मेंथा की खेती के लिए समशीतोष्ण जलवायु उपयुक्त होती है. भारत में इसकी खेती जायद और खरीफ की फसल के साथ की जाती है. जबकि सर्दियों के मौसम के इसकी खेती नही की जा सकती. क्योंकि सर्दियों में पड़ने वाले पाले से इसकी फसल को काफी नुक्सान पहुँचता है. गर्मी और बारिश का मौसम इसकी खेती के लिए लाभदायक होता है. इसके पौधों को शुरुआत में अंकुरित होने के लिए 20 से 25 डिग्री तापमान की जरूरत होती

हैं. जबकि विकास करने के लिए इसके पौधे को 30 डिग्री के आसपास तापमान की जरूरत होती है. इसका पौधा गर्मियों में अधिकतम 40 डिग्री तापमान को भी सहन कर सकता है.

उन्नत किस्में

मेंथा की कई उन्नत किस्में हैं जिन्हें बड़ी मात्रा में किसान भाई उगाना पसंद करते हैं. इन किस्मों को उनकी खुशबू और गुणवत्ता के आधार पर तैयार किया गया है.

जापानी पुदीना

मेंथा की ये एक विदेशी क़िस्म है. जिसके पौधे सीधे और फैलने वाले होते हैं. इसके तने से शाखाएं अधिक मात्रा में निकलती हैं. इस किस्म के मेंथा में 65 से 75 प्रतिशत मेंथॉल पाया जाता है. भारत में इस किस्म को उत्तर प्रदेश, राजस्थान और मध्य प्रदेश में अधिक मात्रा में उगाया जाता है. इस किस्म के पौधे की पत्तियां आकार में बड़ी और अंडाकार होती है. इसके पौधे पर सफ़ेद रंग के फूल गुच्छों में आते हैं.

स्पीयर मिन्ट

इस किस्म के पुदीना की खेती सालभर की जा सकती है. इसका पौधा 30 से 100 सेंटीमीटर लम्बा होता है. जो भूमि में फैले होता हैं. इसके पौधों और पत्तियों पर रोयें (रोंगटे) नही होते. इसके पौधे पर शाखाएं काफी ज्यादा बनती है. जिन पर बनने वाली पत्तियों का आकार छोटा होता है. इस किस्म के पौधे पर सफ़ेद और गुलाबी फूल निकलते हैं. इस किस्म के पौधे में मेंथॉल लगभग 65 प्रतिशत तक पाया जाता है.

बारगामॉट पुदीना

इस किस्म के पौधे शाखाओं युक्त कम लम्बाई के होते हैं. जिसकी पत्तियां रोयें मुक्त होती है. इसकी पत्तियों को मसलने पर उनसे धनिये की जैसी खुशबू आती है.

पिपर मिन्ट

मेंथा की इस किस्म को काला पुदीना के नाम से भी जाना जाता है. जो मेंथा की एक संकर किस्म है. जिसको मेंथा एक्वेटिका और मेंथा स्पिकाटा के संकरण से तैयार किया गया है. इसके पौधे 30 से 100 सेंटीमीटर लम्बाई के पाए जाते हैं. जिन पर बनने वाली शाखाओं की मात्रा अधिक होती है. इस किस्म के पौधों में मेंथॉल लगभग 50 प्रतिशत और मिथाइल 15 प्रतिशत पाया जाता है.

मेंथा आरवेंसिस

इस किस्म का पौधा लगभग दो फिट की लम्बाई का होता है. जिस पर शाखाएं कम पाई जाती है. इस किस्म को जंगली पुदीना भी कहा जाता है. इसकी पत्तियां दो सेंटीमीटर तक चौड़ी होती है. जिन पर रोयें अधिक मात्रा में पाए जाते हैं. इस किस्म की पत्तियों और फूल का रंग बैंगनी होता है. जबकि कुछ फूल सफ़ेद और गुलाबी भी होते हैं.

खेत की तैयारी

पुदीने की खेती हेतु शुरुआत में खेती की गहरी जुताई कर उसे खुला छोड़ दें. उसके कुछ दिन बाद उसमें गोबर की खाद डालकर उसे मिट्टी में मिला दें. खाद को मिट्टी में मिलाने के बाद खेत में पानी छोड़कर उसका पलेव कर दें। पलेव करने के तीन से चार दिन बाद जब जमीन जुताई के योग्य हो जाए, तब उसमें रोटावेटर चलाकर खेत की जुताई कर दें. जिससे मिट्टी भुरभुरी हो जाती है. उसके बाद खेत में पाटा लगाकर मिट्टी को समतल बना दें.

पौध तैयार करना

पुदीने की रोपाई के लिए पहले नर्सरी में इसकी पौध तैयार की जाती है. इसकी पौध जड़ों के माध्यम से तैयार की जाती है. नर्सरी में इनकी रोपाई फसल को खेत में लगाने से लगभग डेढ़ से दो महीने पहले की जाती है. नर्सरी में इनकी रोपाई प्रो-ट्रे में करनी चाहिए. नर्सरी में इनकी जड़ों की कटींग (सर्कस) को लगाने से पहले उन्हें पानी में धोकर गोमूत्र या कार्बेंडाजिम से उपचारित कर लेना चाहिए.

पौध रोपण का तरीका और टाइम

पुदीने की रोपाई नर्सरी और सीधे खेतों में भी की जा सकती है. सीधे खेतों में इसकी रोपाई करने के लिए खेत में 2 गुना 5 मीटर की क्यारियाँ तैयार कर लें. उसके बाद इसकी जड़ों को क्यारी में दो फिट की दूरी रखते हुए लगाए. एक हेक्टेयर में रोपाई के लिए 5 से 7 सेंटीमीटर लम्बाई वाले सर्कस की लगभग 5 किवंटल मात्रा काफी होती है. सर्कस इसकी उन जड़ों को कहा जाता है, जिनको खेत में बीज के रूप में उगाया जाता है. जड़ों की रोपाई से पहले उन्हें पानी में धोकर गोमूत्र या कार्बेंडाजिम से उपचारित कर लेना चाहिए. लेकिन सीधे क्यारी में लगाने से अगर कोई जड़ अंकुरित नही होती है तो वो जगह खाली बच जाती है. जिससे पैदावार कम मिलती है. इस कारण इसकी जड़ों को पहले नर्सरी में तैयार किया जाता है. नर्सरी में तैयार किये गए पौधों को भी क्यारी में दो फिट की दूरी पर लगाया जाता है. पुदीने के पौधों को वैसे तो सर्दी के मौसम को छोड़कर कभी भी लगा सकते हैं. लेकिन अच्छी पैदावार के लिए इसे फरवरी या मार्च महीने में खेतों में लगाया जाता है. अधिक देरी करने पर इसके पौधों मे पाए जाने वाले तेल की मात्रा कम हो जाती है.

पौधों की सिंचाई

पुदीने के पौधों को सिंचाई की ज्यादा जरूरत होती है. क्योंकि मिट्टी में नमी होने पर इसके पौधे अच्छे से विकास करते हैं. तेज गर्मी के मौसम में इसके पौधों की दो से तीन दिन के अंतराल में हल्की हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

जानिए...कृषि वानिकी के बारे में

बैसाखी सडांगी स्नातकोत्तर विद्यार्थी, विस्तार शिक्षा विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

बन्दना शाहू गुप्ता स्नातकोत्तर विद्यार्थी, विस्तार शिक्षा विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

देश की जनसंख्या के साथ-साथ पशुधन की संख्या भी तेज गति से बढ़ रही है। परिणामस्वरूप देश के भू-भाग का क्षेत्रफल स्थिर होने के कारण प्रति वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में पशुधन एवं मनुष्यों की आबादी का दबाव दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है वर्तमान में कृषि योग्य भूमि को आवास के लिए इस्तेमाल किया जाने लगा है। अब हमारा पर्यावरण भी प्रभावित हो रहा है।

ऐसी दशा में अब ऐसी जमीन बचती है जिस पर या तो किसी कारण से खेती नहीं कर सकते या वह भूमि खेती योग्य नहीं है। अतः ऐसी बेकार पड़ी हुई भूमि को हमें उपयोग में लाना है जिसे अन्न, लकड़ी, चारा एवं अन्य जरूरतों के लिए उपयोग में ला सकें। इसके लिए कृषिवानिकी एक वरदान के रूप में सिद्ध हुई है। कृषिवानिकी पद्धति को अपनाकर देश में बेकार पड़ी हुई जमीन का उपयोग भली-भाँति कर सकते हैं। इस प्रणाली के द्वारा किसान अपने ही खेत से विभिन्न प्रकार की आवश्यकता की वस्तुएँ जैसे इमारती लकड़ी, ईंधन, कृषि यंत्र के लिए लकड़ी, हरा चारा, रेशम, शहद, अन्न, फल तथा कूटीर उद्योग हेतु कच्चा माल आदि प्राप्त कर सकता है। कृषिवानिकी पद्धति से नत्रजन (नाइट्रोजन) स्थिर करने वाले पेड़ों जैसे सुबबूल, अंजन, शीशम, सिरस, नीम, बबूल आदि को लगाकर भूमि की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। दलहनी फसलों एवं वृक्षों की पत्तियों के द्वारा जीवांश पदार्थ को अधिक से अधिक मात्रा में भूमि में मिलाकर उर्वराशकिति में वृद्धि की जा सकती है द्य इसके साथ ही साथ रासायनिक खाद की मात्रा को कम किया जा सकता है। कृषिवानिकी पद्धति से भूमि का उपयोग बढ़ जाता है तथा फसल उत्पादन में होने वाले जोखिम घटते जाते हैं।

कृषिवानिकी क्या है

कृषिवानिकी जमीन के प्रबंधन. की ऐसी पद्धति है जिसके अंतर्गत एक ही भू-खण्ड पर कृषि फसलों और बहुउद्देशीय पेड़ों झाड़ियों के उत्पादन के साथ-साथ पशुपालन भी किया जाता है। कृषिवानिकी पद्धति से जमीन की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाया जाता है। सीधे शब्दों में फसलों के साथ वृक्ष (फलदार, इमारती, ईंधन एवं चारा प्रदान करने वाले) उगाने तथा साथ में पशुपालन करने की पद्धति को कृषिवानिकी कहते हैं।

वृक्ष+फसल + पशुपालन = कृषिवानिकी

कृषिवानिकी के मुख्य उद्देश्य

1. कृषि उत्पादन को सुनिश्चित करना एवं खाद्यानन को बढ़ाना 2. मृदाक्षरण में नियंत्रण 3. भूमि सुधार 4. ईंधन एवं इमारती लकड़ी की आपूर्ति करना 5. कुटीर उद्योगों को बढ़ाने के लिए अधिक साधन जुटाना एवं रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करना 6. पर्यावरण की सुरक्षा 7. पशुओं के लिए साल भर अच्छे गुणों वाले चारे प्रदान कर उनकी उत्पादन क्षमता को बढ़ाना 8. उसर एवं

बीहड़ भूमि का सुधार करना 9. फलों के उत्पादन को बढ़ाना 10. जलाऊ लकड़ी की आपूर्ति करके गोबर को ईंधन के रूप में प्रयोग करने से रोकना तथा इसे खाद के रूप में उपयोग करना

उपरोक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने देश के विभिन्न जलवायु वाले क्षेत्रों में कृषिवानिकी पर अनुसंधान करने के लिए अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना की शुरूआत वर्ष 1983 में की। इस परियोजना के अन्तर्गत आजकल 37 अनुसंधान केन्द्र हैं जो भाण् कृण् अनुण् परिण् के 10 विभिन्न संस्थानों एवं राज्यों के कृषि विश्वविद्यालयों में अनुसंधान कार्य कर रहे हैं। इसके अलावा मई, 1988 में राष्ट्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान केन्द्र की स्थापना झाँसी में हुई। इस संस्थान द्वारा कृषि वानिकी में अनुसंधान, प्रशिक्षण तथा प्रसार कार्य किया जा रहा है।

कृषिवानिकी पद्धतियां

कृषिवानिकी की हमारे देश में निम्नलिखित प्रमुख पद्धतियाँ प्रचलित हैं। किसान बन्धु अपनी सुविधा के अनुसार पद्धतियाँ अपना सकते हैं।

1. **कृषि-वन पद्धतिः** इस पद्धति में कृषि फसलों के इमारती लकड़ी देने वाले पेड़ों को लगाते हैं।

2. **कृषि-उद्यानिकी पद्धतिः** इस पद्धति में कृषि फसलों के साथ फलदार पेड़ों को लगाते हैं।

3. **कृषि-वन-उद्यानिकी पद्धतिः** इसमें फसलों के साथ-साथ फलदार तथा चारा, ईंधन, इमारती लकड़ी प्रदान करने वाले वृक्षों को उगाया जाता है।

4. **वन-चारागाह पद्धतिः** इस पद्धति में चारा प्रदान करने वाली घासों, दलहनी चारों के साथ-साथ वृक्षों को लगाते हैं। यह पद्धति ऐसी जमीन पर करते हैं जहाँ खेती (फसलें) नहीं की जा सकती हो।

5. **उद्यानिकी-चारागाह पद्धतिः** इसमें चारा प्रदान करने वाली घासों के साथ-साथ फलदार वृक्षों को लगाते हैं। इसी पद्धति को बेकार पड़ी जमीन पर अपनाते हैं।

6. **कृषि-वन-चारागाह पद्धतिः** इस पद्धति में खेती योग्य जमीन में वृक्षों के साथ-साथ जमीन के कुछ हिस्सों में कृषि फसलें तथा कुछ भाग में चारा वाली घासों को लगाते हैं।

7. **कृषि-उद्यानिकी-चारागाह पद्धतिः** इस पद्धति में खेती योग्य जमीन में फलदार वृक्षों के साथ-साथ कृषि फसलें तथा जमीन के कुछ हिस्सों में चारा प्रदान करने वाली घासों को लगाते हैं।

8. **मेड़ वृक्षारोपणः** इस पद्धति में खेती योग्य जमीन पर खेत के चारों तरफ वृक्षों को लगाते हैं।

कृषिवानिकी में लगाये जाने वाले वृक्षों के गुण

1. वृक्षों की बढ़वार तेजी से हो।
2. बार-बार कटाई-छँटाई की सहन शक्ति हो।
3. पेड़ों की जड़ें गहरी जाने वाली हों, जिससे फसलों एवं पेड़ों को पोषक तत्व प्राप्त करने में स्पर्धा न हो।
4. वृक्ष का फैलाव कम हो जिससे फसलों के ऊपर छाया का असर कम पढ़े।
5. पेड़ में शाखाएं कम निकलती हों।
6. पेड़ों का पतझड़ ऐसे समय में हो कि फसल के ऊपर हानिकारक प्रभाव न पढ़े।
7. पत्तियां जमीन में गिरने के बाद मिट्टी में जल्दी सड़ जायें।
8. पेड़ वायुमण्डलीय नाइट्रोजन (नत्रजन) स्थिर करना वाले हों जिससे भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि हो सके।
9. घर के आस-पास कृषिवानिकी- यह पद्धति हमारे देश के केरल, उड़ीसा आदि राज्यों में प्रचलित है। इस पद्धति में घर के आस-पास पेड़ (ईंधन, फल, चारा आदि), फूल, औषधि, सब्जी, मसाला आदि वाले पौधे साथ-साथ लगाते हैं जिससे अनेक प्रकार की जरूरतों की पूर्ति होती है।
10. पेड़ों की पत्तियों में पौष्टिक तत्व अधिक हो जिसे जानवर खायें।
11. वृक्षों का चुनाव करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि उस क्षेत्र की सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय आवश्यकता की पूर्ति करने वाले हों।

आत्मनिर्मरता एवं आमदनी बढ़ाने में कृषिवानिकी का योगदान : वैज्ञानिकों द्वारा कृषकों के खेत में शोध द्वारा पाया गया कि अमरूद-मूँगफली-गेहूँ, एवं अमरूद-मूँगफली-जौ कृषिवानिकी प्रणाली में चौथे वर्ष से कृषक को केवल फसल द्वारा होने वाली आय की तुलना में 20 प्रतिशत अधिक आमदनी प्राप्त होती है जो कि उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। कृषिवानिकी प्रबंधन से किसानों को स्वरोजगार के साधन प्राप्त होते हैं जिससे उनमें आत्मनिर्मरता आती है। कृषिवानिकी से साल भर कुछ न कुछ कार्य मिलता रहता है। जैसे. पौधशाला की देख-रेख, पौधरोपण, कलम बाँधना, निराई-गुड़ाई, रोग तथा कीड़े से बचाव हेतु दवा का छिड़काव, फलों की तुड़ाई, डिब्बाबंदी, बाजार में विपणन, गड्ढे खोदना, गोबर तथा कम्पोस्ट खाद गड्ढों में डालना, गोंद, छाल तथा ईंधन की लकड़ी इकट्ठा करना आदि इस तरह कृषिवानिकी से स्वरोजगार के साधन प्राप्त होते हैं। इसके साथ-साथ कूटीर उद्योगों के लिए कच्चे माल की आपूर्ति भी किसानों द्वारा की जाती है जिससे उनमें आत्मनिर्मरता प्राप्त होती है। इस प्रकार कृषिवानिकी के प्रबंधन में किसानों के खाली समय को उपयोग में लाया जा सकता है।

वर्तमान में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद -केन्द्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान संस्थान, झाँसी द्वारा भारत के विभिन्न राज्यों को कृषिवानिकी नीति को क्रियान्वयन करने में सहायता प्रदान की जा रही है जिससे किसानों को भूमि उपयोग बढ़ाने के साथ कृषिवानिकी से लाम मिले।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

पौष्टिक एवं गुणकारी मीठी नीम (करी पत्ता)

वीरेन्द्र कुमार, विपिन, श्याम प्रकाश
(शोध छात्र) सब्जी विज्ञान विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय अयोध्या

अनिल कुमार (सहायक प्राध्यापक)
सब्जी विज्ञान विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ.प्र.)

पोषण वाटिका में कई ऐसे पौधे पाए जाते हैं, जिनका उपयोग खाने का स्वाद बढ़ाने के साथ-साथ कई गंभीर बीमारियों के इलाज के लिए भी किया जा सकता है। इन्हीं में से एक है करी पत्ता। इसका वैज्ञानिक नाम मुराया कोएनिजी है। इसे करी पत्ता, कड़ी पत्ता और मीठी नीम जैसे नामों से भी पुकारा जाता है। अंग्रेजी में इसे करी लीफ और संस्कृत में कृष्ण निंबा कहकर संबोधित किया जाता है।

मीठा नीम का उपयोग भारत में बहुत साल पहले से किया जा रहा है। इसके गीले और सूखे पत्तों को घी या तेल में तल कर कढ़ी या साग आदि में छौंक लगाने से भोजन अति स्वादिष्ट, सुंधित हो जाते हैं। करी पत्ता के पत्तों को दाल में छौंक देने से दाल स्वादिष्ट बन जाती है। करी पत्ता को चने के बेसन में मिलाकर पकौड़ी बनाई जाती है। इसके औषधीय गुणों और विशेषताओं को देखते हुए इसका दैनिक भोजन मे ज्यादा से ज्यादा उपयोग किया जाना चाहिए ।

इसकी पत्तियां औषधीय गुणों से भरपूर होती है। यह हमारी सेहत के लिए कई तरह से फायदेमंद है। आयरन और फॉलिक एसिड से भरपूर करी पत्ता में फाइबर होता है जो इन्सुलिन को प्रभावित करके ब्लड शुगर लेवल को कम करता है। इतना ही नहीं यह पाचन क्रिया को भी सही रखने में मदद करता है। जिस वजह से हमें रोजाना इसे अपने भोजन में जरूर शामिल करना चाहिए। **करी पत्ते से होने वाले होने वाले फायदे इस प्रकार है-**

कोलेस्ट्रॉल लेवल कम करना

करी पत्ता खून में कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करता है। इसके सेवन से वजन बढ़ने का खतरा कम होता है। यह खून में अच्छे कोलेस्ट्रॉल की मात्रा बढ़ाकर दिल से जुड़ी बीमारियों से दूर रखता है।

डायबिटीज

ब्लड शुगर कंट्रोल करने के लिए करी पत्ते का सेवन करना फायदेमंद माना जाता है। इसमें मौजूद फाइबर इन्सुलिन पर सकारात्मक प्रभाव डालते हैं जो ब्लड शुगर लेवल को कंट्रोल में रखने में मदद करता है।

कफ नाशक

कफ होने, कफ सूख जाने या फेफड़ों में जमाव की स्थिति में कड़ी पत्ता बेहद मददगार साबित होता है। इसके लिए कड़ी पत्ते को पीसकर या फिर इसका पाउडर शहद के साथ सेवन करना चाहिए।

अनीमिया

आयरन और फॉलिक एसिड के एक बेहतरीन स्त्रोत होने के कारण कड़ी पत्ता शरीर को आयरन प्रदान करता है और एनीमिया जैसी समस्याओं से बचाता है। इसके लिए रोजाना खाली पेट कड़ी पत्ता और खजूर खाने से लाभ होता है। इसके अलावा इसमें मौजूद विटमिन सी हमारी सेहत के लिए बहुत फायदेमंद है और यह इम्युनिटी बूस्टर का काम करती है ।

चोट को ठीक करना

अगर किसी तरह की चोट या कोई स्किन पर घाव, जलन हो रही हो तो यह बहुत फायदेमंद होता है। इसमें मौजूद एंटीऑक्सीडेंट, एंटी- बैक्टीरियल और एंटीफंगल स्किन के लिए गुणकारी होता है।

लीवर को स्वस्थ रखें

लीवर कमजोर होने पर करी पत्ता फायदेमंद साबित हो सकता है। इसमें मौजूद विटामिन-सी लीवर को दुरुस्त करते हैं। कब्ज हो तो इसका सेवन करने से फायदा होता है। पाचन संबंधी समस्या या फिर दस्त लगने पर कड़ी पत्ते को पीसकर छाछ में मिलाकर पीने से लाभ होता है। यह पेट की गड़बड़ी को भी शांत करता है और पेट के सभी दोषों का निवारण करने में सहायक होता है।

आंखों की रोशनी बढ़ाने में

करी पत्ता में मौजूद विटमिन और कैरोटेनॉइड्स हमारी आंखों को स्वस्थ रखने के साथ ही आंखों की रोशनी को भी फायदा पहुंचाता है।

त्वचा सम्बन्धी रोगो में

किसी भी तरह के त्वचा संबंधी रोग में कड़ी पत्ता फायदेमंद होता है। मुहांसे या अन्य समस्याओं मे प्रतिदिन कड़ी पत्ता खाना और और पेस्ट बनाकर लगाने से फायदेमंद होता है।

बालों के लिए भी फायदेमंद

करी पत्ता में एंटिऑक्सिडेंट्स बालों को मॉइस्चराइज कर ड्राईनेस को दूर करता है। इसके अलावा इसमें एंटि बैक्टीरियल प्रॉपर्टीज होती हैं, जो बालों को किसी भी तरह के इंफेक्शन होने से बचाता है। बालों में अगर डैंड्रफ हो तो यह इसे खत्म करने का अच्छा साधन माना गया है। बालों को घना, काला और मजबूत बनाने के लिए इसको नारियल तेल में उबालकर उस तेल को बालों में लगाकर और अच्छी तरह से मालिश करने से फायदा होता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कृषि के लिए नई सौगात : ड्रोन

विकास पटेल (शोध छात्र) सब्जी विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बांदा

डॉ. राजेश कुमार सिंह प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष सब्जी विज्ञान, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बांदा

अनिल कुमार सिंह प्राविधिक सहायक, कृषि विभाग, चंदौली

अनामिका चौरसिया शोध छात्रा, सब्जी विज्ञान विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

शमशेर बहादुर सिंह भा. कृ. अन. प.- भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

नई तकनीक और ड्रोन की मदद से देश में खेती की तस्वीर बदलने लगी है। ड्रोन भारतीय कृषकों के लिए एक नई रोशनी की किरण आई है, जिसने कृषि क्षेत्र में क्रांति ला दी है। ड्रोन का उपयोग कृषि में किसानों को नई तकनीकों के साथ जोड़ने में सहायक हो रहा है और उन्हें बेहतरीन उत्पादक बना रहा है। खेत में खड़ी फसल का निरीक्षण करने के लिए अब किसानों को खेत तक जाने की जरूरत नहीं है। नए जमाने में ऐसे ड्रोन आ गए हैं जो किसानों को वह डाटा उपलब्ध कराते हैं जिससे उन्हें फसल की स्थिति के साथ सामने आ रहे समस्याओं के बारे में भी पता लग जाता है। कृषि को बढ़ाने और फार्म सेक्टर में इसकी सफलता को देखते हुए देश के कई इलाकों में खेती में ड्रोन का उपयोग बढ़ा है।

विदेशो में काफी समय से ड्रोन का उपयोग खेती के लिए किया जा रहा है लेकिन भारत में अभी बहुत सिमित जगह पर इसका प्रयोग किया जा रहा है इसका मुख्य कारण एक तो अत्याधुनिक तकनीक का होना और साथ ही कीमतों अधिक होना है। लेकिन भविष्य में इसकी उपयोगिता को देखते हुए सरकार भी कार्यरत है कि आने वाले समय में खेती में ड्रोन का उपयोग किया जा सके। सामान्य तौर पर निगरानी के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला ड्रोन की रेंज 100 किलोमीटर तक होती है एक बार बैटरी चार्ज हो जाने पर यह काफी ऊंचाई पर 100 किलोमीटर प्रति घंटा की गति से उड़ सकता है, तथा एक बैटरी लगभग 1: 30 घंटे चलती है ।

कृषि में उपयोग होने वाले ड्रोन के प्रकार

सर्वेक्षण और मॉनिटरिंग ड्रोन: उच्च गुणवत्ता तस्वीरों और वीडियोग्राफी के लिए डिजाइन किए गए हैं। खेतों की स्थिति, पोषण स्तर, और पानी की उपलब्धता की मॉनिटरिंग के लिए इस्तेमाल होते हैं।

सर्वेक्षण और मॉनिटरिंग ड्रोन: उच्च गुणवत्ता तस्वीरों और वीडियोग्राफी के लिए डिजाइन किए गए हैं। खेतों की स्थिति, पोषण स्तर, और पानी की उपलब्धता की मॉनिटरिंग के लिए इस्तेमाल होते हैं।

उर्वरक स्प्रेइंग ड्रोन: किसानों को अपनी फसलों को उर्वरकों से सही समय पर समृद्धि प्रदान करने के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं। ये ड्रोन उर्वरकों को सीधे और सही मात्रा में प्रदान करने में मदद करते हैं, जिससे फसलों का प्रबंधन सुधारता है।

रोग और कीट प्रबंधन ड्रोन: फसलों पर रोग और कीटों की पहचान करने और उनके खिलाफ उपाय करने के लिए इस्तेमाल होते हैं। ये ड्रोन अनुकूलित प्रबंधन योजनाओं के लिए जानकारी प्रदान करते हैं।

ड्रोन के लाभ

कृषि खेतों का सर्वेक्षण: ड्रोन का एक मुख्य कार्य है कृषि खेतों का सर्वेक्षण करना। इससे किसान अपने खेतों की खुदाई, पानी पर्यावरण, और रोग की पहचान कर सकता है, जिससे उन्हें अपने फसलों को सही समय पर सही देखभाल मिल सकती है।

बीज रोपण: ड्रोन से बीज रोपण, अपेक्षाकृत एक नई तकनीक है और यह व्यापक रूप से उपयोग नहीं किया जाता है, लेकिन कुछ कंपनियां ड्रोन रोपण के साथ प्रयोग कर रही हैं। अनिवार्य रूप से, निर्माता सिस्टम के साथ भिन्न- भिन्न प्रयोग कर रहे हैं, जो बीज को तैयार मिट्टी में सीधे प्रविष्ट कराने की क्षमता रखते हैं।

उर्वरक की वितरण में सहायक: ड्रोन से किसान अपनी फसलों को बेहतरीन रूप से पोषित करने के लिए उर्वरकों की सही मात्रा में और सही स्थान पर डाल सकता है। ड्रोन जमीन को स्कैन करते हैं तथा तरल की सही मात्रा का छिड़काव फसल पर करते है। जमीन से सटीक दूरी और कवरेज के लिए वास्तविक समय में छिड़काव किया जाता है, जो जीपीएस से समकालिक होता है। परिणामस्वरुप दक्षता में वृद्धि के साथ-साथ रसायनों का मिट्टी में घुलना एक अप्रत्यक्ष हानिकारक प्रभाव डालता है। विशेषज्ञों का मानना है कि ड्रोन हवाई छिड़काव की कार्यक्षमता पारंपरिक मशीनरी की तुलना में पांच गुना ज्यादा होती है। इससे न केवल खर्च कम होता है, बल्कि फसलों की गुणवत्ता भी बढ़ती है।

रोग और कीट प्रबंधन: ड्रोन के साथ, किसान अपनी फसलों पर लगे रोग और कीटों की पहचान कर सकता है। इसके बाद, उन्हें ठीक से उपाय करने के लिए तत्पर रह सकता है, जिससे उसकी फसलें सुरक्षित रह सकती हैं।

समय और ऊर्जा की बचत: ड्रोन का उपयोग किसानों को खेतों की समीक्षा के लिए आसानी से करने की अनुमति देता है, जिससे समय और ऊर्जा की बचत होती है।

पर्यावरण सुरक्षा: ड्रोन का उपयोग करके किसान अपनी फसलों की अच्छी देखभाल करके कीटनाशक और उर्वरकों का उपयोग कम कर सकता है, जिससे पर्यावरण को बचाने में सहायक होता है।

ड्रोन के उपयोग की सीमाएं

ऊचाई की सीमा: ड्रोन की ऊचाई की सीमाएं जो कृषि के लिए समस्याएं पैदा कर सकती हैं।

बैटरी की समस्या: ड्रोन की बैटरी की कमी और चार्जिंग के समय की समस्याएं।

- वायुमंडल और अपरिहार्य आधारित सीमाएं।
- बर्फबारी, बारिश, तूफान जैसी परिस्थितियों में ड्रोन की कमी।
- किसानों की अनुपस्थिति और डिजिटल असमर्थता।
- उचित तकनीकी ज्ञान की कमी।

खेती में ड्रोन से संभावनाएं

ड्रोन के उपयोग से किसानो को अपनी फसल के भीतर किसी पौधे पर पनप रही बीमारी का पता लगाने में आसानी होगी और समय पर निदान भी किया जा सकेगा। ड्रोन में लगे विभिन्न प्रकार के सेंसर से फसलों में होने वाली बीमारियों और खरपतवार का पता लगाया जा सकता है। सबसे अधिक मुश्किल ऊंचाई वाली फसलों में आती है, जैसे गन्ना, ज्वार, बाजरा आदि लेकिन ड्रोन सभी फसलो में आसानी से कम समय लेते हुए यह काम कर देता है। फसलों पर कीटनाशको का छिड़काव करना बहुत जोखिम भरा होता है, इन कीटनाशको से बहुत सी बीमारी होने का खतरा होता है। ड्रोन के जरिये खेतो के अलावा बड़े बागानों और पशु फर्मो पर भी नजर रखी जा सकती है।

निष्कर्ष

ड्रोन का उपयोग कृषि में एक नई क्रांति का सूचक है। इससे किसानों को सशक्त करने में मदद मिल रही है, जिससे वे अपनी फसलों को बेहतरीन रूप से देखभाल कर सकते हैं। इस तकनीकी उन्नति के साथ, हमारे किसान नए आयामों की ओर कदम बढ़ा रहे हैं, और सुरक्षित भविष्य की दिशा में बढ़ रहे हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

हल्दी की वैज्ञानिक खेती

उमेश कुमार विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृषि वानिकी), कृषि विज्ञान केंद्र, लेदौरा, आजमगढ़-II[1]

डॉ. एम. पी. गौतम विषय वस्तु विशेषज्ञ (पादप रक्षा), कृषि विज्ञान केंद्र, लेदौरा, आजमगढ़-II[2]

डॉ. एल.सी. वर्मा (वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष), कृषि विज्ञान केंद्र, लेदौरा, आजमगढ़-II[3]

विभिन्न खाद्य सामग्रियों में मनमोहक रंग प्रदान करने में हल्दी का एक अपना विशेष महत्व है। इसका प्रयोग सब्जी दाल एवं अचार बनाने में मसाले के रूप में किया जाता है। इसके अलावा हल्दी का उपयोग कई तरह की औषधियों को तैयार करने के लिए भी करते हैं। दूध के साथ हल्दी का सेवन करने से अंदरूनी चोट तेजी से ठीक हो जाती है। उद्योगों में इसका उपयोग ऊन, सिल्क तथा कपड़ो की रंगाई में किया जाता है। हल्दी में बहुत से खास गुण पाए जाते है। इसके कंद में कुर्कमिन होता है, तथा एलियोरोजिन को भी इससे निकाला जाता है। हल्दी में स्टार्च अधिक मात्रा में पाया जाता है, इसके अलावा इसमें प्रोटीन, वसा, विटामिन 'ए', पानी, कार्बोहाइड्रेट, रेशा और खनिज लवण की भी पर्याप्त मात्रा पायी जाती है।

जन्म स्थान एवं विस्तार: हल्दी का जन्म स्थान भारत ही माना जाता है। भारत में व्यवसायिक स्तर पर हल्दी की खेती पश्चिम बंगाल, केरल, मेघालय, तमिलनाडु, ओडिशा, गुजरात, महाराष्ट्र और कर्नाटक राज्यों में की जाती है, तथा अकेले आंध्र प्रदेश में 40 प्रतिशत हल्दी का उत्पादन किया जाता है। वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश राज्य के बाराबंकी और बहराइच जिले में भी इसकी खेती की जाने लगी है।

उन्नतशील प्रजातियां: लकाडोंग, अल्लेप्पी, मद्रास, इरोड, सांगली, सोनिया, गौतम, रश्मि, सुरोमा, रोमा, कृष्णा, गुन्टूर, मेघा, सुकर्ण, कस्तूरी, सुवर्णा, सोना, सुगना, पन्त पीताम्भ, सुगंधा, सी.ओ.-1,आर.एच.5, आर.एच. 13/90, राजेन्द्र सोनिया, सोभा, सुदर्शन, सुवर्णा, प्रभा, प्रतिभा, आजाद हल्दी-1, नरेन्द्र हल्दी-1, 2, 3, केसरी आदि।

भूमि का चुनाव, जलवायु एवं तापमान: उर्वराशक्ति से भरपूर 5 से 7.5 के बीच पी.एच. मान वाली दोमट, जलोढ़ और लैटेराइट मिट्टी हल्दी की उन्नत खेती सबसे बढ़िया मानी जाती है एवं जल निकासी की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। इसकी खेती बगीचों में अंतरवर्तीय फसल के रूप में भी की जा सकती है। हल्दी के पौधों को गर्म और नम जलवायु की आवश्यकता होती है। इसके बीजो को आरम्भ में अंकुरित होने के लिए 18-20 से.ग्रे. सेल्सियस का तापमान होना चाहिए, तथा पौधों को विकास करने के लिए सामान्य तापमान की आवश्यकता होती है।

खेत की तैयारी एवं उर्वरक प्रबंधन: खेत की अंतिम जुताई के 20-25 दिन पहले गोबर की सड़ी खाद 20-25 टन प्रति हेक्टेयर से मिला लें। इसके अतिरिक्त एक हेक्टर खेत के लिए 100-120 किलो ग्रा. नाइट्रोजन, 60-80 किलो ग्रा. फास्फोरस, 80-100 किलो ग्रा. पोटाश, एवं 20 किलो ग्रा. जिंक सल्फेट की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की एक-तिहाई मात्रा, फास्फोरस पोटाश एवं जिंक की पूरी मात्रा खेत की अंतिम जुताई के समय मिलकर कर, खेत की जुताई करके महीन एवं भुरभुरा बना लें। नाइट्रोजन का दूसरा भाग बुवाई के करीब 40 से 45 दिन बाद तथा तीसरा भाग 80 से 90 दिन बाद खड़ी फसल में देकर मिट्टी चढ़ाना चाहिये।

बीज की मात्रा एवं बीजोपचार: बीज की मात्रा प्रकन्दों के आकार व बोने की विधि पर निर्भर करता है। शुद्ध फसल बोये जाने के लिये 20-25 क्विंटल, जबकि मिश्रित फसल हेतु 12-15 क्विंटल प्रकन्द की प्रति हेक्टेयर बीज आवश्यकता होती है। प्रकन्द 7-8 सेमी लम्बे तथा कम से कम दो आंखों वाले होने चाहिये। यदि कन्द बड़े हो तो उन्हे काटकर बुवाई की जा सकती है। बुवाई के पूर्व प्रकन्दों को थिरम या मैंकोजेब नामक किसी एक दवा की 2.5 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोलकर बीज को 30-50 मिनट तक उपचारित करके छाया में सुखाकर बुवाई करनी चाहिये। भूमि में यदि दीमक लगने की सम्भावना हो तो उपरोक्त रसायनों में क्लोरोपाईरीफॉस की 2 मिली मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से मिलाकर उपचारित करना चाहिये।

बुवाई का समय तथा विधि: हल्दी की बिजाई जलवायु, क़िस्म एवं सिंचाई सुविधा पर भी निर्भर करती है लेकिन सामान्यतः हल्दी की बिजाई का सबसे उपयुक्त समय 15 मई लेकर 15 जून तक मन गया है लेकिन कहीं-कहीं इसकी बुवाई 15 अप्रैल से 15 जुलाई तक की जाती है। आमतौर पर किसान हल्दी की बुवाई समतल क्यारियों में करते है। परंन्तु जहां पर पानी रुकने की संभावना हो वहां पर हल्दी की बुवाई 15-20 सेमी. उंची मेड़ों पर भी की जा सकती है। इन क्यारियों में प्रकन्दों की पंक्ति से पंक्ति 40-45 सेमी. की दूरी पर 20-25 सेमी के अन्तराल पर 6-7 सेमी की गहराई पर बुवाई करते हैं। बुवाई के पश्चात खेत में नमी बनाये रखने तथा खरपतवार के नियन्त्रण के लिये सूखी घास-फूस, पत्ती, पुआल या भूसे को पलवार के रूप में मोटी परत बिछाने से जमाव शीघ्र होता है तथा उपज में 40% तक बढ़ोत्तरी पाई गई है। बोने के बाद यदि खेत में नमी कम है तो पानी भी दिया जाता है। इसकी खेत छायादार स्थानों जैसे बाग़ आदि में भी आसानी से की जा सकती है।

सिंचाई: हल्दी की फसल को सिमित सिचाई की आवश्यकता होती है। बुवाई के बाद वर्षा न होने तक 4-5 सिंचाई की आवश्यकता होती है। गर्मी के मौसम में हल्दी की सिचाई 7-8 दिन तथा बारिश के मौसम में आवश्यकतानुसार सिचाई करें एवं ठण्ड के मौसम में 15-16 दिन के अंतराल पर सिचाई करें(बीज प्रकन्दों के जमाव तथा प्रकन्दों की बढ़ोत्तरी के समय (अक्टूबर-दिसंबर) भूमि को नम रखना अत्यन्त आवश्यक है।

निराई- गुड़ाई एवं मिट्टी चढ़ाना: हल्दी के पौधों पर खरपतवार नियंत्रण के लिए निराई- गुड़ाई की जाती है। हल्दी में समान्यत- 3-4 निराई-गुड़ाई की आवश्यकता होती है। यदि पलवार बिछाया गया हो तो काफी हद तक खरपतवार नियन्त्रण हो जाता है। बुवाई के 30, 60 व 90 दिनों बाद निराई-गुड़ाई करनी चाहिये। अक्टूबर-नवम्बर माह में गुड़ाई करके पौधें के आधार पर मिट्टी चढ़ाने से प्रकन्दों का समुचित विकास होता है।

रोग प्रबंधन

प्रकन्द विगलन- इस रोग में पौधें की पत्तियाँ सूखना, प्रकन्दों का रंग चमकीले नारंगी से भूरा होना, प्रकन्द उपर से स्वस्थ दिखाई देना लेकिन अन्दर सड़ जाते हैं। इस रोग के उपचार हेतु मेंकोजब तथा कार्बेन्डाजिम नामक रसायनों की दो-दो ग्राम मात्रा प्रति लिटर पानी में घोलकर छिड़काव करे।

पत्ती चित्ती- इस रोग के कारण पत्तियों के दोनों सतहों पर धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में भूरे होकर सूख जाते हैं। इस रोग के नियन्त्रण के लिये बुवाई के समय रोग रहित प्रकन्दों का चयन एवं खेत से जल निकास के उचित व्यावस्था करना चाहिये। रोग का अधिक प्रकोप होने पर मेंकोजेब 0.2 प्रतिशत तथा कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत के मिश्रण के घोल का छिड़काव करें।

पत्ती धब्बा- इस रोग से ग्रसित पौधें की पत्तियों तथा डंठल पर छोटे-छोटे धब्बे दिखाई देते हैं। ये छोटे-छोटे धब्बे मिलकर बड़े हो जाते हैं जिससे पत्तियां सूख जाती हैं। इसके नियन्त्रण के लिये कैप्टान, जिनेब या कॉपर आक्सीक्लोराइड नामक रसायन का 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिये।

कीट नियंत्रण

थ्रिप्स: यह कीट पत्तियों का रस चूसकर पत्तियों को कमजोर कर देतीं है। जो धीरे-धीरे पीली पड़कर सूख जाती हैं। इस कीट की रोकथाम के लिये 30 मिली डायमेक्रान 1000 ई.सी. को 1000 ली. पानी या इमिडाक्लोरोपिड की 2 मिली मात्रा 1 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

तना छेदक: यह कीट तने के अन्दर प्रवेश कर रस चूसता है जिससे नयी पत्तियाँ सूखने लगती हैं। इस कीट का प्रकोप होने पर मोनोक्रोटोफोस नामक रसायन की 1.5 मिली मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर जुलाई-अक्टूबर माह तक एक महीने के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिये।

पत्ती लपेटक कीट: इस कीट की सूडियाँ पत्तियों को लपेट लेती हैं। जिससे पत्ती मुड़ी सी दिखाई देती है। इस कीट नियन्त्रण के लिये थायोडान या डायमिथियेट रसायन की 1.5 मिली मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

कंद की खुदाई: जब पौधें की पत्तियां पीली होकर सूखने लगती है तब फसल खुदाई योग्य हो जाती है। अगेती हल्दी लगभग 7-8 महीनों में खुदाई के लिए तैयार हो जाती जाती है तथा पछेती किस्म को करीब 8-9 महीने लग जाते हैं। पूर्ण रूप से परिपक्व प्रकन्द की खुदाई इस प्रकार करनी चाहिये कि प्रकन्द कटने व छिलने न पाये। कंदो के खुदाई के बाद उन्हें पानी से धोकर अच्छे से साफ कर लें। कदों को उपचारित करने के लिए प्रति लीटर के हिसाब से सोडियम बाइकार्बोनेट की 10 ग्राम की मात्रा को उबलते हुए पानी में डालकर मिला लें। उसके बाद इन कंदो को भी उसी में डाल दे, फिर उन्हें पानी से निकालकर ठीक से छायादार जगह पर सुखा लें। इससे हल्दी का रंग आकर्षक दिखाई देने लगता है।

उपज: हल्दी की उपज उगायी जाने वाली किस्मों पर निर्भर करती है। यदि हल्दी की उन्नत प्रजातियों की खेती वैज्ञानिक ढ़ंग से की जाय तो इससे 250-400 क्विंटल प्रति हेक्टेयर पर प्रकन्द प्राप्त किये जा सकते हैं। इन प्रकन्दों से 20-25 प्रतिशत तक की सूखी हल्दी प्राप्त की जा सकती है। असिंचित क्षेत्रों तथा बागों में बोई गयी फसल से 200-210 क्विंटल तक हल्दी की उपज प्राप्त हो सकती है।

भण्डारण: बीज के लिये हल्दी के भण्डारण हेतु खुदाई के बाद मूल प्रकन्दों तथा अच्छे प्रकन्दों को छाँटकर अलग कर लेते हैं। कन्दों को अन्धेरे में रखते हैं। कीटों व कन्दों के गलन से रोकने के लिये कन्दों को 0.2% बाविस्टीन तथा 0.2% क्लोरोपाईरीफॉस के घोल में 30 मिनट तक डुबाने के बाद छायों में अच्छी तरह सुखाने के बाद भण्डारण करते हैं। भण्डारण के लिये मिट्टी में आवश्यकतानुसार गड्ढ़ा बनाकर 3-5 सेमी भूसे की परत बिछाकर गाँठों को रखकर उपर से बाँस की पट्टी या घास फूस रखकर मिट्टी से ढंक देते हैं। गड्ढे के चारों तरफ 15-20 सेंमी. ऊंची मेड़ बना देते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

हाइड्रोपोनिक : एक परिचय एवं भारत में इसका दायरा

अंशुमान मिश्रा
डॉ. आस्तिक झा, संदीप यादव
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

भूमिका

भारत में खेती-बाड़ी और कृषि कार्यों का अपना एक अलग इतिहास है। लोगों की यह अवधारणा रही है कि खेती करने के लिए आपको उपयुक्त मौसम, जलवायु, मिट्टी लंबी-चौड़ी जगहों की जरूरत होती है। लेकिन बदलते समय के साथ हर चीज़ में बदलाव देखा गया है। ऐसे में कृषि क्षेत्र में भी कई बदलाव हुए हैं जो समय की मांग और आवश्यकता दोनो हैं। पुराने पद्धतियों को अगर देखें तो उसमे समय काफी ज्यादा लगता था और मुनाफा उसके अपेक्षा में बहुत कम होता था। ऐसे में इन तमाम समस्याओं को जड़ से हटाने के लिए कृषि वैज्ञानिकों ने हाइड्रोपोनिक्स तकनीक को खोज निकाला है ।

क्या है हाइड्रोपोनिक्स तकनीक

हाइड्रोपोनिक्स शब्द की उत्पत्ति दो ग्रीक शब्दों से हुई है , यानी हाइड्रो अर्थात पानी और पोनोस अर्थात श्रम (यानी काम करने वाला पानी)। हाइड्रोपोनिक्स एक ऐसी तकनीक है जिसमें मिट्टी की जरूरत नहीं होती है। इस तकनीक के माध्यम से पौधे में सभी आवश्यक खनिज और उर्वरक को पानी के माध्यम से दिया जाता है ताकि फसल की वृद्धि हो सके। इस विधि से फसल उत्पादन हेतु सिर्फ 3 चीजें पानी, पोषक तत्व और प्रकाश की जरूरत है। यदि यह 3 चीजों इस तकनीक के माध्यम से बिना मिट्टी के उपलब्ध कराए जाते हैं ताकि पौधे फल-फूल सकें। इस विधि से की जाने वाली खेती को हाइड्रोपोनिक्स तकनीक कहते हैं।

हाइड्रोपोनिक्स पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों जैसे कि नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटैशियम के साथ पोषक समाधान का उपयोग करके प्रदान करता है। ये समाधान मिनरल सॉल्ट्स और समुद्री शैवाल के अन्य जैविक सामग्रियों की मिश्रण से बनाए जाते हैं। पोषक समाधान को या तो सीधे पौधे की जड़ों पर टेढ़े रासायनिक प्रवाह के रूप में पंप किया जाता है या टपक सिंचाई प्रणालियों के माध्यम से लागू किया जाता है। हाइड्रोपोनिक खेती में, बाग़वान द्वारा वायुमंडल, प्रकाश स्तर और आर्द्रता को समायोजित करके पर्यावरण को भी नियंत्रित किया जा सकता है।

ऐसे क्षेत्र जहां हाइड्रोपोनिक खेती एक अच्छा विकल्प हो सकती है ?

- पानी की सीमित आपूर्ति वाले क्षेत्र
- चट्टानी खेत जहां पारंपरिक खेती संभव नहीं है।
- कम मिट्टी की उर्वरता वाले क्षेत्र
- ऐसे क्षेत्र जो जैविक उत्पादों की मांग को पूरा कर सकते हैं ।

कौन-सी फसलें हाइड्रोपोनिक्स के तहत खेती की जा सकती हैं :-

- लेट्यूसः लोकार्नो; कोंकोर्ड; रेक्स; मैक्सिमस; स्टारफाइटर
- बेसिलः एमिली
- केलः डार्किबोर
- पार्सलेः क्रौसा
- चेरी टोमैटो

थोड़ी सी योजना और प्रयास के साथ, कोई भी हाइड्रोपोनिक्स का उपयोग करके सफलतापूर्वक फसल उगा सकता है। इस प्रकार की बागवानी पारंपरिक विधियों की तुलना में कई लाभ प्रदान करती है।

हाइड्रोपोनिक्स खेती के लाभ

हाइड्रोपोनिक्स एक रेगिस्तान, सूखे क्षेत्र, छतें, गंदे मिट्टी क्षेत्र या उन किसी भी पर्यावरण में उपयोग किया जा सकता है जहां पारंपरिक कृषि संभव नहीं होगी। हाइड्रोपोनिक्स खेती के बहुत सारे लाभ हैं और इससे विभिन्न जलवायु और स्थानों में उच्च उत्पादन हासिल किया जा सकता है। हाइड्रोपोनिक्स खेती में मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती है, इसलिए यह उन क्षेत्रों में उपयोग किया जा सकता है जहां पौधों की खेती के लिए परंपरागत कृषि के लिए उचित प्राकृतिक संसाधन नहीं होते हैं। साथ ही, हाइड्रोपोनिक्स खेती में मिट्टी-आधारित खेती की तुलना में कम पानी की आवश्यकता होती है, जिससे यह प्रभावी और पर्यावरण के प्रति सजग होता है।

भारत में हाइड्रोपोनिक्स का उदय

भारत में, हाइड्रोपोनिक्स अभी भी अपनी प्रारंभिक अवस्था में है, अधिकांश फार्म स्टार्ट-अप के रूप में चलाए जा रहे हैं। शोध के अनुसार, भारत में 40 से अधिक व्यावसायिक रूप से कार्यरत हाइड्रोपोनिक फार्म हैं, जिनमें कुछ नए फार्म भी काम कर रहे हैं। कम पैदावार के कारण, अधिकांश फार्म आसन्न मेट्रो शहरों की जरूरतों को पूरा करते हैं, और व्यवसाय रसद सुविधा के लिए मांग केंद्रों के पास खेतों का पता लगाते हैं। दक्षिणी और पश्चिमी भारत में, बड़े खेत केंद्रित हैं। हमारे आंकड़ों के अनुसार, दक्षिणी भारत की हिस्सेदारी सबसे बड़ी है, जहां हैदराबाद, बेंगलुरु और चेन्नई जैसी जगहों पर बड़ी संख्या में फार्म हैं और कई नए छोटे और मध्यम फार्म विकसित किए जा रहे हैं।

नए भारत में हाइड्रोपोनिक खेती का दायरा

भारत की जनसंख्या मनमाने ढंग से बढ़ रही है, जो कृषि योग्य भूमि की घटती आपूर्ति का एक मुख्य कारण है। जैसे-जैसे कृषि योग्य भूमि क्षेत्र सिकुड़ता जा रहा है, तेजी से बढ़ती आबादी के लिए मुख्य खाद्य पदार्थ पैदा करने की क्षमता कठिन होती जा रही है। भविष्य में, हाइड्रोपोनिक खेती से भारत की सीमित कृषि योग्य भूमि की समस्या कम हो जाएगी। अधिक मुख्य फसल किस्मों की खेती की जा सकती है, और मिट्टी और पानी का उपयोग कम किया जा सकता है या पूरी तरह से समाप्त किया जा सकता है। ऐसा लगेगा जब दृश्य प्रकाश स्पेक्ट्रम में फसलें उगाई जाएंगी और जमीन पर सभी के लिए ताजा भोजन उपलब्ध होगा। यह एक नई हरित क्रांति की शुरुआत हो सकती है, जिसे सहस्त्राब्दी पीढ़ी प्रत्यक्ष रूप से देखेगी।

भारत में हाइड्रोपोनिक खेती की बाजार क्षमता

भारत का हाइड्रोपोनिक बाजार 2020 से 2027 के बीच 13.53% की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर से बढ़ाने की उम्मीद है। इसकी तुलना में, वैश्विक हाइड्रोपोनिक उद्योग में वृद्धि केवल 6.8न अनुमानित है। महानगरों और टियर 1 शहरों में जैविक फसलों का बहुत बड़ा बाजार है। भारत में हाइड्रोपोनिक खेती के उत्पादों के बाजार में ऐसे उपभोक्ता शामिल हैं जो स्वास्थ्य के प्रति जागरूक हैं, और ताजा, सुरक्षित और स्वस्थ जैविक रूप से उगाए गए उत्पादों के लिए आसानी से प्रीमियम का भुगतान करेंगे। विकसित हो रही प्रौद्योगिकियों में निरंतर सुधार और खाद्य मुद्रास्फीति में वृद्धि के साथ हाइड्रोपोनिक प्रौद्योगिकियों और राज्य और केंद्र सरकार द्वारा अपने खेतों में हाइड्रोपोनिक फार्म स्थापित करने के प्रोत्साहन के बीच मूल्य अंतर भी उनकी लोकप्रियता में इजाफा कर रहा है। वर्तमान विकास दर के साथ, ऐसे फार्म स्थापित करने की लागत कम हो गई है और समय के साथ इसमें और भी कमी आएगी। इससे तकनीक को अपनाने में और वृद्धि होगी, और बाजारों में पहले से ही ऐसे उत्पादों की मांग होने के कारण, यह निकट भविष्य में व्यवसाय का एक नया आगामी रूप हो सकता है। फिर भी हाइड्रोपोनिक्स के साथ क्या उगाया जा सकता है इसकी अंतर्निहित सीमाओं को देखते हुए, किसानों और अन्य परियोजन समर्थकों को शुरूआत में बैंकों, केवीके, कृषिविद् तथा अन्य संस्थाओं से वित्तीय और तकनीकी सहायता की आवश्यकता हो सकती है।

निष्कर्ष

हाइड्रोपोनिक्स फार्मिंग पारंपरिक मिट्टीङ्कआधारित बागवानी की आवश्यकता के बिना पौधों को उगाने का एक शानदार तरीका हो सकता है। उचित सेटअप और विस्तार के कुछ विवरणों के साथ, आप कम समय में सभी प्रकार के फल, सब्जियां और जड़ी बूटियों को सफलतापूर्वक उगा सकेंगे। हालांकि प्रारंभिक चरण में, भारत में हाइड्रोपोनिक खेती उन किसानों के बीच लोकप्रियता हासिल कर रही है जो खेती के पारंपरिक ज्ञान को वैज्ञानिक सिद्धांतों के साथ मिलाने के लिए तैयार है। पारंपरिक ज्ञान वाले किसान के लिए विभिन्न कृषि पद्धतियों पर स्विच करना जटिल हो सकता है, लेकिन इसके पीछे का विज्ञान कृषि विज्ञान के सिद्धांतों का पालन करता है जिसे समय के साथ सीखा जा सकता है। हालांकि, किसी को ये ध्यान रखना चाहिए कि अधिकांश हाइड्रोपोनिक खेती प्रणालियों की तुलना में मिट्टी की खेती त्रुटियों को अधिक क्षमा करती है। हाइड्रोपोनिक खेती प्रणाली को अकुशल और अनुभवहीन लोगों द्वारा संचालित करना आसान नहीं है। हालांकि, हाइड्रोपोनिक संस्कृति आनलाइन जानकारी से आकर्षक लग सकती है, जहां इसे अक्सर एक सरलीकृत तकनीक के रूप में लेबल किया गया है, लेकिन वास्तविक में ऐसा नहीं है। इस कृषि तकनीक में तापमान, आद्रता, कीट नियंत्रण और सबसे महत्वपूर्ण पोषण जैसे कारकों को ध्यान में रखते हुए फसलों के वैज्ञानिक प्रबंधन की आवश्यकता होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

पर्वतीय क्षेत्रों में सब्जी राई की उन्नत खेती

आर्यन सविता (परास्नातक उद्यानिकी) उद्यान विज्ञान विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी

हरी सरसों/सब्जी राई (ब्रैसिका जंसिया एल.)उत्तरी भारत के मैदानी और पहाड़ी इलाकों में उगाई जाने वाली एक लोकप्रिय हरी सब्जी है। यह विटामिन, खनिज और प्रोटीन का एक समृद्ध स्त्रोत है। राई का रबी तिलहनी फसलों में प्रमुख स्थान है प्रदेश में अनेक प्रयासों के बाद भी राई के क्षेत्रफल में विशेष वृद्धि नहीं हो पा रही है इसका प्रमुख कारण है कि सिंचित क्षमता में वृद्धि के कारण अन्य महत्वपूर्ण फसलों के क्षेत्रफल का बढना। इसकी खेती सीमित सिंचाई की दशा में अधिक लाभदकता होती है। उन्नत विधियां अपनाने से उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्वि होती है।

उन्नतशील प्रजातियां: स्थानीय(हाथिकान) और यूएचएफ वीआर 12-1 पहाड़ी इलाकों में उगाई जाने वाली किस्में।

क्षारीय लवणीय भूमि हेतु: सिंचित क्षारीय एवं लवणीय क्षेत्रों हेतु नरेन्द्र राई(एन.डी.आर. 8501)।

खेती की तैयारी: खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2-3 जुताइयां देशी हल से करें तथा इसके बाद पाटा लगाकर खेत को भुर-भुरा बना लेना चाहिए। यदि खेत में नमी कम हो तो पलेवा करके तैयार करना चाहिए। ट्रैक्टर चालित रोटावेटर द्वारा एक ही बार में अच्छी तैयारी हो जाती है।

बीज दर: सिंचित एवं असिचित क्षेत्रों में 5-6 किग्रा./हे. की दर से प्रयोग करना चाहिये।

बीज शोधन: बीज जनित रोगों से सुरक्षा हेतु 2.5 ग्राम थीरम प्रति किलो की दर से बीज को उपचारित करके बोये मैटालाक्सिल 1.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज शोधन करने से गेरूई एवं तुलासिता रोग की प्रारंभिक अवस्था में रोकथाम हो जाती है।

बुवाई का समय एवं विधि: राई बोने का उपयुक्त समय सितम्बर के अतिंम सप्ताह से अक्टूबर का द्वितीय पखवारा है। असिंचित दशा में बुवाई का उपयुक्त समय सितम्बर का द्वितीय पखवारा है। विलम्ब से बुवाई करने पर माहू का प्रकोप एवं अन्य कीटों एवं बीमारियों की सम्भावना अधिक रहती है।

उर्वरक की मात्रा: उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी

परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जाए सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन 120 किग्रा. फॉस्टेट 60 कि.ग्रा. एवं पोटाश 60 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने से अच्छी उपज प्राप्त होती है।

सिंचाई: राई, नमी की कमी के प्रति फूल आने के समय से पहले व दाना भरने की अवस्थाओं में विशेष संवेदनशील होती है। अतः अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए सिचाई करें। यदि उर्वरक का प्रयोग भारी मात्रा में (120 किलोग्राम नत्रजन 60 किलोग्राम फॉस्फेट तथा 60 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर) किया गया हो तथा मिट्टी हल्की हो तो अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए 2 सिंचाई क्रमशः पहली बुवाई के 30-35 दिन बाद दूसरी वर्षा न होने पर 55-65 दिन के बाद करें।

निराई-गुड़ाई एवं विरलीकरण: बुवाई के 15 दिन के अन्दर धने पौधो को निकालकर उनकी आपसी दूरी 15 सेंमी. कर देना परम आवश्यक है। खरपतवार नष्ट करने के लिये एक निराई-गुड़ाई सिंचाई के पहले और दूसरी सिंचाई के बाद करनी चाहिए।

फसल का संरक्षण: सरसों का सबसे गंभीर कीट एफिड है। जबकि सफेद रतुआ और अल्टरनेरिया ब्लाइट इस क्षेत्र में रेपसीड और सरसों की दो महत्वपूर्ण बीमारियॉ हैं। कीट प्रबंधन और रोगों के लक्षण और प्रबंधन पद्धतियां इस प्रकार है।

सरसों एफिड्स (लिपाफिसएरिसिमी)

लक्षण-शिशु और वयस्क दोनों पत्तियों, कलियों और फलियों से रस चूसते हैं। सर्वमित पत्तियों में कर्लिंग हो सकता है और उन्नत अवस्था में पौधे सूखकर मर सकते हैं। पौधे बौने रह जाते हैं और कीड़ो द्वारा उत्सर्जित शहद के ओस पर कालिखयुक्त फफूंद विकसित हो जाती है। सक्रमित दायर दिखने में बीमार और झुलसा हुआ दिखता है।

नियंत्रण उपाय: सहनशील किस्मों का उपयोग करें, नुकसान से बचने के लिए जल्दी रोपण करें और पीले चिपचिपे जाल का उपयोग करें।

जैविक: लाभकारी कीड़ों का रिहाई, सुरक्षा और संवर्धन, जैसे कि एडीबर्ड बीटल, जैसे, कोकिनेला सेप्टेमपंकटाटा, मेनोचिलस सेक्समैयुलाटा, हिप्पोडामिया वेरिएगाटा और चेइलोमोन्स विसिना, सरसों एफिड के सबसे प्रभावी शिकारी हैं। वयस्क भृंग प्रतिदिन औसतन 10 से 15 वयस्कों को भोजन दे सकता है। सिर्फिड/ होवर मक्खी की कई प्रजातियाँ अर्थात, स्पैरोफोरिया प्रजाति, एरिस्टालिस प्रजाति, मेटासिर्फिस प्रजाति, जैथोग्रामा प्रजाति और सिरफस प्रजाति। ब्रैकोनिड पैरासिटॉइड, डायरेटिएला रैपे।

सफेद खुआ

लक्षण: तने, टहनी और पत्ती की सतह पर सफेद, मलाईदार दाने उभर आते हैं। प्रणालीगत संक्रमण में शरीर के सभी हिस्सों पर ऐसी जंग लगी फुंसियां उभर आती है और हाइपरट्रॉफी(कोशिकाओं का असामान्य इजाफा) उत्पन्न करती हैं। द्वितीयक स्थानीय संक्रमण में पत्ती, तने और पुष्पक्रम पर सफेद जंग लगे दाने उभर आते हैं और पाउडर लेपित दिखाई देते हैं।

नियंत्रण के उपाय: रोग मुक्त, स्वस्थ बीज का उपयोग करें, खरपतवारों को नष्ट करें जो संपार्श्विक मेजबान के रूप में कार्य करते हैं, संक्रमित पौधों के हिस्सों को इकट्ठा करें और नष्ट करें। लगातार समस्या वाले क्षेत्रों में गैर-मेजबान फसलों के साथ 3-4 साल का फसल चक्र अपनाएं। ताजा तैयार लहसुन बल्ब अर्क के साथ बीज उपचार।

अल्टरनेरिया पत्ती के धब्बे (अल्टरनेरिया ब्रैसिसिकोला और ए.ब्रैसिका)

लक्षण: पत्तों पर गाढे रंग के छल्लेदार गहरे रंग के धब्बे उभर आते है। ए. ब्रैसिकोला के धब्बे आकार में बडे होते हैं जबकि ए. ब्रैसिका के धब्बे आकार में छोटे होते हैं। पत्ती के ऊतक सूख जाते हैं और गिर जाते हैं, जिससे बडे अनियमित छेद हो जाते हैं।

नियंत्रण के उपाय: खेत की स्वच्छता बनाए रखें, गैर- मेजबान फसलों के साथ 3-4 साल का फसल चक्र अपनाएं। जल्दी बुआई करने से संक्रमण से बचाव होता है गर्म पानी (50 प्रतिशत) या ताजा तैयार लहसुन बल्ब अर्क के साथ बीज उपचार। वैकल्पिक रूप से बीजों को लहसुन, लौंग- दालचीनी के अर्क से भी उपचारित किया जा सकता हैं।

कटाई-मड़ाई: राई के पत्ते भी सब्जी के रूप मे प्रयोग किये जाते हैं 2से 3बार पत्तों की तुड़ाई की जाती हैं पहली पत्तों की तुड़ाई ट्रांसप्लांटिंग के 30 दिन बाद ही कर देते हैं पहली तुड़ाई के 15-15 दिन के अंतराल मे और 2 तोड़ाई कर देते हैं जब 75 फलियां सुनहरे रंग की हो जाए, फसल को काटकर सुखाना चाहिए। बीज को खूब सुखाकर भण्डारण करना चाहिए। औसत बीज उपज 1788 किग्रा/ हेक्टेयर।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

असमय फलों के गिरने की समस्या और समाधान

बृजेश पटेल, अभिषेक सोनकर
अवधेश कुमार, प्रभात कुमार
इमरान अली

शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या

खेती के बाद बागवानी किसानों की आय का एक बड़ा ज़रिया है. देश में बागवानी का क्षेत्रफल बढ़ रहा है लेकिन साथ ही फल उत्पादकों के सामने कई समस्याएं भी हैं. देश में फल उत्पादक किसानों के सामने असमय फलों के गिरने और फटने की समस्या आम होती जा रही है. ख़ासकर अभी आने वाले सीजन में मिलने वाले फल आम, बेल, जामुन और नीबू में ये समस्या ज्यादा देखने को मिलती है. इसे हल्के में लेने वाले किसानों को इस बात का पता भी नहीं चलता कि इस कारण उनकी उपज में कितनी गिरावट हुई है. दरअसल फल के गिरने और फटने की समस्या से 25 प्रतिशत से लेकर 85 प्रतिशत तक फल नष्ट हो सकते हैं. फलों का झड़ना एक बहुत ही गंभीर समस्या है। आम में लगभग 99% फल विभिन्न चरणों में गिर जाते है और मात्र 0.1% फल ही परिपक्व अवस्था तक पहुँच पाते है। अत्याधिक फलों का गिरना आम की उत्पादकता पर विपरीत असर डालता है। फलों का गिरना किस्म विशेष, निषेचन की कमी, द्विलिंगी पुष्पों की कमी, अपर्याप्त परागण, पराग कीटों की कमी, फलों की पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा और बाग़ में नमी की कमी के कारण प्रभावित होता है। सामान्यतः आम की लगभग सभी किस्मों में यह समस्या समान रूप से पाई जाती है।

फल झड़न के कारण: बहुत से बाहरी व आंतरिक कारण पौधों से फलों के झडने की क्रिया को प्रभावित करते हैं, फल झडन के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं।

विगलन पर्त का निर्माण: फूलों तथा फलों में उनके डण्ठल के आधार पर एक विशेष तरह की कोशिकाओं की पर्त बन जाती है। यह कोशिकाओं की पर्त आकार में लगभग आयताकार और ढीली होती है। इनके अंदर खाद्य पदार्थों को पहुंचाने वाले ऊतक भी नहीं होते, इसलिए यह स्थान कमजोर पड़ जाता है। इसी स्थान को विगलन पर्त कहते हैं। जिसके बन जाने से फूल तथा फल वृक्ष से टूटकर गिर जाते हैं। विगलन पर्त का निर्माण सम्भवतः वृक्ष में हार्मोन के असंतुलित हो जाने के कारण होता है।

पोषक तत्वों की कमी: वृक्षों में पोषक तत्वों की कमी से फूल से फल विकसित होने में कठिनाई होती है और फल गिर जाते हैं। फलों को पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में न मिलने के कारण या तो पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाते या गिर जाते हैं। स्फुर, गंधक, बोरान, केल्शियम, मेग्नेशियम तत्व विशेष रूप से आवश्यक होते हैं।

जल की कमी: जल के अभाव में पोषक तत्वों का भूमि से पर्याप्त मात्रा में अवशोषण नहीं हो पाता और वृक्षों में उनकी कमी हो जाती है। वृक्ष की दैहिकीय क्रियाएं भी शिथिल हो जाती हैं और विकसित होते हुए फल में पोषक तत्वों की संचार व्यवस्था कम हो जाती है, और फल गिर जाते हैं।

वातावरणीय कारण: वायुमण्डल की हवा में नमी की कमी हो जाने से फल झडना आरंभ हो जाता है। आर्द्रता की कमी हो जाने से वाष्पोत्सर्जन की क्रिया अधिक हो जाती है। तापक्रम अधिक हो जाने से वायु में आर्द्रता कम हो जाती है। सूखे क्षेत्र में फल झडने का यह प्रमुख कारण है। तेज वायु, ओला आदि से भी फल और फूल झड़ जाते हैं।

कीट एवं व्याधियां: विभिन्न प्रकार के कीट एवं व्याधियों के प्रकोप से भी फल झड़ते हैं। आम में फूल व फल बनते समय भुनगा (मच्छर) (मेंगो हापर) का प्रकोप होने से बहुत अधिक संख्या में फूल व फल झड़ जाते हैं। इसी प्रकार से अनेक कीट एवं व्याधियां, फल पौधों में फल झडने का कारण बनती हैं।

जुताई-गुड़ाई क्रियाएं: फल बनते समय भी कई गहरी जुताई-गुड़ाई से फलों का झडना अधिक मात्रा में होता है। फूल व फल बनते समय किया गया रसायनों का छिडक़ाव भी प्रत्यक्ष रूप से फूल के विभिन्न अंगों को हानि पहुंचाकर अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पराग सेंचन में सहायक कीटों की क्रियाशीलता कम करके, फूल व फल झडने की क्रिया को बढ़ाता है।

कार्बोहाइड्रेट्स की मात्रा: फल बनने, उनके विकास एवं वृद्धि के लिये, पौधों में कार्बोहाइड्रेट्स की अतिरिक्त मात्रा में आवश्यकता होती है। यदि पौधों में कार्बोहाइड्रेट्स का स्तर कम है तो फल झडन अधिक संख्या में होगा।

हार्मोन्स का स्तर: फल पौधों में आक्सीन, एसीटिक एसिड व इथाईलीन का स्तर फल झडने की क्रिया को नियंत्रित करता है। इन हारमोन्स के असंतुलन होने से फल झडने की क्रिया बढ़ जाती है।

फलने की आदत: जिन पौधों में अग्र कलिकाओं पर फल बनते हैं, उनमें ऐसे पौधे की अपेक्षा उनमें पार्श्व कलिकाओं पर फल बनते हैं, फल झडने की क्रिया को बढ़ाता है।

फल झड़न की प्रक्रिया को तीन चरणों में बांटा गया है विभिन्न वृद्धि और विकास चरणों में फलों के नष्ट होने से फल पैदा करने वाले फूलों का प्रतिशत कम हो सकता है। सभी फल एक साथ नहीं गिरते; इसके बजाय, वे कई अंतरालों पर ऐसा करते हैं जैसे; पिन हैड अवस्था में फलों का गिरना, फल स्थापित होने के बाद या मई में फलों का झड़न और कटाई से पहले फलों का गिरना।

पिन हैड अवस्था में फलों का गिरना: फलों का गिरना फूल आने के तुरंत बाद शुरू हो जाता है और इसके परिणाम स्वरूप अविश्वसनीय रूप से छोटे फल गिर जाते हैं। किसान इस कमी पर अधिक विचार नहीं करता क्योंकि यह प्राकृतिक अतिउत्पादन का परिणाम है। इस फल के गिरने से पेड़ पर फलों का अतिरिक्त बोझ कम हो गया।

फल स्थापित होने के बाद झड़न : फल झड़न पूरे मई में जारी रहता है इसलिए इसे जून ड्रॉप का नाम दिया गया है। फल गिरने की यह लहर खिलने के लगभग एक से दो महीने बाद शुरू होती है; जून में अत्यधिक फल लगने वाले पेड़ों से जल्दी विकसित होने वाले फल नष्ट हो जाते हैं, जो कुल गिराए गए फलों का लगभग 10% होता है। किन्नू में इस समय गिरने वाले फल लगभग कंचे के आकार (लगभग 1 से 2 सेमी व्यास) के होते हैं। वृद्धि और विकास के लिए युवा फलों के बीच ऊर्जा (कार्बोहाइड्रेट) के लिए लड़ाई इस चरण के दौरान गिरावट का प्रमुख कारण है। हालांकि जून में खट्टे फलों का गिरना अक्सर फलों के विकास के दौरान एक प्राकृतिक घटना के रूप में देखा जाता है, लेकिन गर्मियों की शुरुआत में उच्च तापमान के साथ पानी की कमी के कारण फलों का गिरना खराब हो सकता है।

कटाई से पहले फलों का गिरना: तीसरी लहर लगभग परिपक्व से कटाई योग्य फलों का गिरना है, जिसमें समय से पहले और कटाई से पहले फलों का गिरना शामिल है। कटाई से पहले फलों का गिरना अगस्त में शुरू होता है और कटाई तक जारी रहता है। जब डंठल और कैलीक्स जंक्शन पर गिरावट होती है तो फल डंठल के बिना ही गिर जाता है। यह गिरावट किसान के लिए आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप लगभग पूरी तरह से विकसित फल नष्ट हो जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादक को काफी नुकसान होता है। रोग संचरण और फल मक्खी के संक्रमण के परिणामस्वरूप अधिकांश फल समय से पहले गिर जाते हैं। जबकि दिसंबर और जनवरी में कम तापमान और कोहरे की स्थिति फसल से पहले फलों के नुकसान के लिए जिम्मेदार है।

फलों का गिरना वर्गीकरण: खट्टे फलों के पेड़ों में फल गिरने में कई कारक योगदान करते हैं। फलों की बूंदों को इन कारकों के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है- 1.शारीरिक फल गिरना 2.पैथोलॉजिकल फल का गिरना 3.एंटोमोलॉजिकल फल गिरना

शारीरिक फल गिरना: विच्छेदन उस शारीरिक प्रक्रिया के लिए शब्द है जिसके कारण फल गिर जाते हैं। शारीरिक या पर्यावरणीय तनाव के अधीन पौधे आमतौर पर शारीरिक गिरावट का अनुभव करते हैं।

शारीरिक फल गिरावट मुख्य रूप से निम्नलिखित के कारण होती है: • पानी का दबाव • अत्यधिक तापमान • पोषण की कमी • लंबे समय तक पाला पड़ना • पेड़ की सेहत ख़राब नींबू वर्गीय फलों में शारीरिक फल का गिरना

पैथोलॉजिकल फ्रूट ड्रॉप: पैथोलॉजिकल फलों का गिरना एक महत्वपूर्ण बाधा है जो काटी गई उपज के उत्पादन और गुणवत्ता को कम करती है। इस फल के गिरने के दौरान समय से पहले गिरने वाले फलों के कारण उत्पादकों को पीड़ा का अनुभव होता है। ऐसे फल अब विपणन हेतु उपयुक्त नहीं हैं। इस गिरावट के महत्वपूर्ण आर्थिक निहितार्थ हैं और यदि इसे नियंत्रित नहीं किया गया, तो उपज और रिटर्न में काफी कमी आ सकती है।

परिणाम स्वरूप, फलों की गिरावट को प्रभावी ढंग से और स्थायी रूप से प्रबंधित करने के लिए एकीकृत रणनीतियों को अपनाना आवश्यक है। पैथोलॉजिकल फलों की गिरावट अक्सर अगस्त में शुरू होती है और कटाई तक जारी रहती है। सितंबर और अक्टूबर के बीच गिरावट सबसे गंभीर होती है जब फल पकने के करीब होते हैं और पेड़ से पोषक तत्व ले चुके होते हैं। कोलेटोट्राइकम ग्लियोस्पोरियोइड्स, डिप्लोडिया नटालेंसिस और अल्टरनेरिया सिट्री सहित विभिन्न पौधे रोगजनक फल गिरने के लिए जिम्मेदार हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश में वन संरक्षण और वन वृक्ष-रोपण का महत्व

कपिल गौतम, श्रीगोविन्द
जैनेन्द्र प्रताप, अमन श्रीवास्तव
(शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

प्रेम कुमार (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर

उत्तरप्रदेश, भारत का प्रमुख विविधतापूर्ण वन राज्य है, जिसकी प्राकृतिक सुंदरता और वन्यजीव संपदा दुनिया भर में अपने विविध भौगोलिक और प्राकृतिक संसाधनों के लिए प्रसिद्ध है। इस राज्य के वनों में बहुत सारे वन्य जीवन पाए जाते हैं, उत्तर प्रदेश में जंगलों का क्षेत्रफल गवर्नमेंट रिपोर्ट्स के अनुसार लगभग 16% से 20% क्षेत्रफल जंगली क्षेत्र में होता है। यहां कुछ स्थानों पर घने जंगल होते हैं, जिनका संरक्षण एवं उनके निर्वाह के लिए समुचित कदम उठाना अत्यंत महत्वपूर्ण है। वन संरक्षण का महत्व समझते हुए, उत्तर प्रदेश सरकार ने वन संरक्षण और वन्यजीव संरक्षण के लिए कई पहलूओं पर ध्यान दिया है।

उत्तर प्रदेश में वन संरक्षण

वातावरणीय संतुलन की सुरक्षा: वन संरक्षण से प्राकृतिक संतुलन बनाए रखा जा सकता है, जो मौसमी परिवर्तन और परिस्थितियों के संकटों का सामना करने में मदद करता है। वन संरक्षण से जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित किया जा सकता है

कटाई की नियंत्रण: वन संरक्षण के लिए सबसे महत्वपूर्ण कदम वन की कटाई को नियंत्रित किया जाए। उत्तर प्रदेश सरकार ने वनों की कटाई के लिए अनुमति केवल उन प्रक्रियाओं के बाद दी जाती है जो पर्यावरण के साथ मिलते-जुलते हों।

पर्यावरण शिक्षा और वन संगठन: पर्यावरण शिक्षा और संज्ञानशीलता को बढ़ावा देना भी उत्तर प्रदेश में वन संरक्षण और वन संगठन का गठन करना उन्हें संचालित करना भी एक महत्वपूर्ण कदम है। लोगों को वन संरक्षण, वन्य जीवन के महत्व के बारे में जागरूक किया जाता है और उन्हें प्राकृतिक संसाधनों के प्रति सही दृष्टिकोण विकसित करने हेतु प्रेरित किया जाता है।

वन संरक्षण के महत्व

प्राकृतिक संतुलन का संरक्षण: वन संरक्षण से प्राकृतिक संतुलन बनाए रखा जा सकता है, जो मौसमी परिवर्तन और परिस्थितियों के संकटों का सामना करने में मदद करता है।

वायु और पानी की शुद्धता: वनों का संरक्षण वायु और पानी की शुद्धता को बनाए रखने में मदद करता है। ये वन पानी को संचित करते हैं और वायुमंडल को शुद्ध करते हैं।

जीवन के लिए आवास: वन संरक्षण से वन्य जीवन को सुरक्षित आवास प्राप्त होता है, जिससे बायोडाइवर्सिटी बनाए रखा जा सकता है।

प्राकृतिक आपदाओं का सामना: वन संरक्षण आपदा प्रबंधन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वन भूमि अपशिष्ट जल वापसी को बढ़ावा देते हैं और बाढ़ और भूकंप जैसी प्राकृतिक आपदाओं का सामना करने में मदद करते हैं।

उत्तर प्रदेश में वन वृद्धि, और पौधरोपण: उत्तर प्रदेश, भारत का विविधतापूर्ण प्राकृतिक संसाधनों के साथ गर्व है। यहाँ के वन्य जीवन, वन, और पौधरोपण की संरक्षण और प्रबंधन के लिए निरंतर प्रयासों की आवश्यकता है। इस लेख में, हम उत्तर प्रदेश में वन वृद्धि, और पौधरोपण के महत्व के बारे में चर्चा करेंगे, साथ ही कुछ उन्हें बढ़ावा देने के उपायों पर भी गौर करेंगे।

उत्तर प्रदेश में वन वृद्धि के प्रमुख कदम

पौधरोपण की योजनाएं: उत्तर प्रदेश सरकार ने विभिन्न पौधरोपण योजनाओं को शुरू किया है, जिसमें विभिन्न प्रकार के वृक्षों के रोपण और बागवानी शामिल है।

बागवानी अभियान: सरकार ने बागवानी अभियान को बढ़ावा दिया है, जिसमें सार्वजनिक स्थलों पर पौधरोपण के लिए अभियान आयोजित किया जाता है।

संवेदनशीलता की बढ़त: वन संरक्षण और वन्य जीवन की संरक्षा के लिए जन संवेदनशीलता को बढ़ावा दिया गया है। लोगों को वन्य जीवन के महत्व के बारे में शिक्षित किया जाता है और उन्हें पर्यावरण संरक्षण में भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाता है।

वन की तेजी से वृद्धि के लिए प्रयास: वन संरक्षण हेतु स्थायी संरक्षण के उपाय भी जरूरी है। इसमें जलवायु परिवर्तन के प्रभाव का सामना करना, बाढ़ और बाढ़ की रोकथाम, और बढ़ती जनसंख्या के प्रभावों का ध्यान रखना शामिल है।

उत्तर प्रदेश में वन संरक्षण के प्रमुख अभियान

हरित परियोजनाएं: उत्तर प्रदेश में हरित परियोजनाओं को बढ़ावा दिया जा रहा है, जिसमें बगीचे और वृक्षारोपण के लिए योजनाएं शामिल हैं।

अवैध वन कटाई का नियंत्रण: सरकार ने अवैध वन कटाई को रोकने के लिए कड़े कदम उठाए हैं। अवैध वन कटाई हेतु कड़े नियम बनाए गए हैं और उनका पालन किया जा रहा है।

वन संरक्षण की चुनौतियाँ

अवैध वन कटाई: अवैध वन कटाई वन संरक्षण की एक प्रमुख चुनौती है। यह अवैध कटाई न केवल वन्य जीवन को नुकसान पहुँचाती है, बल्कि यह वन संसाधनों की भी कमी पैदा करती है।

वन्य जीवन की गिरावट: विकास के कारण और अवैध शिकार के कारण, वन्य जीवन की गिरावट भी एक चुनौती है। इससे जीवनधारा और जीवन-आवास की समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

सामाजिक जागरूकता की कमी: कई बार सामाजिक जागरूकता की कमी के कारण वन संरक्षण के लिए सही उपाय नहीं अपनाए जाते हैं। लोगों को वन संरक्षण के महत्व के बारे में शिक्षित किया जाना चाहिए ताकि उन्हें सही दिशा में ले जाया जा सके।

वन संरक्षण और वन वृद्धि का महत्व

प्राकृतिक संतुलन की संरक्षण: वन संरक्षण से प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखा जा सकता है, जिससे वायुमंडल को शुद्ध किया जा सकता है और जलवायु परिवर्तन का प्रभाव कम किया जा सकता है।

वन्य जीवन की संरक्षण: वन संरक्षण से वन्य जीवन की संरक्षण की जा सकती है, जिससे बायोडाइवर्सिटी की रक्षा होती है और विविधता को बनाए रखा जा सकता है।

जल और भूमि संरक्षण: वन संरक्षण से जल और भूमि की संरक्षण की जा सकती है, जिससे जल संसाधनों की कमी को कम किया जा सकता है और जल संकटों का सामना किया जा सकता है।

आर्थिक विकास: वन संरक्षण और वन वृद्धि से स्थानीय लोगों को आर्थिक विकास का मौका मिलता है, जैसे कि लघु उद्योगों का विकास और वन्य उत्पादों का विनिर्माण।

उत्तर प्रदेश में पौधरोपण के उपाय

अभियान और योजनाएं: सरकार और संगठनों को पौधरोपण हेतु अभियान और योजनाओं का प्रोत्साहन करना चाहिए।

जनता की शिक्षा: जनता को पौधरोपण के महत्व के बारे में शिक्षित किया जाना चाहिए और उन्हें इसमें सहयोग करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

तकनीकी सहायता: सामग्री, तकनीक, और सहायता के संबंध में स्थानीय समुदायों को सहायता प्रदान करना चाहिए।

पौधरोपण का महत्व

वायुशुद्धि: पौधरोपण से वायुशुद्धि होती है, क्योंकि पौधे कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं और ऑक्सीजन उत्पन्न करते हैं।

प्राकृतिक संतुलन: पौधरोपण से प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने में मदद मिलती है, क्योंकि पौधे प्राकृतिक परिस्थितियों को संतुलित करने में मदद करते हैं।

पानी की संरक्षण: पौधरोपण से जल संसाधनों की संरक्षण होती है, क्योंकि पौधे जल को संचित करते हैं और जलाशयों को पुनःयापित करते हैं।

भूमि संरक्षण: पौधरोपण से भूमि की संरक्षण होती है, क्योंकि पौधे मिट्टी को संचित करते हैं और भूमि को बनाए रखने में मदद करते हैं।

निष्कर्ष: उत्तर प्रदेश वन संरक्षण, वन वृद्धि, और पौधरोपण उत्तर प्रदेश के लिए महत्वपूर्ण हैं। इनके माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा, प्रदूषण की कमी, और आर्थिक विकास की दिशा में प्रगति हो सकती है। इसलिए, सरकार, सामुदायिक संगठन, और व्यक्तिगत स्तर पर सभी का सहयोग आवश्यक है ताकि हम समृद्ध और स्वस्थ पर्यावरण का आनंद उठा सकें। वन्य जीवन और प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा से ही हमारे भविष्य की सुरक्षा संभव है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

स्ट्रॉबेरी की वैज्ञानिक खेती

मोहम्मद वामिक पीएच.डी. शोध छात्र (सब्जी विज्ञान विभाग), सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

डॉ. ज्ञान श्री कौशल पीएचडी वानिकी शोध छात्र (सिल्वीकल्चर एंड एग्रोफोरेस्ट्री) **SHUATS,** प्रयागराज (उ.प्र.)

वानस्पतिक नाम: फ्रैगरिया म अनानासा डच
परिवार: रोजेसी

परिचय: स्ट्रॉबेरी एक महत्वपूर्ण फल वाली फसल है और इसका व्यावसायिक उत्पादन देश के समशीतोष्ण और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में होता है। इसे संरक्षित और खुली स्थिति में उगाया जाता है। स्ट्रॉबेरी विटामिन, प्रोटीन और खनिज जैसे फास्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम और आयरन से भरपूर है और एंटीऑक्सीडेंट का सबसे अच्छा प्राकृतिक स्रोत है।

जलवायु और मिट्टी

इसकी खेती पूरे वर्ष जहां दिन का अधिकतम तापमान 220ष्ट से 250ष्ट और रात का तापमान 70ष्ट से 130ष्ट होता है। स्ट्रॉबेरी को अच्छी रेतीली, हल्की दोमट मिट्टी में उगानी चाहिए तथा मिट्टी का पी.एच 5.7 से 6.5 होना चाहिए।

रोपण का समय

रोपण जुलाई से अप्रैल के बीच किसी भी समय किया जा सकता है लेकिन जल्दी रोपण करने से अच्छी फसल सुनिश्चित होती है। हालाँकि, जुलाई से अगस्त के दौरान रोपण के लिए पर्याप्त देखभाल बारिश की वजह से आवश्यकता होती है।

रोपण की विधि

ऊठी क्यारियों पर: पौधे को 15-20 सेमी ऊँची क्यारियों पर एकल या दोहरी पंक्तियों में उगाया जाना चाहिए।

दूरी वाली क्यारी: इस विधि में पौधे के बीच 30-50 सेमी और पंक्तियों के भीतर 90-100 सेमी की दूरी रखी जाती है।

किस्मों: स्वीट चार्ली, फेस्टिवल, कैमरोसा, ओफ्रा, चैंडलर, फेयर फॉक्स और ब्लैक मोर सबसे उपयुक्त किस्में हैं।

प्रवर्धन: स्ट्रॉबेरी को व्यावसायिक रूप से रनर के पौधों द्वारा प्रचारित किया जाता है। आम तौर पर एक पौधा 7-10 रनर पैदा करता है लेकिन उचित प्रबंधन के तहत यह प्रति पौधा 15 रनर पैदा कर सकता है। फूल आने से 10 दिन पहले आई.बी.ए (100 पी.पी.एम) के प्रयोग से रनर गठन को उत्तेजित किया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरक

यदि वार्षिक फसल के लिए बोया जाए तो पर्याप्त मात्रा (70-80 टन/हेक्टेयर) में डाली गई जैविक खाद पोषण संबंधी आवश्यकता को पूरा कर सकती है। स्ट्रॉबेरी की अच्छी फसल सुनिश्चित करने के लिए रोपण से पहले 20 टन एफ.वाई.एम और 20:40:40 एन.पी.के किग्रा/हेक्टेयर और वार्षिक रूप से 40 किग्रा प्रति/हेक्टेयर और 80 किग्रा /हेक्टेयर का उपयोग की जाती है।

मल्चिंग

आमतौर पर उपयोग की जाने वाली मल्चिंग सामग्री में साफ सफेद भूसा, दलदली घास, मटर की लताएँ और चूरा शामिल हैं। पॉलिथीन सामग्री से मल्चिंग करने से खरपतवार पर अच्छा नियंत्रण होता है, फसल जल्दी उगती है और कुल उपज में वृद्धि होती है।

कटाई और उपज

जब 50 से 75% छिलका या फलो का रंग विकसित हो जाए तब फल की तुड़ाई की जाती है। लंबी दूरी के बाजार के लिए फलो की तुड़ाई पूर्ण रंग तक पहुंचने के तुरंत बाद की जाती है। अनुशंसित किस्में 200 से 500 ग्राम/पौधा और औसत उपज लगभग 8-12 टन/हेक्टेयर दे सकती हैं।

पैकेजिंग

स्ट्रॉबेरी को प्लास्टिक के डलिया में पैक किया जाता है। उन्हें नालीदार फाइबर ट्रे या हवादार कार्डबोर्ड बक्से में रखा जा सकता है। स्ट्रॉबेरी को हर समय 50° या उससे नीचे के तापमान पर रेफ्रिजरेट किया जाना चाहिए।

गर्मियों में नहीं मिलेगी महंगाई से राहत!

देश और दुनिया के सामने महंगाई की मुश्किल कम होने का नाम नहीं ले रही है. भारत में खाद्य महंगाई दर सबसे बड़ी मुसीबत बनी हुई है और इसके 2 महीने की राहत के बाद फिर से बढ़ने की आशंका है. इसकी सबसे बड़ी वजह मौसम है जिससे फसलों का उत्पादन घट रहा है. प्याज और बागवानी फसलों के उत्पादन में गिरावट और सब्जियों की कीमतों में उछाल के अनुमान ने सरकार और जनता की चिंता बढ़ा दी है. रेटिंग एजेंसी क्रिसिल के अनुसार खाद्य वस्तुएं अप्रैल 2023 से मार्च 2024 तक 30 फीसदी तक महंगी हुई हैं. इस वजह से आरबीआई के कंफर्ट जोन से रिटेल महंगाई दर ऊपर जा रही है.

कोरोना महामारी के बाद से देश और दुनिया में महंगाई का भयंकर अटैक हुआ है. यूक्रेन-रूस युद्ध के बाद तो 2022 में अमेरिका और ब्रिटेन जैसे विकसित देशों में महंगाई 40 साल के उच्चतम स्तर पर पहुंच गई थी. लेकिन कच्चे तेल पर जरुरत से ज्यादा निर्भर भारत ने महंगाई में बढ़ोतरी को एक तय सीमा से ऊपर नहीं जाने दिया. हालांकि, लगातार 3 तिमाहियां ऐसी थीं जब ये RBI की 6 फीसदी की ऊपरी लिमिट के भी पार निकल गई थी. भारत में टैक्स वगैरह घटाकर क्रूड की महंगाई को तो काफी हद तक कंट्रोल कर लिया गया था, लेकिन भारत में खाने-पीने के सामान की महंगाई लगातार सरकार और आम लोगों की मुश्किल की वजह बनी हुई है. इस साल भी खुदरा महंगाई दर के 6 फीसदी से नीचे आने के बावजूद इससे जुड़े जोखिम कम होने का नाम नहीं ले रहे हैं. महंगाई में बढ़ोत्तरी की वजह खाद्य पदार्थों के दामों में उछाल है जिसने आम आदमी के रसोई के बजट को बिगाड़कर रख दिया है. इसकी सबसे बड़ी वजह सब्जियों के बढ़ते दाम हैं जो मौसम के बदलते मिजाज के बीच कम उत्पादकता के चलते काफी तेजी से बढ़े हैं. बीती सर्दियों में भी सब्जियों की कीमतों में कमी के सभी अनुमान धराशाई हो गए थे. अब तो बढ़ते तापमान के असर से आने वाले महीनों में सब्जियों की कीमतों में उछाल आने की आशंका जताई जा रही है. रेटिंग एजेंसी क्रिसिल के मुताबिक खाने-पीने की चीजों का रिटेल महंगाई में योगदान पिछले साल अप्रैल के महीने से लेकर इस साल के मार्च महीने तक 30 फीसदी रहा है.

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

मूंगफली की फसल में समन्वित खरपतवार नियंत्रण

निशा महान (शोध छात्रा) सस्य विज्ञान, ब्रह्मानंद महाविद्यालय राठ, हमीरपुर (उ.प्र.)

लोकनाथ सिंह (शोध छात्र- सस्य विज्ञान, ब्रह्मानंद महाविद्यालय राठ, हमीरपुर

परिचय: मूंगफली खरीफ ऋतु में उगाई जाने वाली एक तिलहनी फसल है जो लेग्यूम कुल की सदस्य है। विश्व की चौथी मुख्य तिलहनी फसल मूंगफली है। विश्व में 327 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में मूंगफली उगाई जाती है जिससे 539 लाख टन उत्पादन मिलता है और उत्पादकता 1648 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है (एफएओएसटीएटी- 2021)। भारत का मूंगफली के क्षेत्रफल व उत्पादन में क्रमशः प्रथम व द्वितीय स्थान है। भारत में 49.13 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में मूंगफली उगाई जाती है जिससे 83.69 लाख टन उत्पादन मिलता है और उत्पादकता 1758 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है (समान्य निर्धारण-1, 2022-23)। मूंगफली की फसल खरीफ, रबी व जायद तीनों ऋतुओं में उगाई जाती है पर मूंगफली उत्पादन का 80% उत्पादन केवल खरीफ ऋतु की फसल से प्राप्त होता है। भारत में कुल तिलहनी फसलों के क्षेत्रफल का 18.3% क्षेत्रफल तथा कुल उत्पादन का 26.8% उत्पादन मूंगफली से प्राप्त होता है। भारत में मूंगफली उत्पादन में गुजरात का प्रथम स्थान है। मूंगफली के बीज में 48 से 50% तेल तथा 26 से 28% प्रोटीन पाई जाती है। मूंगफली की खाली में 7.3% नाइट्रोजन पाई जाती है इसलिए खली का प्रयोग फसलों में खाद के लिए किया जाता है। मूंगफली के बीज का प्रयोग विभिन्न प्रकार के व्यंजनों को बनाने में किया जाता है। जैसे- नमकीन, पोहा व चिक्की इत्यादि तथा मूंगफली का भूसा पशुओं को खिलाया जाता है।

फसलों की उपज में खरपतवारों से 33%, कीटों से 27%, व रोगों से 26% तथा अन्य व्याधियों से 12% नुकसान होता है। अर्थात् फसलों में कीटों और रोगों से होने वाले नुकसान की अपेक्षा खरपतवारों से नुकसान अधिक होता है इसलिए खरपतवार नियंत्रण की जागरूकता फैलाने के लिए समन्वित खरपतवार नियंत्रण योजना 1952 में गेहूं, धान और गन्ना के लिए चलाई गई थी बाद में सन 1978 से अखिल भारतीय समन्वित खरपतवार नियंत्रण अनुसंधान कार्यक्रम भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा चलाए चलाया जा रहा है। जबलपुर में खरपतवार अनुसंधान निदेशालय स्थापित है जो खरपतवारों तथा इसके नियंत्रण के बारे में जानकारी देता है। खरीफ ऋतु की तिलहनी फसलों में खरपतवारों से अधिक नुकसान होता है इसीलिए फसलों से उत्पादन कम मिलता है। अधिक उपज लेने के लिए समय पर खरपतवार नियंत्रण करना अति आवश्यक है।

मूंगफली में उगने वाले खरपतवार: किसी स्थान या फसल में उगने वाले खरपतवार वहाँ की जलवायु, भूमि संरचना, भूमि में नमी की मात्रा तथा खेत में बोई गई पिछली फसल आदि पर निर्भर करते है। खरीफ ऋतु की तिलहनी फसलों में उगने वाले सभी प्रकार के खरपतवार मूंगफली की फसल में पाए जाते हैं जो फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करते है जिससे उपज कम मिलती है। मूंगफली की फसल में निम्न खरपतवार उगते है -

घास (संकरी पत्ती) कुल वाले खरपतवार: डैक्टाइलोक्टेनियम एजिप्टियम (मकरा), इचिनोक्लोआ कोलोनम (जंगली धान), पैनिकम रिपेंस (टारपीडो घास), सिनोडोन डेक्टाइलॉन (बरमूडा घास), ब्राचीरिया रामोसा (सिग्नल घास), सैकरम स्पान्टेनियम (कांस), सोरघम हेलपेंस (जोहंसन घास) आदि।

सेज- साइपरस रोटंडस (मौथा)

चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार- सेलोसिया अर्जेन्टीया (कंघी), कॉमेलिना बेंघालेंसिस (कनकउआ), यूफोरबिया हिरटा (दूधी), फिलैंथस निरुरी (फ्लाईरोस्ट पत्ती का फूल), ऐमारैंथस विरिडिस (जंगली चौलाई), क्लियोम विस्कोसा (मकड़ी), पोर्टुलाका ओलेरासिया (नुनिया), बोएरहाविया डिफ्यूसा (विष खपरा), एक्लिप्टा अल्बा (भांगरा), ट्रिबुलस टेरेस्ट्रिस (पंचर बेल), कोकिनिया ग्रैंडिस (इंडियन आइवीगॉर्ड), कैसिया ऑक्सीडेंटलिस (कॉफी सेन्ना), डिगेरा अर्वेन्सिस (ऐमारैंथस), सोलनम नाइग्रम (मकोय) आदि।

मूंगफली में खरपतवारों से होने वाली हानियां: मूंगफली खरीफ ऋतु की फसल है इसलिए खरपतवार अधिक मात्रा में उगते है क्योंकि रबी ऋतु की अपेक्षा खरीफ में खरपतवार अधिक उगते है जो फसल के पोषक तत्व, नमी, प्रकाश और स्थान के साथ प्रतिस्पर्धा करके उपज कम कर देते है।

1. मूंगफली की फसल में खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवस्था बुवाई के 30 से 40 दिन बाद तक है इसलिए मूंगफली की फसल को बुवाई के 40 से 50 दिन बाद तक खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। इस समय पर फसल खरपतवार मुक्त न होने से मूंगफली की उपज में 30 से 34: तक गिरावट आ जाती है।

2. मूंगफली की फसल में खरपतवारों से 15 से 39 किलो नाइट्रोजन, 5 से 9 किलो फास्फोरस तथा 21 से 24 किलो पोटाश इत्यादि पोषक तत्वों का पलायन प्रति हे. हो जाता है। जिससे फसल को उचित मात्रा में पोषक तत्व नहीं मिलते हैं।

3. मूंगफली की फसल में अधिक खरपतवार उगने से फसल में कीट और रोगों का प्रकोप अधिक हो जाता है क्योंकी खरपतवार कीट और रोगों को आश्रय देते हैं।

4. फसल- खरपतवार की क्रान्तिक अवस्था के दौरान फसल में अधिक खरपतवार होने से फसल की उपज में कमी आने के साथ- साथ फसल की गुणवत्ता में भी कमी आ जाती है जिससे मार्केट मूल्य कम मिलता है।

समन्वित खरपतवार नियंत्रण- खरपतवार नियंत्रण के लिए विभिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता है जैसे- निवारक विधि, यांत्रिक विधि, रासायनिक विधि और जैविक विधि। खरपतवार नियंत्रण के लिए इन विधियों को एक साथ अपनाना समन्वित खरपतवार प्रबंधन कहलाता है। मूंगफली की फसल में निम्न प्रकार से समन्वित खरपतवार प्रबंधन किया जा सकता है-

1. बीज चयन करते समय ध्यान रखें बीज में किसी खरपतवार के बीज नहीं होने चाहिए। खेत में पूर्ण रूप से सड़ी हुई गोबर या कंपोस्ट खाद का प्रयोग करके, खेत की तैयारी और जुताई के लिए प्रयोग किए जाने वाले यंत्रों की बुवाई से पूर्व अच्छे से साफ-सफाई करके तथा सिंचाई नालियों की सफाई करके खरपतवारों का प्रवेश खेत में होने से रोका जा सकता है।

2. खेत में अधिक खरपतवार होने पर फसल की बुवाई से पूर्व खरपतवारों को जलाकर नष्ट कर देना चाहिए। या फसल की बुवाई करने से पूर्व खेत में पानी भर देने से खरपतवार जल्दी उग आते है इन खरपतवारों को जुताई करके या ग्लाइफोसेट या पैराक्वाट का छिड़काव करके नष्ट कर दिया जाता है, बाद में मूंगफली की बुवाई करें जिससे फसल में खरपतवार नही उगते है।

3. सघन फसलें उगाने से निचले स्थान तक प्रकाश नहीं पहुंच पाता है जिससे खरपतवार अपनी वृद्धि और विकास नहीं कर पाते है, अतः मूंगफली की फसल बाजरे के साथ उगाने से खरपतवार कम उगते है। उचित फसल चक्र अपनाने तथा अंतवर्तीय फसलें उगाने से खरपतवारों की संख्या कम हो जाती है।

4. बुवाई के 25, 35 और 45 दिन बाद हाथ से निराई-गुड़ाई करके खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए। बुवाई के 45 से 50 दिन बाद निराई-गुड़ाई बंद कर देना चाहिए क्योंकि पेगिंग अवस्था शुरू हो जाती है। पलवार के द्वारा फसलों में खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता है तथा पलवार के द्वारा मृदा में नमी संरक्षित रहती है।

5. सकरी पत्ती वाले खरपतवार, पूर्ण ताना परजीवी अमरबेल और सेज जैसे खरपतवार उगने पर खेत में ग्लाइफोसेट की 10 मिली मात्रा का छिड़काव प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के 15 दिन पहले कर देना चाहिए ।

6. मूंगफली की फसल में नाइट्रोफेन या एलाक्लोर की 1.5 किलो सक्रिय मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से अंकुरण के पूर्व खेत में प्रयोग करनी चाहिए या फ्लूक्लोरेलीन की 2 किलोग्राम या पेंडीमेथालिन की 1 से 1.5 किलोग्राम सक्रिय मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के पूर्व खेत में प्रयोग करनी चाहिए।

7. बायोपोलारिस एक सूक्ष्म खरपतवारनाशी है जो बरु (जॉनसन घास) को नष्ट करता है। लुबाओ- 2 अमरबेल का जैव खरपतवारनाशी है इसके प्रयोग से अमरबेल का नियंत्रण किया जाता है।

8. बैक्टरा वेरुटेना नामक मित्र कीट के द्वारा मौथा को नियंत्रित किया जाता है। जाइगोग्रामा बाइकोलोराटा नामक मित्र कीट और गेंदा की जड़ से निकलने वाले रसायन द्वारा गाजर घास को नियंत्रित किया जाता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कृषि उपयोगी मोबाइल ऐप्सः डिजिटल कृषि का आधार

नवनीत मौर्य, अबधेश कुमार
शोध छात्र, कृषि प्रसार, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बांदा (उ.प्र.)

दिव्या सिंह कनिष्ठ अनुसंधान सहायक
बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बांदा

उमंग ऐप

- उमंग एप एक एकीकृत एप है जिसका उपयोग आयकर फाइलिंग, आधार और भविष्य निधि पूछताछ
- गैस सिलिंडर बुकिंग और पासपोर्ट सेवा सहित विभिन्न भारतीय ई-सरकारी सेवाओं तक पहुंचने के लिए किया है।
- इसमें राज्य और केंद्र सरकार के लगभग 127 विभागों की 841 सेवाएं देश की 12 भाषाओं में है। • भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रद्योगिकी के द्वारा लाया गया है।

https://play.google.com/store/apps/details?id=in.gov.umang.negd.gwc

राइसएक्सपर्ट ऐप

- आईसीएआर-एनआरआरआई 'राइसएक्सपर्ट' ऐप किसानों को कीटों, पोषक तत्वों, खरपतवारों, सूत्रकृमियों और रोग संबंधी समस्याओं और विभिन्न पारिस्थितिकी हेतु चावल की किस्मों। • विभिन्न क्षेत्रों हेतु कृषि उपकरणों और कटाई के बाद के कार्यों के बारे में वास्तविक समय में जानकारी प्रदान करता है। • किसान अपने चावल के खेतों में निदान उपकरण के रूप में इस ऐप का उपयोग कर सकते हैं। • एसएमएस के माध्यम से प्राप्त संदेशो, फोटो और रिकॉर्ड की गई आवाज भेजकर अपनी समस्याओं का त्वरित समाधान पा सकते हैं।

https://play.google.com/store/apps/details?id=com.icar.ricexpert

पीएमआईएस फॉर टोमाटो ऐप

- आईपीएम कीट प्रबंधन के लिए विभिन्न परिस्थितियों में सुरक्षित कीट नियंत्रण करने के उपायों को बताती है। • जो कीटनाशकों के उपयोग को कम करने में मदद करती है और इस प्रकार पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले हानिकारक प्रभाव से बचाती है। • जो सही समय पर सही निर्णय लेने में मदद करता है

https://play.google.com/store/apps/details?id=nic.PMIS_B

किसान सुविधा ऐप

- किसान सुविधा, कृषि और सहकारिता विभाग, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा विकसित एक सर्वव्यापी मोबाइल ऐप है
- ऐप कई भारतीय भाषाओं में उपलब्ध है। • ये किसानों को खरीददारों की जानकारी, बाजार मूल्य की जानकारी।
- किसान क्रेडिट कार्ड, मृदा स्वास्थ्य कार्ड, कोल्ड स्टोरेज से संबंधित जानकारी प्रदान करता है।

https://kisansuvidha.gov.in/

गेहूँ डॉक्टर ऐप

- गेहूं डॉक्टर, भारतीय गेहूं और जौ अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित किया गया है। • इसमें मुख्य रूप से हिंदी भाषा का उपयोग किया जाता है, ताकि किसान समुदाय को अधिकतम लाभ मिल सके। • यह मुख्य रूप से गेहूं की बीमारियों, कीड़ों, किसी भी क्षेत्र की मुख्य बीमारियों, रोग प्रतिरोधी किस्मों की जानकारी, फसल कटाई के बाद के भंडारण प्रबंधन के बारे में जानकारी प्रदान करता है।

https://play.google.com/store/apps/details?id=iiwbr.Gehoon.GehoonDoctor

दलहन ज्ञान मंच ऐप

- भाकृअनुप, भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान कानपुर द्वारा विकसित दलहन ज्ञान मंच पर भारत में उगाई जाने वाली प्रमुख दलहनी फसलों जैसे चना, अरहर, मटर, मसूर, मूंग, उरद आदि से संबन्धित उपलब्ध कराता है । • इसमें दलहनी फसलों को हानि पहुँचाने वाले कीटों, रोगों की पहचान व उनके प्रबंधन की जानकारी उपलब्ध करता है।

https://www.dalhangyanmanch.res.in/

ई-गोपाला ऐप

- पशुपालन और डेयरी विभाग द्वारा विकसित ई-गोपाला ऐप गाय से संबंधित संपूर्ण जानकारी जैसे पोषण चारा प्रबंधन, प्रमुख रोग एवं निदान की जानकारी, टीकाकरण की जानकारी, गर्भावस्था की जानकारी के लिए एक सूचना केंद्र का काम करता है
- ई-गोपाला ऐप गौ पालकों के लिए माह वार होने वाली कार्यों की जानकारी मोबाइल पर सन्देश भी प्रदान करता है • सरकार द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओ एवं सब्सिटी के बारे में जानकारी उपलब्ध करता है।

https://play.google.com/store/apps/details?id=coop.nddb.pashuposhan

बीजक मंडी - कृषि व्यापार ऐप

- फसल को बेचने वाले एवं खरीदारों के बीच एक माध्यम का कार्य करता है। • इसके साथ ही ये खरीददार को खोजने का भी कार्य करता है जिससे लेन - देन में आसानी हो सके।

- ये आपूर्तिकर्ताओं और खरीददारों के बीच ई - बही खाता के रूप में भी कार्य करता है • भुगतान के त्वरित और वास्तविक समय के विवरण और उधार की सुविधा के द्वारा जल्दी रूपए स्थानांतरण का मार्ग प्रदान करता है।

https://play.google.com/store/apps/details?id=com.bedwal.bijak.mvp

एग्री ऐप

- एग्री एप टेक्नोलॉजीस प्राइवेट लिमिटेड द्वारा विकसित इस एप में फसल उत्पादन, फसल संरक्षण, कृषि के साथ स्मार्ट खेती और इससे संबंधित सेवाओं के बारे में पूरी जानकारी प्रदान करता है। • एक सूचना केंद्र होने के अलावा, इस पर किसानों और कृषि से संबंधित बीज, उर्वरक, रसायन जैविक उर्वरक बेचने वाले विक्रेताओं दोनों को एक ऑनलाइन बाजार प्रदान करता है,

https://play.google.com/store/apps/details?id=com.criyagen

भैंस पोषाहार ऐप

- भैंस पोषाहार एक शैक्षिक मोबाइल ऐप है, जिसे आईसीएआर-सीआईआरबी, हिसार द्वारा विकसित किया गया है भैंस मालिकों वीएलडीए और स्नातक पशु चिकित्सकों के लिए ज्ञान प्रदान किया जा सके। • भैंस पालन किसानों को विभिन्न शारीरिक चरणों के अनुसार चारा प्रबंधन, नमक और पीने के पानी का महत्व, साइलेज तैयार करने की विधि एवं संपूर्ण चारा प्रबंधन शामिल है

https://play.google.com/store/apps/details?id=com.cirb.buffaloposhahar

बकरी मित्र ऐप

- बकरी मित्र ऐप आईसीएआर-सीआईआरजी मखदूम, फराह, मथुरा और आंतरिक जलवायु अनुसंधान संस्थान नैरोबी केन्या के सहकारी सहयोग से उत्तरप्रदेश और बिहार राज्य में बकरी के दूध और मांस उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से बनाया गया है। • बकरी मित्र ऐप में बकरी पालन एवं प्रबंधन की संपूर्ण जानकारी जैसे कृत्रिम गर्भाधान की जानकारी, गर्भावस्था और प्रसव की जानकारी, पोषण प्रबंधन, रोग प्रबंधन स्वास्थ्य संबंधी जानकारी, नस्लों की जानकारी सभी जानकारी उपलब्ध करवाता है • इसके साथ ही ये ऐप सरकार द्वारा बकरी पालको के लिए योजनाओ के बारे में भी बताता है।

https://play.google.com/store/apps/details?id=com.cirg.bakrimitra

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

आर्थिक विकास में महिला सशक्तिकरण की भूमिका

मनीषा शर्मा (विद्यावाचस्पति)
प्रसार शिक्षा एवं संचार प्रबंधन, सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय बीकानेर, (राजस्थान)

महिला सशक्तिकरण और आर्थिक विकास एक-दूसरे से बड़े घनिष्ट रूप से संबंधित हैं।एक दूसरे के पूरक है तो ये कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी, क्योंकि आत्मनिर्भरता सशक्तिकरण की पहली शर्त है। आत्मनिर्भर आने से ही सशक्तिकरण संभव होता है और इसका सीधा प्रभाव हमारे जीवन स्तर में सुधार पर पड़ता है। महिलाएं हमारे देश की आधी आबादी हैं, जब अधिक महिलाएं काम करती हैं, तो इसका सीधा असर हमारी अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। महिला आर्थिक सशक्तिकरण सकारात्मक विकास परिणामों और उत्पादकता को बढ़ाता है, इसके आलावा यह आर्थिक विविधीकरण और आय समानता को भी बढ़ाता है। वर्तमान में, भारत में लगभग 432 मिलियन कामकाजी महिलाएं हैं, जिनमें से 343 मिलियन असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं। मैकिन्से ग्लोबल इंस्टीट्यूट की एक रिपोर्ट ने अनुमान लगाया है कि महिलाओं को समान अवसर देकर, भारत 2025 तक अपने सकल घरेलू उत्पाद में 770 बिलियन अमेरिकी डॉलर जोड़ सकता है। भारतीय स्टार्टअप दृश्य एक महत्वपूर्ण बदलाव देख रहा है क्योंकि महिला उद्यमी बाधाओं को तोड़ती हैं और अपनी पहचान स्थापित करती हैं। एक हालिया रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत के लगभग 18 त्न यूनिकॉर्न अब महिलाओं द्वारा स्थापित किए गए हैं। भारत, देश में जहां गहरी पितृसत्ता वाले समाज के रूप में, भले ही महिलाएं रोजगार प्राप्त करना चाहती हों, लेकिन दूषित और रूढ़िवादी सामाजिक सोच के कारण महिला घरेलू जिम्मेदारी की प्रमुख वाहक के रूप में मानी जाती हैं। और यही सोच उनके पुरुष समकक्षों की तुलना में उनकी आर्थिक उन्नति और अवसरों तक पहुंच को सीमित करती है। इस तरह के परिदृश्य में, स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) उन महिला उद्यमियों के बीच एक ब्रिज के रूप में कार्य कर रहे रहे हैं जिनके पास अपना उद्यम शुरू करने की इच्छा है, लेकिन उनके पास अपने सपने को पूरा करने के लिए पर्याप्त संसाधन और माहौल नहीं हैं। महिलाएं देश की आधी आबादी है जब अधिक महिलाएं काम करती हैं, तो इसका सीधा असर हमारी अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। महिला आर्थिक सशक्तिकरण, सकारात्मक विकास परिणामों के अलावा उत्पादकता को बढ़ाता है, इसके साथ ही आर्थिक विविधीकरण और आय समानता को भी बढ़ाता है।महिलाओं ने बीते दशकों में स्वयं को आत्मनर्भर बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाये है। महिलाये सांगठनिक स्तर पर अधिक मजबूती से आगे बढ़ रही है। उनके सामूहिक प्रयास बड़े पैमाने पर सामाजिक,आर्थिक और काफी हद तक राजनैतिक परिदृश्य पर बड़े बदलाव के साक्षी बन रहे है। महिलाये संगठित हो कर ही अपनी दिशा और दशा बदल सकती है, ये बात वो समझ चुकी है। लगातार बढ़ रही आर्थिक असमानता भारत के आर्थिक विकास में बहुत बड़ी रुकावट है। भारत की कुल 'एमएसएमई' का सिर्फ उन्नीस प्रतिशत महिलाओं द्वारा संचालित हो रहा है। महिलाओं का वेतन भी पुरुषों के वेतन का पैंसठ प्रतिशत है। रोजगार में आर्थिक सुधारों में महिलाओं के आर्थिक विकास को मुख्य रूप में देखा जाना चाहिए। एक रिपोर्ट के अनुसार यदि भारत में महिलाओं को रोजगार में पुरुषों के बराबर ही तवज्जो मिल जाए, तो अर्थव्यवस्था में बिना कोई परिवर्तन हुए भी जीडीपी सात अरब अमेरिकी डालर तक बढ़ सकती है।

भारत एक ऐसा देश है जहां समाज पुरुष प्रधान रहा है और यहां महिलाओं की परिवार के पुरुष सदस्यों पर निर्भरता उनके जीवन के लगभग हर क्षेत्र में देखी गई। कुछ हद तक, परिवार में महिलाओं की निम्न स्थिति और निर्णय लेने की कमी के लिए पुरुषों पर उनकी आर्थिक और सामाजिक निर्भरता को जिम्मेदार माना जाता है।

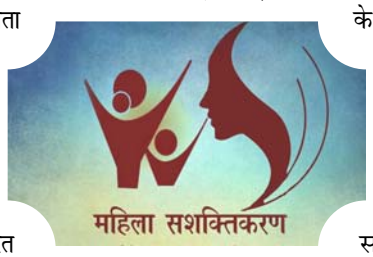

हमारा मानना है कि महिलाओं का आर्थिक विकास तभी सफल हो होगा जब हर महिला रोजगार को अपना लक्ष्य बना दे। भारत में वर्तमान महिला आर्थिक विकास से संबंधित कार्यों और नीतियों पर एक दृष्टि डालें, तो पाएंगे कि ये बात सच है कि आजादी के इतने वर्षों बाद भी महिला सशक्तीकरण का विचार हमारे जेहन में तो आता है लेकिन इस पर महत्वपूर्ण कार्य करना अभी बाकी है।

जानिए....नारी हित में चलाई जा रहीं महत्वपूर्ण योजनाएं

- राजस्थान कृषि प्रसंस्करण, कृषि व्यवसाय एवं कृषि निर्यात प्रोत्साहन योजना
- इंदिरा महिला शक्ति उद्यम प्रोत्साहन योजना
- महिला स्वयं सहायता समूह कार्यक्रम
- राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन बीज मिनिकिट
- जन समूह बीमा योजना
- बाजार के बुनियादी ढांचे का सृजन/विकास
- सूक्ष्म और लघु उद्यम क्लस्टर विकास कार्यक्रम (एमएसई-सीडीपी)
- अमृता हाट बाज़ार
- इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन योजना
- राज्य योजनान्तर्गत वित्तीय सहायता योजना
- गरिमा बालिका संरक्षण एवं सम्मान योजना
- सावित्री बाई फुले महिला कृषक सशक्तिकरण योजना
- महात्मा ज्योतिबा फूले मंडी श्रमिक कल्याण योजना
- धन लक्ष्मी महिला समृद्धि केन्द्र
- सुकन्या समृद्धि योजना
- प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना
- सुरक्षित मातृत्व आश्वासन सुमन योजना
- फ्री सिलाई मशीन योजना
- प्रधानमंत्री समर्थ योजना
- महिला शक्ति पुरस्कार
- वृद्धावस्था, बिधवा/परित्यक्ता एवं विषेष योग्यजन पैंशन

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

खरीफ की फसल में बीजोपचार की विधि, महत्व एवं सावधानियां

जय प्रकाश गुप्ता स्कूल ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज, रैफल्स यूनिवर्सिटी, नीमराना (राजस्थान)

बीज पादप जीवन का मुख्य आधार है जो एक संतति से दूसरी संतति तक जीवन वाहक का कार्य करता है। क्योंकि पौधे का जीवन चक्र बीज से प्रारंभ होकर बीज में ही समाप्त हो जाता है। अतः बीज का स्वस्थ होना अति आवश्यक है ताकि वह स्वस्थ संतति को कायम रख सके अगर बीज ही रोगाणुओं से ग्रसित हो जाएंगे तो उससे उगने वाले पौधा अस्वस्थ, रोगग्रस्त, कमजोर, ओज रहित व किसानों हेतु अलाभकारी सिद्ध होंगे। फसल के अच्छे उत्पादन के लिए जिस प्रकार उच्च गुणवत्ता युक्त बीज का चयन अति महतवपूर्ण है,उसी प्रकार बीज की बुवाई से पूर्व बीजोपचार अत्यंत ही आवश्यक हैं। कृषि क्षेत्र में हो रही निरंतर वैज्ञानिक प्रगति से लाभ तभी हो सकता है जब उच्च गुणवत्तायुक्त उन्नत किस्मो के शुद्ध बीजों का चुनाव किया जाए तथा बुवाई के पूर्व उसे उपचारित करके ही बुवाई की जाए।

बीजो का अंकुरण बढ़ाने, कीटों व रोगों से सुरक्षा करने के लिए बीजोपचार अतिआवश्यक प्रक्रिया है। अगर हम फसल सुरक्षा की बात करते हैं तो बीज उपचार द्वारा फसलों में होने वाले नुकसान को कम करके 15 से 20% तक शुद्ध लाभ कमाया जा सकता है। किसानो द्वारा बीजोपचार की महत्वपूर्ण प्रक्रिया को अपनाने के लिए प्रचार प्रसार की आवश्यकता है जिससे फसलो मे इसके फायदे की जानकारी किसानों तक पहुंच सके। सत प्रतिशत बीजोपचार को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार एवं राज्य सरकार कार्यरत है, जिसमे कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, आत्मा, औद्योगिकी संगठन एवं एन.जी.ओ. मिलकर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

बीजों का FIR क्रम मे उपचार किया जाना चाहिए अर्थात सबसे पहले फफूंदनाशक दवाओं से, फिर आवश्यकता के अनुसार कीटनाशक दवा से एवं अंत मे जीवाणु कल्चर से उपचारित करना चाहिये। रसायनों अथवा जैवकारको के अनुप्रयोग के लिए आमतौर पर तीन विधियां अपनाई जाती है जो की रसायन या जैवकारक की प्रकृति पर निर्भर करती है-

धूल उपचार विधि: इसके अंतर्गत सूखे चूर्ण अथवा पाउडर से बीजोपचार किया जाता है। उदाहरण हेतु कार्बेन्डाजिम द्वारा बीजोपचार।

कर्दम/स्लरी उपचार विधि: पानी में घुलनशील चूर्ण के मिश्रण के प्रयोग को कर्दम/स्लरी उपचार कहते है।

द्रव्य उपचार विधि: तरल रूप में प्रयुक्त रसायनों के प्रयोग को द्रव्य उपचार कहते हैं।

शुष्क विधि: इस विधि के अंतर्गत बीजों को उपचारित करने के लिए बीज और दवा की उपयुक्त मात्रा को प्लास्टिक के ड्रम मे डालकर 10-15 मिनट घुमाया जाता है। जिससे दवा की हल्की परत सामान रूप से बीज के ऊपर चढ़ जाती है। यदि ड्रम उपलब्ध नही हो तो किसी साफ बर्तन मे या पॉलिथीन पर बीज को डालकर उसके ऊपर आवश्यक रसायन या जैव-नियंत्रक की मात्रा को छिड़क या भुरकर उसे दस्ताने पहनकर हाथ से मिला दिया जाता है, तदोपरांत उपचारित बीज को छाया मे सुखाकर तुरंत बुवाई कर देनी चाहिए।

गीली विधि: इस विधि से बीजो को उपचारित करने के लिए पानी मे घुलनशील दवाओं को प्रयोग में लिया जाता है। बीज को उपचारित करने हेतु मिट्टी या प्लास्टिक के बर्तन मे आवश्यकता अनुसार दवा लेकर घोल बना ले, तदोपरांत बीज को 10-15 मिनट हेतु डुबोएं। उसके बाद बीज को निकालकर छाया मे सुखा कर बुवाई करे।

जीवाणु कल्चर विधि: इसमें जीवाणु कल्चर (राईजोबियम, ऐजोटोबेक्टर, पीएसबी कल्चर) से बीजोपचार करने हेतु एक लीटर पानी मे 250 ग्रा. गुड डालकर गर्म करते हैं। इसके बाद घोल को ठंडा होने पर 600 ग्राम कल्चर (3 पैकेट) मिलाकर तेयार घोल को एक हे. की फसल के बीज को उपचारित करने के काम मे लेते है।

खरीफ की मुख्य फसलों में बीजोपचार की सिफारिशें

धान: धान के बीज को उपचारित करने के लिए दस ग्राम बाविस्टीन व एक ग्राम सेप्ट्रोसाइक्लिन जीवाणुनाशी के घोल को दस लीटर पानी में मिलाएं। इस घोल में पांच किलोग्राम बीज को 18 घंटे तक भिगोकर रखें। 18 घंटे बाद बीज को घोल से निकालकर इसे गीली बोरी से ढक दे। इसके बाद जब बीज में सफेद अंकुरण नजर आने लगे तब समझें कि यह बीज नर्सरी में बुवाई के उपयुक्त है। इसी तरह बुवाई से पूर्व पौध को भी उपचारित करना चाहिए। इसके लिए ग्राम बाविस्टीन दवा को एक लीटर पानी में मिलाकर घोल बनाएं। तैयार पौध को इस घोल में आधा घंटा तक डुबा कर रखें। इसके बाद रोपाई करें।

अमेरिकन कपास: कपास के बीजो से रेशे हटाने के लिए व्यापारिक गंधक के तेजाब का प्रयोग करें। 10 किलो बीज के लिए 1 लीटर गंधक के तेज़ाब पर्याप्त होता है। मिट्टी या प्लास्टिक के बर्तन मे बीज डालकर थोडा गंधक का तेजाब डालिये तथा एक या दो मिनट लकड़ी से हिलाएं। बाद मे बीज को तुरन्त बहते हुए पानी मे धो डालिए और ऊपर तैरते हुए कच्चे बीज को अलग कर दीजिए। बीज के अन्दर पाई जाने वाली गुलाबी लट की रोकथाम के लिए आवश्यकतानुसार 4 से 40 किलो बीज को 3 ग्राम एल्युमिनियम फास्फाइड से कम से कम 24 घन्टे धूमित करे। यदि धूमित करना संभव नही हो तो बीज को तेज धूप मे फैला कर कम से कम 6 घन्टे तक तपाएं। रेशे रहित एक किलोग्राम नरमे के बीज को 5 ग्राम इमिड़ाक्लोप्रिड (70 डब्ल्यू.एस.) या 4 ग्राम थायोमिथोग्जाम (70 डब्ल्यू.एस.) से उपचारित कर पत्तीरस चूसक हानिकारक कीट व पत्ती मरोड़ वायरस को कम किया जा सकता है।

देशी कपास: बीज के अन्दर पाई जाने वाली गुलाबी लट की रोकथाम के लिए आवश्यकतानुसार 4 से 40 किलो बीज को 3 ग्राम एल्युमिनियम फास्फाइड से कम से कम 24 घन्टे धूमित करे7 यदि धूमित करना संभव नही हो तो बीज को तेज धूप मे फैला कर कम से कम 6 घन्टे तक तपाये। जड़गलन की समस्या वाले खेतों में बुवाई से पूर्व 6 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति बीघा की दर से मिट्टी में डालकर मिला दे7 बोये जाने वाले बीजो को कार्बोक्सिन (70 डब्ल्यू.पी.) 0.3 प्रतिशत या कार्बेन्डाजिम (50 डब्ल्यू.पी)2 प्रतिशत (2 ग्राम/ लीटर पानी मे) के घोल मे भिगोकर अथवा सादे पानी मे भिगोये गये बीज को कुछ समय तक सुखाने के बाद ट्राईकोडर्मा हरजेनियम 10 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके बोये।

जिन खेतों में जड़ गलन के रोग का प्रकोप अधिक है उन खेतों के लिए बुवाई से पूर्व 5 किलोग्राम ट्राईकोड्रमा हरजेनियम को 50 किलो नमी युक्त गोबर की खाद (एफ.वाई.एम.) में अच्छी तरह मिलाकर 10-15 दिनों के लिए छाया में रख दे। इस मिश्रण को बुवाई के समय एक बीघा में पलेवा करते समय मिट्टी मे मिला दें। साथ मे ट्राईकोडर्मा जैव से बीज उपचार करें।

मूँग: बुवाई से पूर्व बीज को थाईरम या कैप्टान 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से उपचारित करे। राइजोबियम कल्चर से उपचारित कर बुवाई करने मे पैदावार में बढोतरी पाई जाती है। इसके लिए 600 ग्राम राईजोबियम कल्चर को 1 लीटर पानी मे 250 ग्राम गुड़ के साथ गर्म कर ठंडा होने पर बीज को उपचारित कर छाया मे सुखा लेना चाहिये तथा बुवाई कर देनी चाहिये।

ग्वार: फफूंद-जनित रोगों से बचाने के लिए बीज को बोने से पूर्व 100 मिली स्ट्रेप्टोसाइक्लीन के घोल में 4-5 घन्टे तक उपचारित करे। जीवाणु कल्चर (राईजोबियम, ऐजोटोबेक्टर एवं पी.एस.बी. कल्चर) पाउडर के तीन पैकेट एक हेक्टेयर क्षेत्र के बीज को बुवाई से एक घन्टे पूर्व उपचारित कर बोने पर नत्रजन एवं फॉस्फोरस उर्वरको की बचत की जा सकती है।

मूंगफली: कॉलर रोट (सन्धि विगलन) के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित में से किसी एक फफूंदनाशी से बीज उपचारित कर बुवाई करें। कार्बेन्डाजिम (50 डब्ल्यू.पी.) 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से या कार्बोक्सिन (37.5%)+(थाइराम 5%) 2 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से या प्रोपेकोनाजोल (25 ईसी) 2.0 मिली/किलों बीज की दर से उपचारित कर बोने से रोग का प्रभावी नियंत्रण पाया गया है। बुवाई के समय प्रति किलो बीज को 10 ग्राम ट्राईकोड्रमा हरजेनियम पाउडर से उपचारित कर बुवाई करने पर कॉलर रोट (सन्धि विगलन) या जड़ गलन रोगों का अत्यधिक प्रभावी नियंत्रण पाया गया है।

तिल: बुवाई से पहले बीज को 3 ग्राम थाइरम या कैप्टान से प्रति किलो बीज को उपचारित कर बोये।

बीजोपचार के महत्व

फसल की बीज व मृदा जनित रोगों व कीटो से बचाव। बीजो का अंकुरण अच्छा व एक समान होता है। दलहनी फसलो की जड़ो मे नोडयूलेसन की बढोतरी होती है। बीजो को पौषक तत्व उपलब्ध होते है। बीजो की सुषुप्तावस्था तोड़ने मे सहायक। फसल की उत्पादकता मे बढ़ोतरी।

बीजोपचार मे सावधानियां: बीज को एफ. आई. आर. (FIR) क्रम मे सबसे पहले फफूंदनाशक, फिर कीटनाशक एवं अंत मे जीवाणु कल्चर से उपचारित करना चाहिये। जितना बीज बुवाई के लिए काम मे लेना हो उतना ही बीज उपचारित करना चाहिए। उपचारित बीजो को छायादार जगह मे सुखाकर 12 घंटे के भीतर बुवाई के काम लाएं। बचे हुए उपचारित बीज को खाने के काम नही लाना चाहिये और न ही पशुओ को खिलाये। दवा के खाली डिब्बो या पैकेट्स को नष्ट कर देना चाहिए। पैकेट्स पर लिखी हुई उपयोग की अवधि के पूरा हो जाने के बाद उस कल्चर का उपयोग बीजोपचार मे न करे। जिस व्यक्ति के शरीर विशेषकर हाथ मे घाव या खरोंच लगी हो उससे बीज को उपचारित न करवाएं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

पौधों का एक परंपरागत जैविक उत्तम टिकाऊ पोषण है: कुनपजल

खेता राम मास्टर इन वृक्षायुर्वेद-अंतिम वर्ष
रवीना मास्टर इन वृक्षायुर्वेद, प्रथम वर्ष
वृक्षायुर्वेद विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान (मानद विश्वविद्यालय) जयपुर
प्रो. ए रामामूर्ति आचार्य, वृक्षायुर्वेद विभाग
प्रो. सुमित नत्थानी सह आचार्य , वृक्षायुर्वेद विभाग
डॉ. तरुण शर्मा सहा. आचार्य, वृक्षायुर्वेद विभाग

बढ़ती जनसंख्या वृद्धि अधिक से अधिक खाद्य उत्पादन की मांग कर रही है और इसे प्राप्त करने के लिए रसायन आधारित कृषि अब किसानों की प्रमुख प्रथा है। यद्यपि हरित क्रांति के बाद शुरुआती कुछ दशकों तक रसायनों (कीटनाशकों, उर्वरकों आदि) के अनुप्रयोग ने कृषि क्षेत्र के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, लेकिन इसका आकर्षण धीरे-धीरे फीका पड़ गया है, जिसके परिणाम स्वरूप फसल उत्पादन में स्थिरता आ गई है। आज की गहन कृषि में रासायनिक आदानों का अत्यधिक और अवैज्ञानिक उपयोग मिट्टी के भौतिक-रासायनिक गुणों जैसे लवणता की समस्या, खराब मिट्टी एकत्रीकरण, मिट्टी पीएच में अचानक परिवर्तन, संघनन और कम जल धारण क्षमता आदि के साथ-साथ कमी के कारण खराब मिट्टी का स्वास्थ्य पैदा कर रहा है। मिट्टी की उर्वरता, सूक्ष्म जीवों की गतिविधियों में बाधा, पर्यावरण में लंबे समय तक विषाक्त पदचिह्न बनाए रखना, जिसके परिणामस्वरूप कुल मिलाकर फसल की वृद्धि, उपज और गुणवत्ता खराब होती है दूसरी ओर, जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण कृषि भूमि का सिकुड़ना लगातार फसल उत्पादकता बढ़ाने का आग्रह करता है। भारत में, हरित क्रांति से पहले, कृषि केवल जैविक आदानों और विधियों का उपयोग करके की जाती थी। पहले के दिनों में, जैविक कृषि आबादी के लिए भोजन का उत्पादन करने में आत्मनिर्भर थी। जैसे-जैसे जनसंख्या वृद्धि धीरे-धीरे हुई, यह टिकने में विफल रही और हरित क्रांति के माध्यम से रसायन आधारित कृषि ने इसका स्थान ले लिया हालाँकि, रसायनों के निरंतर उपयोग के कारण फसल उत्पादन में गिरावट 1990 के बाद से प्रमुख हो गई है और भारतीय कृषि एक हद तक फिर से जैविक कृषि की ओर बदलाव दिखा रही है जैविक कृषि जैव विविधता, जैविक चक्र और पर्यावरण के साथ इसके उचित संपर्क को बनाए रखती है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि जैविक कृषि एक पर्यावरण-अनुकूल, सुरक्षित खेती का तरीका है क्योंकि इसमें किसी भी रसायन का उपयोग नहीं किया जाता है। यह विभिन्न पोषक तत्व प्रदान करता है और सूक्ष्म जीवों की गतिविधि और फसल उत्पादन से संबंधित अन्य प्राकृतिक कार्यों को तेज करता है।

जैविक कृषि ज्यादातर जैविक खाद, जैव-कीटनाशकों, जैविक मल्चिंग आदि के अनुप्रयोग और पर्यावरण-अनुकूल प्रथाओं को अपनाने पर निर्भर करती है। चूँकि जैविक कृषि एक पारंपरिक दृष्टिकोण है, इन जैविक उत्पादों और प्रथाओं के अलावा, स्वदेशी तकनीकी ज्ञान (आईटीके) के रूप में विभिन्न पारंपरिक जैविक सूत्रीकरण भी इसके साथ जुड़े हुए हैं। ये आईटीके स्थान, कच्चे माल की उपलब्धता और किसान के अभ्यास के साथ परिवर्तनशील हैं। वे सूक्ष्मजीवों, मैक्रो और सूक्ष्म पोषक तत्वों, पौधों के विकास को बढ़ावा देने वाले हार्मोन, एंजाइम, विटामिन आदि के अच्छे स्रोत हैं और इनमें जैव-कीटनाशक गुण होते हैं इन सभी फॉर्मूलेशनों में से कुछ अब आईटीके के रूप में हमारे लिए उपलब्ध हैं। ऐसा ही एक पारंपरिक जैविक फॉर्मूलेशन है कुनापजला। यह किण्वन के माध्यम से पशु और पौधों

के उत्पादों से उत्पादित एक तरल कार्बनिक फॉर्मूलेशन है। कुनपजल विभिन्न पोषक तत्वों, विशेष रूप से नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम के साथ-साथ सूक्ष्म जीवों, विकास को बढ़ावा देने वाले पदार्थों आदि से समृद्ध है जो पौधों की वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक हैं। तथा इन कुनापजला में काफी हद तक रासायनिक उर्वरकों को प्रतिस्थापित करने की क्षमता है। वर्तमान जनसंख्या वृद्धि को ध्यान में रखते हुए, जैविक कृषि पर पूर्ण निर्भरता कम से कम अभी के लिए एक व्यावहारिक दृष्टिकोण नहीं है, कुनापजाला एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन में भी कृषि में लाभकारी भूमिका निभाने वाले आईटीके में से एक के रूप में अपनी जगह पा सकता है।

यह जानना जरूरी है

कुनापजला (गंदा तरल पदार्थ) या कुनापाम्बु (किण्वित गंदगी) प्राचीन काल से उपयोग किए जाने वाले पारंपरिक तरल कार्बनिक फॉर्मूलेशन में से एक है। कुनपजल संस्कृत के शब्द 'कुनपा' (यानी मृत शरीर, शव जैसी गंध) और 'जला' (यानी पानी) से बना है। इस जैविक सूत्रीकरण का सबसे प्रारंभिक रिकॉर्ड संभवतः दो दस्तावेजों में पाया गया था, अर्थात् 'वृक्षायुर्वेद' (पूर्वी भारत में 1,000 ईस्वी के आसपास सुरपाल द्वारा लिखित) और 'लोकोपकारा' (दक्षिण भारत के कर्नाटक में 1,025 ईस्वी के आसपास कवि चावुंदराय द्वारा प्रलेखित) दिलचस्प बात यह है कि वृक्षायुर्वेद का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित होने तक कुनापजल की तैयारी, उपयोग और लाभकारी भूमिका को भुला दिया गया था। उसके बाद भी, कृषि शोधकर्ता, वैज्ञानिकों ने इस फॉर्मूलेशन पर लापरवाही दिखाई और वाल्मिकी श्रीनिवास अयंगार्या, एक गणितज्ञ, पहले व्यक्ति थे जिन्होंने कुनापजला के साथ प्रयोग किया और आम और नारियल पर हर्बल कुनापजला की लाभकारी भूमिका का दस्तावेजीकरण किया (अयंगार्या, 2004 ए)। अयंगार्या ने प्राकृतिक रूप से गिरे हुए खट्टे आम और सोपिनट (सैपिंडस इमर्जिनाटस) से तैयार हर्बल कुनापजला के प्रयोग के बाद मिर्च के पौधे की वृद्धि में वृद्धि देखी (अयंगरिया, 2004बी)। बाद में, अरुणाचल प्रदेश में अयंगार्या ने विभिन्न प्रकार के कुनापजला तैयार किए, जैसे इंदसफारी (गोमूत्र में सफारी मछली के एरोबिक किण्वन के माध्यम से) (अयंगार्या, 2005), मुशिका कुनापा (गोमूत्र में चूहों के शरीर के अंगों के एरोबिक किण्वन के माध्यम से) (अयंगार्या, 2006ए) और कुक्कुटा कुनापा (गोमूत्र में चिकन मांस के एरोबिक किण्वन के माध्यम से) (अयंगार्या, 2006 बी) को चाय की झाड़ियों, कीवी फल उद्यान आदि जैसी विभिन्न फसलों में लागू करने के लिए और उनके विकास को बढ़ावा देने और जैव-कीटनाशक गुणों के माध्यम से सकारात्मक परिणाम प्राप्त किए।

कुनापजल को कैसे तैयार करें तथा इनके प्रमाण

हालांकि फसल की वृद्धि और उत्पादकता बढ़ाने में कुनापजला की लाभकारी भूमिका को उजागर करने के अलावा, इसकी विस्तृत तैयारी प्रक्रिया का उल्लेख लोकोपकारा में नहीं किया गया था, वृक्षायुर्वेद (श्लोक 101-106) में सुरपाल ने तैयारी प्रक्रिया (साधले, 1996) का उल्लेख इस प्रकार किया है:

वृक्षायुर्वेद के अनुसार, मृत सूअर का मांस, अस्थि मज्जा, मस्तिष्क, रक्त और मल उपलब्ध होने पर एकत्र किया जाता है और दुर्गंध से बचने के साथ-साथ कुत्ते के हमले जैसे अन्य जानवरों से बचाने के लिए जमीन के नीचे भंडारण के लिए पानी में मिलाया जाता है। हालाँकि सुरपाल ने पहले मृत सूअर का उल्लेख किया, बाद में उपलब्धता के अनुसार किसी भी जानवर (विशेष रूप से, सींग वाले) और मछलियों की वसा, अस्थि मज्जा, मांस, रक्त और मल का उपयोग करने का सुझाव दिया, जिससे किसानों को कच्चे माल का उचित उपयोग करने में लचीलापन मिलता है। भंडारण से पहले, सभी जानवरों और मछलियों के मल या शरीर के अंगों को पानी में उबाला जाना चाहिए और पर्याप्त धान की भूसी के साथ मिट्टी के बर्तन में रखा जाना चाहिए। उपयोग के समय इस मिश्रण में तिल की खली, शहद और पानी में भिगोए हुए काले चने डालकर पकाया जाता है। मिश्रण में थोड़ा सा घी भी डाल सकते हैं. सुरपाल के वृक्षायुर्वेद में, कुनापजला को तैयार करने के लिए आवश्यक सामग्री की मात्रा का कोई उल्लेख नहीं था, जिसे पेड़ों की वृद्धि, फूल और प्रजनन अंगों के विकास के लिए अत्यधिक प्रभावी पौष्टिक तरल कार्बनिक तैयारी के रूप में प्रलेखित किया गया था। सुरपाल के दस्तावेज़ीकरण के लगभग 300 साल बाद, 'सारंगधारा-पद्धति' के एक अध्याय 'उपवनविनोद' (शाकम्भरी-देश यानी बुन्देलखण्ड के राजा हम्मीर के दरबार में एक विद्वान सारंगधर द्वारा लिखित) में मात्रा के बारे में विवरण दिए बिना कुनापजला की तैयारी का उल्लेख किया गया है। सामग्री (मजूमदार, 1935)। सारंगधारा के अनुसार, कुनापजला तैयार करने के लिए, जानवरों (हिरण, सुअर, भेड़, बकरी, गैंडा आदि) के मांस, वसा, अस्थि मज्जा और मछलियों को पानी में उबाला जाता है और मिश्रित दूध, तिल के तेल का पाउडर, काले चने (शहद में उबाले जाते हैं)), उबले हुए पदार्थों वाले मिट्टी के बर्तन में दाल का काढ़ा, घी और गर्म पानी डाला जाता है। बाद में, उपयोग से पहले उबले हुए कुनापजाला को सेने के लिए बर्तन को लगभग दो सप्ताह तक गर्म स्थान पर रखा जाता है। उपवनविनोद के 250 वर्षों के बाद, चक्रपाणि (1577 ई.) द्वारा लिखित 'विश्ववल्लभ' में कुनापजला की तैयारी का भी वर्णन किया गया है, जो जानवरों की खाल के साथ सारंगधारा की प्रक्रिया के लगभग समान थी, जो कच्चे माल के रूप में एकमात्र नया जोड़ है (साधले, 2004)। नेने (1999) ने व्यक्त किया कि जानवरों या मछली के शरीर के अंगों और अपशिष्टों के अलावा, कुनापजाला को पौधे आधारित उत्पादों का उपयोग करके भी तैयार किया जा सकता है। कुनापजला के इस हर्बल संस्करण को शस्यगव्य के नाम से जाना जाता है, जो गाय के गोबर, गोमूत्र, खरपतवार या पौधों के हिस्सों या सब्जियों के अपशिष्ट और पानी के मिश्रण को क्रमशः 1:1:1:2 अनुपात में किण्वित करके तैयार किया जाता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

ग्रीष्मकालीन जुताई ठीक करेगी खेत की मिट्टी की सेहत

डॉ. रतनलाल सोलंकी वरिष्ठ वैज्ञानिक
एवं अध्यक्ष कृषि विज्ञान केन्द्र चित्तौड़गढ़ (राजस्थान)

फसल की अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए रबी की फसल की कटाई के तुरन्त बाद गहरी जुताई कर ग्रीष्म ऋतु में खेत को खाली रखना बहुत ही लाभदायक रहता है, ग्रीष्मकालीन जुताई रबी मौसम की फसलें कटने के तुरन्त बाद में शुरू होती है जो बरसात शुरू होने पर समाप्त होती अर्थात माह अप्रैल से जून माह तक ग्रीष्मकालीन जुताई की जाती है। जहां तक हो सके किसान भाइयों को गर्मी की जुताई रबी की फसल कटने के तुरन्त बाद मिट्टी पलटने वाले से गहरी जुताई कर देनी चाहिए क्योंकि खेत की मिट्टी में नमी संरक्षित होने के कारण बेलों व ट्रेक्टर को कम मेहनत करनी पड़ती है।

ग्रीष्मकालीन जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने पर खेत की मिट्टी ऊपर-नीचे हो जाती है इस जुताई से जो ढ़ेले पड़ते हैं वह धीरे-धीरे हवा व बरसात के पानी से टूटते रहते हैं साथ ही जुताई से मिट्टी की सतह पर पड़ी फसल अवशेष की पत्तियां, पौंधों की जड़ें एवं खेत में उगे हुए खरपतवार आदि नीचे दब जाते है जो सड़ने के बाद खेत की मिट्टी में जीवाश्म/कार्बनिक खादों की मात्रा में बढ़ोतरी करते है जिससे भूमि की उर्वरता स्तर एवं मृदा की भौतिक संरचना में सुधार होता है।

ग्रीष्मकालीन जुताई करने से खेत के खुलने से प्रकृति की कुछ प्राकृतिक क्रियाएं भी सुचारू रूप से खेत की मिट्टी पर प्रभाव डालती है। वायु और सूर्य की किरणों का प्रकाश मिट्टी के खनिज पदार्थों को पौधों के भोजन बनाने में अधिक सहायता करते हैं। इसके अतिरिक्त खेत की मिट्टी के कणों की संरचना (बनावट) भी दानेदार हो जाती हैं, जिससे भूमि में वायु संचार एवं जल धारण क्षमता बढ जाती है। इस गहरी जुताई से गर्मी में तेज धूप से खेत के नीचे की सतह पर पनप रहे कीड़े-मकोड़े बीमारियों के जीवाणु खरपतवार के बीज आदि मिट्टी के ऊपर आने से खत्म हो जाते हैं साथ ही जिन स्थानों या खेतों में गेहूँ व जौ की फसल में निमेटोड का प्रकोप था वहां पर इस रोग की गांठे जो मिट्टी के अन्दर होती है जो जुताई करने से ऊपर आकर कड़ी धूप में मर जाती है। अतः ऐसे स्थानों पर गर्मी की जुताई करना नितान्त आवश्यक होती हैं।

खेत की मिट्टी की ग्रीष्मकालीन जुताई एक महत्वपूर्ण और आवश्यक प्रक्रिया है। इससे मुख्यतया निम्न फायदे हैं:-

बारानी खेती बरसात पर निर्भर करती है अतः बारानी परिस्थितियों में वर्षा के पानी का अधिकतम संचयन करने लिए ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करना नितान्त आवश्यक है। अनुसंधानों से भी यह सिद्ध हो चुका है कि ग्रीष्मकालीन जुताई करने से 31.3 प्रतिशत बरसात का पानी खेत में संचय हो जाता है। जो खेत का पानी खेत में, कुण्ड का पानी कुण्ड में कहावत को चरितार्थ करती है। ग्रीष्मकालीन जुताई करने से बरसात के पानी द्वारा खेत की मिट्टी के कटाव में भारी कमी होती अर्थात् अनुसंधान के परिणामों में यह पाया गया कि गर्मी की जुताई करने से भूमि के कटाव में 66.5 प्रतिशत तक की कमी आती है। खेत में अधिकांश खरपतवारों को नष्ट करने के लिए जुताई करके मिट्टी को पलट देना बहुत अच्छा रहता है इससे बहुवर्षीय खरपतवार जैसे मौथा, दूब आदि आसानी से नष्ट किये जा सकते हैं इससे खेत में उगे/खड़े खरपतवारों की जड़े एवं कायिक प्रजनन अंग भूमि की सतह पर आ जाते हैं जो सूर्य की तेज किरणों, तापमान एवं गर्म हवाओं के सम्पर्क में आकर नष्ट हो जाते हैं। ग्रीष्मकालीन जुताई करने से हानिकारक कीटों का सफलतापूर्वक नियंत्रण किया जा सकता है। गर्मी की जुताई से कीड़ों के अण्डे, प्यूपा तथा इसकी इल्लियां, भूमि की सतह पर आ जाते हैं, जहां वे चिड़ियों द्वारा खा लिये जाते हैं या कड़ी धूप में नष्ट हो जाते हैं इस प्रकार फसलों में लगने वाले कुछ फफूंदनाशक एवं जीवाणु रोगों का प्रकोप कम हो जाता है।

ग्रीष्मकालीन जुताई करने से खेत में पड़े फसल अवशेष/ठूंठ जो फसल की कटाई के बाद खेत की मिट्टी में जुताई से मिल जाते है, जो सूर्य की तेज गर्मी से तपकर तथा बरसात के पानी को सोखकर बड़ी जल्दी ही गल-सड़ कर खेत में कार्बनिक खाद का रूप धारण कर लेते हैं जिससे मृदा की भौतिक दशा में सुधार होता है। ग्रीष्मकालीन जुताई से गोबर की खाद व अन्य कार्बनिक पदार्थ भूमि में अच्छी तरह मिल जाते है जिससे पोषक तत्व शीघ्र ही फसलों को उपलब्ध हो जाते हैं। ग्रीष्मकालीन जुताई से खेत तैयार मिलता है जिससे प्रथम बरसात के साथ ही फसल की समय पर बुवाई की जा सकती है। गर्मी की जुताई हमेशा मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी करनी चाहिए जिससे खेत की मिट्टी के बड़े-बड़े ढेलें बन सके, क्योंकि ये मिट्टी के ढेले गर्मी में चलने वाली गर्म तेज हवाओं से मिट्टी के कण/धूल को खेत से उड़ने नहीं देगें तथा बरसात में ये ढेले अधिक पानी सोखकर पानी खेत के अन्दर नीचे उतरेगा जिससे भूमि की जल धारण क्षमता में सुधार होता है। मिट्टी पलटने वाला हल किसान बैलों या टेऊक्टर द्वारा चलाया जा सकता है। यह किसान भाई खेत की माप एवं उनकी क्षमता पर निर्भर करता है। जिन किसानों के खेतों में ढाल हो वहां कृषकों को ग्रीष्मकालीन जुताई ढाल के विरूद्ध खेतों की जुताई करनी चाहिए ऐसा करने से बरसात में खेत की मिट्टी पानी के बहाव के साथ नहीं जायेगी अर्थात् मिट्टी का कटाव कम होगा साथ ही जमीन में पानी का संचय बढेगा। ग्रीष्मकालीन जुताई के साथ ही खेतों की मेढों का मरम्मत कार्य भी करना चाहिए अर्थात् खेत के चारों तरफ मिट्टी की मेढें बना देनी चाहिए, जिससे बरसात का पानी खेत मे ही रहकर खेत की उर्वरा शक्ति बनायें रखें और मिट्टी के कटाव को रोक सके। यदि खेतों का ढाल अधिक हो तो खेत को मेढों द्वारा छोटे-छोटे टूकड़ों में बांटकर गर्मी की जुताई करनी चाहिए और जहां तक हो सके कृषकों को अपने खेत समतल बनाये रखना चाहिए जिससे न तो पानी के भराव की समस्या बने और नहीं पानी बहकर खेत के बहार जा सकें।

किसान भाइयों यदि आप अपने खेतों की गर्मी की जुताई करेंगे तो निश्चित ही आपकी आने वाली खरीफ मौसम की फसले न केवल कम पानी में हो सकेगी बल्कि बरसात कम होने पर भी फसल अच्छी हो सकेगी तथा खेत से उपज भी अच्छी मिलेगी तथा खर्चे की लागत भी कम आयेगी। जिससे कृषकों की आमदनी में बढ़ोत्तरी होगी। अतः उपरोक्त फायदों को मद्देनजर रखते हुए किसान भाइयों को यथा सम्भव एवं यथा शक्ति, फसल उत्पादन बढाने के लिए हमेशा खेत की गर्मी की जुताई अवश्य करें।

किसान करे, गर्मी की जुताई।
एक काम -तीन आराम पाये।।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

संरक्षित खेती से किसान ग्रीष्मकालीन मूंग की खेती कर लाभ कमाएं

निधि कुमारी विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा व जल अभियंत्रण), कृषि विज्ञान केन्द्र, तुर्की, मुजफ्फरपुर, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)

प्रभात कुमार सिंह अनुसंधान सहायक (जलवायु अनुकूल कृषि कार्यक्रम), डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)

मोती लाल मीणा वरिष्ठ वैज्ञानिक सह अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, तुर्की, मुजफ्फरपुर, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)

अंशू गंगवार विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा व जल अभियंत्रण), कृषि विज्ञान केन्द्र, परसौनी, पूर्वी चंपारण, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)

आशीष राय विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा व जल अभियंत्रण), कृषि विज्ञान केन्द्र, परसौनी, पूर्वी चंपारण, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)

बिहार में मूंग को इसकी कम वृद्धि अवधि और फोटोपीरियड और थर्मल विविधताओं के प्रति कम संवेदनशीलता के कारण विभिन्न मौसमों और फसल प्रणालियों में उगाया जाता है। अतिरिक्त आय, मिट्टी की उर्वरता में सुधार और भूमि के कुशल उपयोग के लिए नई किस्मों की उपलब्धता के कारण गर्मियों के दौरान मूंग की खेती को व्यापक स्वीकृति मिल रही है। मूंग को दाल के रूप में भोजन में समावेश करने पर यह शारीरिक वजन को कम करता है एवं रक्त दाब को नियंत्रित करता है। कोलेस्ट्राल को कम कर हृदय संबंधित रोगों से रक्षा करता है। यह शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता एवं बाह्य संक्रमण से बचाता है। मूंग में पोटेशियम मैग्नीशियम तथा फाइबर की मात्रा अधिक होती है जिससे रक्त दाब नियंत्रित रहता है। मूंग की फसल को उगाने में जो प्रमुख समस्यायें सामने आती हैं। इनमें कीट पतंगों एवं बीमारियों का प्रभाव, खरपतवारों की समस्या, अनिश्चित कालीन वर्षा, अत्यधिक तापमान इत्यादि प्रमुख हैं।

संरक्षित खेती परम्परागत कृषि से हटकर खेती की नई पद्धति है, जिसमें खेतों की कम से कम जुताई या बिना जुताई के बुआई की जाती है, पूर्व फसल के अवशेष का समुचित उपयोग किया जाता है, तथा फसलों की विविधिकरण को अपनाया जाता है। सामान्यत: यह देखा गया है कि अधिकतर किसान धान एवं गेहूं की कटाई के पश्चात शेष बचे नरवाई एवं पराली को जलाकर नष्ट कर देते हैं। यह जल्दी दूसरी फसल की बुआई के लिए प्रमुखता से किया जाता है। जिसमें खेतों में जीवाष्म पदार्थ की मात्रा में सतत् कमी आती है एवं मृदा का ऊपरी सतह कठोर हो जाती है जिसमें मृदा की उर्वराशक्ति नष्ट होने के साथ ही साथ कार्बन की मात्रा में कमी हो जाती है। ■ फसल अवशेषों को जलाने से हमारे मृदा की भौतिक संरचना प्रभावित होती है एवं जल धारण क्षमता कम होती है। ■ फसल अवशेष जलाने से मृदा की जैव विविधता लगभग समाप्त हो जाती है, जिससे मृदा में जैविकीय क्रियाओं में कमी आती है।

संरक्षित खेती से होने वाले फायदे

1.जुताई की लागत में कमी: संरक्षित खेती या शून्य जुताई अपनाने से खेतों को किसी भी प्रकार की जुताई की आवश्यकता नहीं होती है। जिससे प्रक्षेत्र तैयार करने की लागत में कमी आती है। यह लागत लगभग रूपये 2100-2500 प्रति एकड़ होती है।

2.डीजल/ईंधन की लागत में कमी: इस विधि से खेती करने से जुताई नहीं करने पर लगभग प्रति जुताई 5 लीटर/एकड़ की शुद्ध बचत होती है। इस प्रकार किसान प्रति एकड़ लगभग 15-18 लीटर डीजल बचा लेता है।

3.पानी की बचत: इस विधि से खेती करने पर किसान प्रति फसल 1-2 सिंचाई बचा लेता है। इसका मुख्य कारण खेतों में पड़े फसल अवशेष वाष्पोत्सर्जन से होने वाले नुकसान को रोकता है। साथ ही साथ सिंचाई की अवधि को भी कम कर सकते हैं। क्योंकि खेतों के निचले सतह पर नमी होने के कारण खेत जल्दी ही तर हो जाता है।

4.सिंचाई जल एवं विद्युत उपभोग में कमी: संरक्षित खेती में खेतों को 1-2 सिंचाई कम लगने तथा सिंचाई की अवधि भी कम लगने से अनुपातनुसार विद्युत उपभोग में कमी कर सकते हैं, एवं खेती में लागत को कम कर सकते हैं।

5.उर्वरक उपभोग में कमी: संरक्षित खेती अपनाने से उस खेत में फसल अवशेष का जमाव होता है जो समय गुजरने के पश्चात् अपघटित होकर पोषक तत्वों का स्रव करते हैं जिसे पौधे उपयोग करते हैं। इससे उर्वरक उपयोग को कम कर लागत में कमी कर सकते हैं।

6.रासायनिक कीटनाशकों एवं खरपतवारनाशियों का कम उपयोग: संरक्षित खेती का प्रयोग बार बार करने पर खेतों में मित्र कीटों की संख्या में वृद्धि होता है, जो फसल में लगने वाले कीटों का भक्षण कर कीटनाशकों की लागत को कम करते हैं। इसी तरह अवशेषों को मृदा सतह पर स्थिर रखने से सूक्ष्म जीवों की संख्या में वृद्धि होती है, जो खरपतवार के बीजों को नष्ट कर देते हैं। साथ ही साथ मृदा की सतह में, एक परत बनने के कारण सूर्य की किरण मृदा तक नहीं पहुंच पाती एवं खरपतवार की बीजों का अंकुरण प्रभावित होता है।

7.मृदा की भौतिक संरचना में सुधार: संरक्षित खेती अपनाने से मृदा की स्थूल घनत्व में कमी, रन्ध्रावकाश में वृद्धि तथा मृदा की जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है।

8.मृदा की रासायनिक स्थिति में सुधार: खेतों की जुताई न करने, फसलों की अवशेषों को मृदा में छोड़ने तथा फसल विविधिकरण में दलहनी फसलों के समावेश से रासायनिक संरचना में सुधार होती है।

9.मृदा की जैविक संरचना में सुधार: संरक्षित खेती अपनाने से मृदा में सूक्ष्म जीवों की संख्या में गुणात्मक वृद्धि होती है, जिससे मृदा अवयवों का विघटन तीव्र होता है, एवं फसलों के लिए उपलब्ध पोषक तत्वों में वृद्धि होती है।

10.वातावरणीय प्रदूषण में कमी: परम्परागत विधि से खेती करने पर पूर्व फसल की अवशेषों को जला दिया जाता है जिससे कार्बनडाईऑक्साइड एवं नाईट्रस आक्साइड का उत्सर्जन होता है, जो वातावरण तथा सामान्य जीव-जंतुओं के स्वास्थ्य हेतु हानिकारक है। अत: संरक्षित खेती अपनाकर पर्यावरणीय प्रदूषण से छुटकारा प्राप्त कर सकते हें।

11.उपज एवं गुणवत्ता में वृद्धि: संरक्षित खेती के सिद्धांतों के अनुरूप खेती करने पर फसल की लागत में कमी तथा उपज में लगभग 15-20% तक की वृद्धि होती है तथा गुणवत्ता में वृद्धि पायी गयी है।

12.समय की बचत: संरक्षित खेती अपनाने से एक फसल की कटाई तथा दूसरे फसल के बुआई के बीच की समय को बचा सकते हैं, क्योंकि इस विधि में हैप्पी सीड ड्रील का उपयोग कर उसी दिन या अगले दिन अगली फसल की बुआई कर सकते हैं। जिससे उस फसल को उचित समय पर कटाई कर संग्रहित किया जा सके।

मूंग में संरक्षित खेती

किस्म- विराट, हम-1, सम्राट, जनकल्याणी इत्यादि।

बुआई का समय- फरवरी की अंतिम सप्ताह से मार्च के अंतिम सप्ताह तक।

बुआई की विधि- शून्य जुताई सीड ड्रील या हैप्पी सीडर की सहायता से खड़ी फसल अवशेषों के साथ।

बीज दर - 25 किग्रा./हेक्टेयर

बीज उपचार- 3 ग्राम/किलो की दर से कार्बेन्डाजिम (वाविस्टीन) या थीरम से उपचार करें। मूंग के बीज को राइजोबियम से 510 ग्राम/किलो की दर से उपचारित करनी चाहिए।

सिंचाई-बुआई के तुरंत पश्चात हल्की सिंचाई करें तथा आवश्यकतानुसार 15 दिनों के अंतराल मे सिंचाई करें।

खरपतवार नियंत्रण: खरपतवार की समस्या के निदान हेतु निम्न प्रयोग करने चाहिए।

- बुवाई से पहले या बुवाई उपरांत प्रथम सिंचाई के पश्चात् 0-2 दिन के अंदर पेंडीमेथिलीन 30 प्रतिशत की 1.0 किग्रा/हे. या पेंडीमेथिलीन 38.7% की 678 ग्रा./हे. या पेंडीमेथिलीन . इमाजेथापायर 320 ग्रा./हे. को 500 लीटर पानी/हें. की दर से छिड़काव करें। तत्पश्चात् यदि खरपतवार पूर्णतया नियंत्रित न हो तो 20 दिन की अवस्था में निम्न खरपतवारनाशियों का प्रयोग करना चाहिए। ■ **इमाजथापायर** - 70-80 ग्रा./हें या
- **सोडियम एसीफ्लोरफेन+क्लोडिनोफाप** - 245 ग्रा./हें. या
- **इमाजेथापायर+ इमाजामाक्स** - 70 ग्रा./हें.

उपरोक्त में से किसी भी एक खरपतवारनाशी का उपयोग 375 लीटर पानी/हे. के साथ उपयोग कर सकते हैं। जिससे खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण होता है।

कीट प्रबंधन- सामान्यत: ग्रीष्मकालीन मूंग की फसल में कोई विशेष कीट का प्रभाव नहीं होता है तो (यदि प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग किया जाय) फिर भी यदि कोई कीट संक्रमित करता है, तो उपयुक्त कीटनाशी का उपयोग किया जा सकता है।

रोग प्रबंधन: सामान्यत: उपचारित एवं प्रतिरोधी किस्म के बीजों की बुआई करने पर किसी भी प्रकार के रोगों का संक्रमण नहीं होता हैं

कटाई: मूंग की फसल यदि 75-80% तक परिपक्व हो गया है, तो फसल की कटाई की जा सकती है। पूर्ण पकने तक फसल को रोके रखने से फली चटक जाती है, एवं उपज में नुकसान होता है।

उपज: उपज मुख्य रूप से फसल प्रबंधन पर अधिकतर निर्भर करती है यदि उपरोक्त बताई विधि से खेती करने पर ग्रीष्मकालीन मूंग की उपज 1.2-1.5 टन/हें. तक प्राप्त कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मणिपुर

भारतीय किसान दशा और दिशा

योगेश खोखर (पीएचडी शोधार्थी)
पादप प्रजनन विभाग केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय इम्फाल (मणिपुर)
डॉ. आलोक जाखड़ (प्रोफेसर) एजुकेशन विभाग महादेव यूनिवर्सिटी पिंडवारा सिरोही (राजस्थान)

देश में आजादी के बाद किसान की संख्या में लगातार गिरावट आ रही है। आजादी के वक्त देश में ज्यादातर आबादी खेतों पर निर्भर थी ऐसा अनुमान है कि उस वक्त 80 प्रतिशत से ज्यादा आबादी आजीविका खेतों से चलती थी उसे समय देश की जीडीपी में कृषि का योगदान आधा हुआ करता था आज हमारे देश को आजाद हुए वर्ष बीत चुके है। किसान की आर्थिक दशा में कोई सुधार नहीं हुआ है।

आजादी के बाद हमारे देश के अंतर्गत काफी क्षेत्र में विकास देखने को मिला परंतु कृषि एक ऐसा क्षेत्र जिसके अंतर्गत आज तक इस दौड़ से पीछे है। पिछले कुछ दशकों के आंकड़ों को उठाकर देखा जाए तो किसान की आय में 21 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। जबकि एक सरकारी कर्मचारी की आय में 170 गुना और शिक्षक की आय में 200 गुना तक बढ़ोतरी हुई है। हम सब का बचपन लगभग गांव के अंतर्गत बीता है। इसलिए भारत को गांव का देश कहा जाता है। जहां शहरों से दूर होकर एक दूसरी दुनिया गांव है। और गांव का मुख्य व्यवसाय कृषि है। मतलब यह कह सकते की हमारे गांव भारतीय कृषि का मुख्य आधार है। आज भारत के अंतर्गत आदि से ज्यादा जनसंख्या कृषि पर प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से निर्भर है। इसके विकास के बिना देश का विकास बिल्कुल भी संभव नहीं है। इस बदलते वक्त में किसानों के खेतों को स्मार्ट नहीं बनाया जा रहा है। उनका समय के अनुसार फसल का सही मूल्य नहीं मिल पा रहा है इस वजह से उनका जीवन खतरे में है। आज किसान अपने आप को किसान कहने से हिचकता है। चाहे धूप हो ठंड हो या बारिश हो किसान अपने खेतों में निरंतर काम करता है। आज के समय में डॉक्टर टीचर इंजीनियर है। तो वह गर्व के साथ कहता है। परंतु किसान अपने आप को किसान कहने से हिचकता है। आखिर क्यों आज आज की नई पीढ़ी अनाज खाती है। लेकिन कोई

उगना नहीं चाहती नई पीढ़ी के लोग आज भी अपने संस्कारों को भूलकर शहरों में मिल जाते हैं। यह तक पता नहीं होता की आटा कैसे बनता है अगर किसान का बेटा पढ़ लिखकर शहर चला गया तो गांव केवल घूमने के लिए आता है। जिस के कारण की शहर की आबादी बढ़ रही है। और किसान की कहानी इतिहास के पन्नों में सिमिट् रह गए है। बात यहीं खत्म नहीं होती क्या सभी किसान बन सकते है। किसान बनना जरूरी नहीं है। लेकिन किसान की भावनाओं का समझना जरूरी है। उनकी आर्थिक हालत में सुधार करना चाहिए हम सभी किसानों के प्रति समाज में एक नजरिया विक्षित करना चाहिए जिसे किसान कहे की 'मैं किसान हूं' आंखें समान से उठाकर अपने आने वाली नस्लों को यह बताना चाहिए कि उनके बदौलत हम सब खाना खाते हैं।

किसान की आर्थिक दशा सुधार हेतु सुझाव, पिछले कुछ वर्षों से कृषि विकास में कमी आयी है इस के लिए आवश्यक समर्थक पद्तियो जैसे की अनुसधान, विस्तार इनपुट आपूर्ति आदी लाभपर्द विपणन में सुधार की आवश्यक है वर्तमान के अंदर सरकार की नीतियां जरूर बनती है परन्तु वह धरातल पर सही काम नहीं हो पाता जिसके कारण किसानो को लाभ प्राप्त नहि होता, फसल बीमा योजना सिंचाई योजना मृदा हेल्थ कार्ड योजना , परम्परागत विकास योजना, जैविक खेती योजना सभी योजनावो स्वतंत्रत भारत में स्वत्तन्त्रता से पूर्व और पश्च्यात भारतीय किसानों की आय में 19 से 20 का अंत नजर आयता है समृद् किसानों की गिनती आज अंगुलियों पर की जा सकती है किसानों की ऋण माफ़ करने की व्यवस्ता को मजबूत व उद्धार बनाने की जरूरत है भारत में किसान और खेती भारतीय अर्थवस्था की रिड ऐसा बनने के लिए किसान को पैदावार का उचित मूल मिलना, कम ब्याज पर ऋण मुहैया करवाना जरूरी है साथ सिंचाई व्यवस्ता कम किमत पर बीज व उर्वरक उपलब्ध हो, छोटे किसान जिन की भारतीय कृषि में योगदान है उन की उत्पादकता में सुधार लाने के लिए अनुकूल नई तकनिकी अपनाना जरूरी है बाजार के लिहाज से सरकार की और से इ ङ्क नाम , यानी ऑनलाइन राष्ट्रीय कृषि बाजार की स्थापना की जानी चाहिए, लेकिन योजनाओ का धरातल पर सही तरीके से लाभ के लिए ध्यान देना जरूरी है

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

जल संकट एवं मानव जीवन

आयशा बी (शोध छात्रा)
डॉ. कविता दुआ (सह-प्राध्यापक)
संसाधन प्रबंधन एवं उपभोक्ता विज्ञान, विभाग, इंद्रा चक्रवर्ती सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, (हरियाणा)

पानी एक मूल जीवन संसाधन है जो हमारे जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। हमारे शरीर का 60% से अधिक हिस्सा पानी से बना होता है, इसलिए स्वच्छ पानी की आवश्यकता अच्छे स्वास्थ्य और समृद्धि के लिए अधिक जरूरी है। पानी का उपयोग हमारे दैनिक जीवन में हर क्षेत्र में होता है। पानी के बिना वृक्ष, पौधे, और जलवायु नहीं बन सकतीं, जिनकी हमारे परिसर में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका है।

विभिन्न क्षेत्रों में जल का उपयोग हमारी दैनिक जीवन की सभी गतिविधियों में शामिल होता है, जैसे कृषि, औद्योगिक उत्पादन, जल संवर्धन, और वातावरण संरक्षण। इसलिए, पानी का सही उपयोग करना और इसे संरक्षित रखना हमारे लिए आवश्यक है ताकि हम स्वास्थ्यपूर्ण और समृद्ध जीवन जी सकें।

लेकिन आजकल पानी प्रदूषण एक गंभीर समस्या बन चुका है, जो हमारे पानी के स्रोतों को खतरे में डाल रहा है और हमारे समुदायों के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। जल प्रदूषण के कारण कई बुरे प्रभाव हो सकते हैं। पहले तो, यह सामान्यतः जल स्रोतों के पारिस्थितिकीय बल को कमजोर कर देता है। जल स्रोतों में जैविक और अजैविक पदार्थों के बारे में संतुलित रहना आवश्यक होता है, लेकिन जब प्रदूषण होता है तो यह संतुलन टूट जाता है और पानी की गुणवत्ता में भारी कमी आती है। साथ ही पानी अगर प्रदूषित है तो मानव स्वास्थ्य को खतरा होता है। प्रदूषित पानी में कई हानिकारक रासायनिक पदार्थ और माइक्रोबायोलॉजिकल जीवाणु हो सकते हैं, जिनसे अनेकों बीमारियाँ होने का खतरा बढ़ जाता है। जल प्रदूषण के अधिक आम प्रभाव में डायरिया, कॉलेरा, टायफाइड, जीवाणु अस्थिरता, और कई अन्य जलीय बीमारियां शामिल हो सकती हैं। आजकल यह भी देखा जा रहा है कि जल प्रदूषण से साल्ट की मात्रा बढ़ रही है। यह बारिश के पानी में तत्परता को बढ़ाता है और प्राकृतिक जल स्रोतों के नाश का कारण बन सकता है।

इसके विपरीत, प्रदूषित पानी का उपयोग खेती और औद्योगिक उद्योगों में भी हानिकारक प्रभाव डाल सकता है। इससे कृषि उत्पादन में कमी होती है, और जीवाणुओं के प्रसारण का खतरा बढ़ जाता है। औद्योगिक क्षेत्र में जल प्रदूषण स्थायी और अवांछित पर्यावरणीय बदलाव का कारण बन सकता है, जो वायरल इंफेक्शन जैसी अन्य समस्याएं पैदा कर सकता है। इसलिए, जल प्रदूषण को नियंत्रित करना हमारे समुदायों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। हमें पानी के स्रोतों को संरक्षित रखना, जल प्रदूषण के कारणों को कम करना, और स्वच्छ पानी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सही तकनीकी उपायों का उपयोग करना चाहिए। साथ ही सार्वजनिक जागरूकता और संज्ञानात्मक कार्यक्रमों को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। और नए प्रौद्योगिकी और वैज्ञानिक उपायों का अध्ययन करने के लिए अधिक संस्थानों और शोधकर्ताओं को समर्थन प्रदान किया जाना चाहिए। इससे हम न केवल स्वास्थ्यपूर्ण पानी की आपूर्ति सुनिश्चित करेंगे, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देंगे।

हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय में डिजिटल लैब स्थापित होगी

हरियाणा। हरियाणा में अनुसूचित जाति के किसानों के सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान तथा उनकी क्षमता निर्माण को मजबूती प्रदान करने के लिए हिसार स्थित चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय में एक डिजिटल लैब की स्थापना की जाएगी। कुलपति प्रो. बीआर काम्बोज ने जानकारी देते हुए बताया कि हरियाणा सरकार की राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के तहत इसके लिए 60 लाख रुपए की अनुदान राशि प्रदान की गई है। इस डिजिटल लैब में किसानों को कृषि क्षेत्र से संबंधित नवीनतम तकनीकों की जानकारी देने के लिए प्रशिक्षण दिया जाएगा। डिजिटल लैब में मौसम, अनुदान संबंधी और फसलों में होने वाले नुकसान की जानकारी के साथ-साथ फसलों में कीट आदि की जानकारी किसानों को दी जाएगी।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

कद्दूवर्गीय सब्जियों के प्रमुख कीट तथा उनके नियंत्रण के उपाय

डॉ. मानवेन्द्र सिंह (सहायक प्रोफेसर) कृषि विज्ञान एमवीएन विश्वविद्यालय पलवल (हरियाणा)

डॉ. जी.सी यादव (प्रोफेसर) कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विद्यालय, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

लाल पंपकिन बीटल

कद् वर्गीय सब्जियों में एक कीट जो मुख्य रूप से कद्दू वर्गीय फसल पर आक्रमण करता है वह कीट है लाल पंपकिन बिटल यह लाल रंग का किस पौधे के पत्तियों को शुरुआती अवस्था में पत्तियों को खाकर नष्ट कर देता है जिससे फसल की बढ़वार बिल्कुल रुक जाती है ।

लाल पंपकिन बिटल लक्षण व जीवनकाल

- लाल पंपकिन बिटल के मादा पीले रंग के होते हैं व 5 से 15 दिनों के बाद यह हेच हैचिंग अंडा देते हैं क्रीमी सफेद रंग का युवा जिसे लारवा कहते हैं 14 से 25 दिनों के पश्चात युवा अवस्था में यह पहुंच जाता है और 7 से 20 दिनों तक इसी अवस्था में होता है जब तक कि वयस्क अवस्था में ना पहुंच जाए
- मादाएं 150 से 300 अंडे देती हैं वह 10 महीने तक जीवित रहते हैं और उसके वयस्क कीट पत्तियों को खाकर नष्ट कर करते हैं।

रोकथाम

जैविक नियंत्रण

- 4 लीटर पानी में आधा कप लकड़ी की राख और आधा कब चुना मिलाएं और कुछ घंटों के लिए छोड़ दें थे खेत में छिड़काव से पहले कुछ संक्रमित फसल पर परीक्षण कर स्प्रे करें
- वयस्क बीटल को आकर्षित कर मारने के लिए ट्रैप् फसलों का उपयोग भी करें

रासायनिक उपचार

- क्लोर साइपर या प्रोफेनोफॉस 2ml प्रति लीटर पानी के साथ इस्तेमाल करें
- डेल्टामथ्रीन 250ml प्रति एकड़
- फसल उगने के बाद 7 किलो कार्बोफ्युरान 3जी के कण 3-4 से.मी. की गहराई पर मिट्टी में पौधों की कतारों के पास देकर पिलाई करनी चाहिए।

निवारक उपाय

- तेजी से बढ़ने वाले किसानों का चयन करें वह ट्रैप फसलों को मुख्य फसलों के साथ समावेश करें।
- गर्मी के दिनों में उक्त खेतों में गहरी जुताई करें।

फल मक्खी

फल मक्खी मादा कीट फल में अंदर अंडा देती है

बाद में लारवा धीरे-धीरे यह फल में सुरंग बनाकर गूदे को खाना प्रारंभ कर देते हैं जिससे फल सड़ने लगता है वह विकृत होकर मुड़ने लगता है।

रोकथाम

- खेत के निराई प्यूपा का को नष्ट कर दें
- चारों तरफ मक्के का फसल लगाना चाहिए क्योंकि मक्खी ऊंचा स्थान पर बैठना पसंद करता है जिस पर मेलाथियान 50 EC 50ml मात्रा को आधा केजी गुड एवं 50 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें
- कार्बेरील घुलनशील चूर्ण 50% 1kg प्रति हेक्टेयर फसल पर स्प्रे करें
- फल मक्खी नर को आकर्षित करने के लिए मिथाइल यूजिनॉल पास का प्रयोग करें

सफेद मक्खी

- यह कीट सफेद पंख व पीले शरीर वाली होती है यह मक्खी एक मिली मीटर से भी छोटी होती है द्य
- सफेद मक्खी थ्रिप्स 90% से ज्यादा फसल में वायरस फैलाने में इस कीट का अहम भूमिका होता है। यह मक्खी पौधे के पति पर बैठकर रस चूस लेती है वह लार वहीं छोड़ देने से बीमारी का प्रकोप बढ़ जाता है

रोकथाम

- कीट को आकर्षित करने के लिए पीले प्रपंच का प्रयोग व चिपचिपी टैग लगाएं परभक्षी पक्षियों को आकर्षित करने के लिए T आकार का बांस के डंडे 15 नग प्रति एकड़ लगाएं
- इमिडाक्लोप्रिड 70 WS 10 ग्राम प्रति Kg बीज के दर से उपचार करें
- ट्राईजोपास 40 EC का प्रयोग करें ध्यान रखें एक ही प्रकार के रसायन कीटनाशक का प्रयोग ना करें

माइट बरुथी

यह कीट नग्न आंखों से देख पाना संभव नहीं है यह एक जगह पर झुंड में अधिक संख्या में होते हैं और ग्रीष्म ऋतु में खीरा जैसी फसलों में इसका अधिक प्रकोप होता है इस के प्रकोप के कारण पौधे अपना भोजन नहीं बना पाते और बड़वार रुक जाता है।

रोकथाम

- पावर छिड़काव मशीन द्वारा पानी का छिड़काव करने से फसल पर से मकड़ी अलग हो जाती हैं, जिससे प्रकोप में कमी आती है।
- मकड़ीनाशक जैसे स्पाइरोमेसीफेन9 एस सी 0.8 मिलीलीटर प्रति लीटर या डाइकोफाल 18.5 ई सी 5 मिलीलीटर प्रति लीटर या फेनप्रोथ्रिन 30 ई सी 0.75 ग्राम प्रति लीटर की दर से 10 से 15 दिनों के अंतराल पर छिडकाव करें।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

मूंग की खेती में सिंचाई एवं उर्वरक प्रबंधन का महत्व

डॉ. सुशील कुमार सिंह, डॉ. मुकेश जाट
डॉ. मनोज कुमार शर्मा एवं एम.डी. परिहार
मृदा विभाग, कृषि महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार, (हरियाणा)

मूंग सबसे महत्वपूर्ण खाद्य फलीदार फसलों में से एक है, जो दुनिया भर में 6 मिलियन हेक्टेयर से अधिक (वैश्विक दलहन क्षेत्र का लगभग 8.5%) पर उगाई जाती है और एशिया के अधिकांश घरों में इसका सेवन किया जाता है।

मूंग खरीफ एव जायद की एक प्रमुख दलहनी फसल है। जिसका वनस्पतिक नाम विग्ना रेडियेटा है, यह लेग्यूमिनेसी कुल का पौधा हैं तथा इसका जन्म स्थान भारत है। इसका उपयोग मुख्य रूप से दाल के लिए किया जाता है इसमें (दाने में) लगभग 24 से 26 प्रतिशत प्रोटीन, 56 से 60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, एवं 1.3 प्रतिशत वसा होता है ।

मूंग की फसल अपेक्षाकृत सूखा-सहिष्णु, कम लागत वाली फसल और कम अवधि विकास चक्र (आज काफी अच्छी गुणवत्ता वाली मूंग की प्रजाति का विकास किए गए हैं जो लगभग 60 दिन से 85 दिन में पक जाती है) की अपनी विशेषताओं के कारण, मूंग की खेती कई एशियाई देशों (मुख्य रूप से चीन, भारत, बांग्लादेश, और पाकिस्तान) में व्यापक रूप से की जाती है। दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ-साथ दक्षिणी यूरोप के शुष्क क्षेत्रों में भी की जाती है और भारत में राजस्थान राज्य मूंग का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य है, जो भारत के कुल उत्पादन का लगभग 80% से अधिक उत्पादन करता है। अन्य मुख्य उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक और हरयाणा है।

मूंग की खेती द्वारा जायद सीजन में सरसों व आलू की कटाई के बाद करने पर अतिरिक्त लाभ के लिए इसकी खेती की जाती है और खरीफ सीज़न में इसकी खेती की बुवाई जुलाई के प्रथम सप्ताह से जुलाई के अंतिम सप्ताह तक कर देनी चाहिए, मगर जायद में इसकी बुवाई 30 मार्च तक कर लेनी चाहिए। जायद सीज़न में 30 मार्च के बाद बुवाई करने पर उपज में कमी आती है।

मूंग के पौधों की फलियों की तुड़ाई के बाद फसल के अवशेषों को मिट्टी में मिला देने पर यह हरी खाद की पूर्ति भी करती है जिससे मिट्टी की भौतिक, रासायनिक व पानी ग्रहण करने की क्षमता में सुधार होता है। साथ ही मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा भी बढ़ती है। जायद सीजन में इस फसल में यदि उर्वरक एवं सिंचाई का उचित प्रबंध किया जाए तो जायद सीजन में लगभग 12 से 15 कुंतल

उपज को लिया जा सकता है एवं खरीफ सीज़न में लगभग 15 से 18 कुंतल की उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त की जा सकती है। मूंग की फसल में उपज कम होने के मुख्य कारणों में से प्रमुख कारण है मृदा में नमी का काम होना मूंग की फसल में फली आते समय एवं उचित मात्रा में खाद एवं उर्वरक का प्रयोग नहीं करना है। यदि फली बनते समय नमी का उचित प्रबंध किया जाए एवं संतुलित रूप से खाद एवं उर्वरक प्रबंधन किया जाए तो मूंग की उपज को काफी हद तक बढ़ाया जा सकता है।

(टिप्पणी-जायद फसलें ग्रीष्म ऋतु की फसलें हैं। वे रबी और ख़रीफ़ फ़सलों के बीच थोड़े समय के लिए उगते हैं, मुख्यतः मार्च से जून तक। ये फसलें मुख्य रूप से गर्मी के मौसम में उगाई जाती हैं, जिसे जायद फसल का मौसम कहा जाता है।)

मूंग की फसल में सिंचाई प्रबंधन

जायद सीजन मूंग की खेती संचित क्षेत्र में ही करनी चाहिए एवं जायद ऋतु में मूंग की खेती वहीं संभव है जहां सिंचाई की पर्याप्त सुविधा मौजूद हो। बुआई से पहले सिंचाई करके पर्याप्त नमी सुनिश्चित की जानी चाहिए। कम नमी में बुवाई करने से अंकुरण प्रभावित होता है। साथ ही पहली सिंचाई बुवाई से 22 दिन बात करें तथा इसके बाद की सिंचाईयां 10 से 12 दिन के अंतराल पर करनी चाहिए। मिट्टी की जल ग्रहण क्षमता और मौसम की परिस्थितियों के अनुसार सामन्यतः जायद में मूंग में 3-4 सिंचाई की आवश्यकता होती। यह भी जरूरी है कि फलियों में दाना पडने के समय सावधानी पूर्वक सिंचाई का प्रबन्ध किया जाये क्योंकि पानी की अधिक मात्रा फसलों के पकने की अवस्था को विलम्बित कर सकती है । खरीफ सीजन की फसल मूंग में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। फिर भी यदि इस मौसम में वर्षा के बीच अधिक अंतराल होने पर नमी में कमी होने पर एक सिंचाई फली बनते समय सिंचाई की अति आवश्यकता होती है। साथ ही फसल पकने से 15 दिन पूर्व सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। यदि वर्षा के मौसम में अधिक वर्षा होने पर अथवा खेत में पानी का भराव होने पर पानी को खेत से निकलने की सुविधा होनी चाहिए जिससे कि मूंग के पौधों में वायु का संचार बना रहे। क्योंकि मूंग जलभराव के प्रति संवेदनशील होती है। अतः तुलनात्मक रूप से ढालयुक्त और लेजर लेवल प्रक्षेत्र को ही मूंग की फसल के लिये प्राथमिकता दी जानी चाहिए। प्रक्षेत्र में सिंचाई के उपरान्त तुरन्त ही जल का निकास ढ़ाल के झुकाव की तरफ कर देना चाहिये।

मूंग की फसल में खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

राइजोटिका से उपचार करना

मूंग की फसल में राइजोटिका से बुवाई के समय बीज को उपचारित करना चाहिए जो कि (राइजोटिका) वायुमंडलीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण प्राकृतिक प्रक्रियाओं के माध्यम से नाइट्रोजन पोषक तत्व जोड़ते हैं। और लगभग 38 तो 40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्रदान करता है। राइजोटिका का 50 मि.ली. का पैकेट प्रति 10 किलोग्राम बीज के लिए प्रयोग करना चाहिए एवं 50 ग्राम राइजोटिका को 250 मि.ली. पानी में घोलकर बीज पर डालते हैं। यदि किसी रसायन से बीज को उपचार करना हो तो 48 से 72 घंटे पहले करना चाहिए । बीज को अच्छी प्रकार मिलाएं ताकि सभी बीजों पर राइजोटिका का लेप चिपक जाए, उपचारित बीजों को 4-5 घंटे तक छाया में फैला दें और सूखने दें। बीजोपचार करते समय ट्राइकोडर्मा के साथ अन्य कीटनाशी या कवकनाशी का प्रयोग नहीं करना चाहिए और उपचारित बीज को पशुओं एवं मनुष्यों के सम्पर्क से दूर रखना चाहिए।

उर्वरक प्रबंधन

मूंग की फसल को कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। मूंग की फसल के लिए 20 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फास्फोरस एवं 20 किलोग्राम पोटाश की प्रति हेक्टेयर आवश्यकता होती है। साथ ही नाइट्रोजन को यूरिया, फास्फोरस को सिंगल सुपर फास्फेट एवं पोटाश को म्यूरेट ऑफ पोटाश के रूप में डाला जा सकता है।

यदि मृदा जांच करने पर मृदा में उच्च पोटाश आता है तो मृदा में पोटाश नहीं डालना चाहिए। यदि मृदा जांच करने पर जिंक की कमी पाई जाए तो 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर देनी चाहिए और नाइट्रोजन, फॉस्फोरस ,पोटाश उर्वरक की पूरी मात्रा बुवाई के समय डाला जाता है, साथ ही 5 से 10 सेंटीमीटर गहरी कुंड में उर्वरक दिया जाता है। साथ ही जिंक सल्फेट को अंतिम जुताई के समय खेत में बिखेर कर डाला जाता है। यदि मृदा जांच करने पर गंधक की कमी पाई जाए तो 20 किलोग्राम गंधक प्रति हेक्टेयर देनी चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हिमाचल प्रदेश

बुरांस के सुंदर फूल और इसके लाभ

डॉ. सविता, डॉ. मोनिका (सहायक प्राध्यापक) डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नेरी (हिमाचल प्रदेश)

उत्तराखंड और हिमाचल की विशाल पहाड़ियों में कुछ बेहतरीन रहस्य हैं जिन्हें प्राकृतिक रूप से माँ प्रकृति ने आशीर्वाद के रूप में संरक्षित किया है! ऐसा ही एक सदियों पुराना चमत्कारी पेड़ है बुरास का पेड़ जिसे बुरांश के पेड़ के नाम से भी जाना जाता है, जो अपने जादुई फूल के लिए जाना जाता है जिसका उपयोग सदियों से अपने अनगिनत स्वास्थ्य लाभों और अपने आकर्षक स्वाद के लिए किया जाता रहा है। यहां बताया गया है कि यह सदियों पुराना गुप्त फूल स्वास्थ्य के लिए वरदान क्यों है और इस छोटे से फूल का उपयोग कैसे किया जा सकता है।

कई वर्षों से हिमालय में उगने वाली जड़ी-बूटीयों का प्रयोग मानव अपने खाश-पान और औषधियों के रूप में करता आ रहा है। हिमाचल हिमालय की गोद में बसा होने के कारण इन सभी दिव्य औषधीय पौधों से भरपूर है। हिमाचल का 66.52 प्रतिशत भूमि वन्य भूमि है और इन वनों में बहुत से औषधीय गुणों वाले पौधे पाए जाते हैं। उन्ही दिव्य पौधों में से एक है बुरांस जो कि हिमालय क्षेत्र में 1500 से 3600 की मध्यम ऊंचाई पर पाया जाने वाला वृक्ष है। इस वृक्ष की पत्तियां देखने में मोटी और फूल घंटी की तरह होते हैं।

परिचय

बुरांस के पेड़ को रोडोडेंड्रोन के नाम से भी जाना जाता है, यह शब्द ग्रीक शब्द रोडोड से लिया गया है, जिसका अर्थ है गुलाबी लाल, और डेंड्रोन का अर्थ है पेड़। इस पेड़ को यह नाम इसके आकर्षक लाल गुलाबी फूलों के कारण मिला है जिन्हें प्रकृति की अच्छाइयों का आशीर्वाद प्राप्त है। बुरांश के फूल को इसके चमकीले लाल रंग के कारण पहाड़ों के क्रिमसन फूल के रूप में भी परिभाषित किया जाता है, जिसका उपयोग उनके शक्तिशाली औषधीय और चिकित्सीय गुणों के साथ-साथ एक लोकप्रिय स्क्वैश और जूस के रूप में भी किया जाता है।

बुरांस को पहाड़ी बोली में "बराह" के नाम से जाना जाता है हालांकि इसका वैज्ञानिक नाम रहोडोडेंड्रन (Rhododendran) है। इसके पेड़ों पर मार्च-अप्रैल के महीने में लाल रंग के फूल खिलते हैं। यह पौधा अधिकांश ठंडे जहां तापमान 120 डिग्री सेल्सियस रहता है और ढलान वाली जगहों में उगता है। इसके लिए अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती है। बुरांस भूटान, नेपाल, म्यंनमार, भारत, श्रीलंका, पाकिस्तान, थाईलैंड और चीन में पाया जाता है। हिमाचल में यह फूल भरपूर मात्रा में पाया जाता है।

शिमला, कांगड़ा, सोलन, धर्मशाला और किन्नौर में इस फूल का प्रयोग अचार, मुरब्बा और जूस के रूप में किया जाता है। हिमाचल में शिमला के निचले क्षेत्र समरहिल, जतोग और मिलिट्री एरिया में यह फूल देखा जा सकता है। इसके अलावा किन्नौर, धर्मशाला, और कांगड़ा में भी पाया जाता है। यह एक ऐसा पौधा है जो बिना मेहनत के आराम से प्राकृतिक रूप में उपलब्ध है। धर्मशाला में चिन्मय संत तपोवन में इस फूल की नर्सरी है और भारत के अनेक भागों में इसकी सप्लाई की जाती है। भारत में अन्य भागों में भी यह सूल उगता है लेकिन हिमाचल के बुरांस की सुंदरता, अधिक समय तक टिकना और जिस गति से यह हिमाचल में बढता है कहीं और नहीं देखा गया है।

बुरांस की लगभग 300 प्रजातियां पाई जाती हैं। वैसे तो बुरांस के फूल लाल और पिंक रंग के होते हैं लेकिन हिमाचल में कई स्थानों पर सफेद बुरांस भी देखा जा सकता है। सफेद

बुरांस बर्फीले क्षेत्रों में पाया जाता है और ओक वृक्ष के नीचे उगता है। वैज्ञानिक तरीके से सिद्ध किया गया है कि ओक वृक्ष की छाया में यह वृक्ष बहुत अच्छी तरह उगता है। शिमला के लोग गर्मियों के लिए इस फूल का अचार बनाते हैं जिसे स्थानीय लोग ही नहीं बल्कि विदेशी भी बहुत पसंद करते हैं। यह अचार शुद्ध, प्राकृतिक सुगंध और कम चीनी होने के कारण रोगियों के लिए भी लाभकारी है।

बुरांस की सुंदरता और महत्व

बुरांश का फूल प्राकृतिक रूप से स्वास्थ्यवर्धक पोषक तत्वों से भरपूर होता है और आमतौर पर इसका सेवन जूस या स्क्वैश के रूप में किया जाता है।

यह रस सूजन, लीवर की बीमारियों को ठीक करने, गठिया के दर्द, ब्रोंकाइटिस और ग्राउट को कम करने के लिए बहुत अच्छा है। इसके अलावा, इस फूल का रस कई प्रकार के कैंसर के विकास को रोकने में भी सक्षम है और ऐसा क्वेरसेटिन और रुटिन फ्लेवोनोइड की उपस्थिति के कारण होता है। वास्तव में, बुरांश फूल का स्क्वैश और रस इंसुलिन असंतुलन को ठीक करने और त्वचा, हृदय और यकृत के मुद्दों को ठीक करने के लिए भी जाना जाता है।

बुरांस नेपाल का राष्ट्रीय फूल है और नेपाली में इसे लाल गुरांस कहते हैं। इसके अलावा उतराखण्ड और नागालैण्ड का राज्य फूल है जबकि पिंक बुरांस को हिमाचल के राज्य फूल का दर्जा दिया गया है। मुगल इतिहास में कहा जाता है कि शाहजहां की पत्नी मुमताज महल को बुरांस का फूल बहुत पसंद था। इसलिए रानी के लिए हर शुक्रवार शिमला से बुरांस के फूलों का गुच्छा मंगवाया जाता था। बहुत से कवियों ने बुरांस के फूलों का वर्णन अपनी कविताओं के माध्यम से किया है।

बुरांश का उपयोग सदियों से कई आयुर्वेदिक और होम्योपैथिक दवाओं में एक सक्रिय घटक के रूप में किया जाता रहा है। लेकिन इस चमकीले रंग के फूल को सुर्खियों में लाने वाली बात इसके मजबूत एंटीवायरल गुण थे, जिसका उपयोग SARS-CoV 2 के लिए वैक्सीन के निर्माण में किया गया था।

हिमालय में दुर्लभ और लुप्तप्राय पौधों पर एक अध्ययन के दौरान, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी)-मंडी के जीवविज्ञानियों के एक समूह ने पाया कि इस हिमालयी फूल वाले पेड़ में एंटीवायरल गुण थे जिनका उपयोग संक्रमित कोशिकाओं के इलाज के लिए शक्तिशाली उपचार के रूप में किया जा सकता है।

SARS-CoV-2। हालाँकि, इन फूलों का उपयोग करके उपचार की लाइन स्थापित करने के लिए बहुत सारे शोध की आवश्यकता है।

जब यह फूल खिलता है तो मानो पहाड़ जी उठते हैं।देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने अपने स्मरणों में कहा था

"पहाड़ियों पर गुलाब की तरह बड़े बड़े बुरांस के फूलों से रंजित लाल स्थल दूर से ही दिख रहे थे। वृक्ष फलों से लदे थे और असंख्य पत्ते अपने नए कोमल और हरे परिधान में अनेक वृक्षों की आवरणहीनता को दूर करने को बस निकालना ही चाहते थे।"

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि 'अज्ञेय' जी ने अपनी कविता में अपनी प्रियतमा को याद करते हुए लिखा था

"याद है क्या, ओट में बुरूंश की प्रथम बार। धन मेरे मैंने जब ओंठ तेरा चूमा था।"

औषधीय गुण

बुरांस का फूल में बहुत से औषधीय गुण पाए जाते हैं। यह फूल दिल की बीमारी, डायबीटीज, कैसर और लिवर के लिए बहुत लाभकारी है। बुरांस के फूल में मीथेनाल होता है जो कि डायबीटिज के रोगियों के लिए फायदेमंद है। यह शरीर में ब्लड सर्कुलेशन को नियमित रखता है और हायपरटेंशन और डायरिया में भी लाभकारी है।

बुरांस में विटामिन ए, बी-1, बी-2, सी, ई और के पाई जाती हैं जो की वजन बढने नहीं देते और कोलेस्ट्रॉल कंट्रोल रखता है। Quercetin और Rutin नामक पिंगमेंट पाए जाने के कारण बुरांस अचानक से होने वाले हार्ट अटैक के खतरे को कम कर देता है। इसका शर्बत दिमाग को ठंडक देता है और एक अच्छा एंटीऑक्सीडेंट होने के कारण त्वचा रोगों से बचाता है। बराह के फूलों की चटनी बहुत ही स्वादिष्ट होती है जो कि लू और नकसीर से बचने का अचूक नुस्खा है। इसकी पंखुड़ियां लोग सुखाकर रख लेते हैं और सालभर इसका लुत्फ़ उठाते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हिमाचल प्रदेश

सब्जियों में ग्राफ्टिंग की तकनीकें

शिवाली धीमान (पी.एच.डी.) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

अंजली कुमारी (एम.एस.सी) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौनी, सोलन (हि.प्र.)

डॉ. बलबीर सिंह डोगरा (प्रधान वैज्ञानिक) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी वि.वि., नौनी, सोलन (हि.प्र.)

अनुज सोही (पी.एच.डी.) डॉ. वाईएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

प्रतिभा डोगरा (एम.एस.सी) डॉ. वाइ.एस. परमार औधानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौनी, सोलन (हि. प्र.)

ग्राफ्टिंग एक ऐसी तकनीक है जिसमें दो जीवित पौधों के हिस्सों को जोड़कर एक एकल, व्यवहार्य पौधा तैयार किया जाता है। ऊपरी भाग, जो फल पैदा करता है, स्कोन कहलाता है, जबकि निचला जड़ भाग रूटस्टॉक के रूप में जाना जाता है। रूटस्टॉक शक्ति और रोग प्रतिरोधक क्षमता में योगदान देता है, जबकि स्कोन को उसके फल की गुणवत्ता के लिए चुना जाता है। इस प्रसार विधि का उपयोग सदियों से फलों की फसलों और लकड़ी के पौधों में किया जाता रहा है। हाल के दशकों में, इसने वाणिज्यिक सब्जी उद्योग में लोकप्रियता हासिल की है, विशेष रूप से कद्दूवर्गीय सब्जियों (जैसे खरबूजे और स्क्वैश) और सोलानेसियस परिवार के सदस्यों (जैसे बैंगन और टमाटर) के लिए। हालाँकि, इसकी श्रम-गहन प्रकृति के कारण, ग्राफ्टिंग का अभ्यास मुख्य रूप से विशिष्ट मामलों में किया जाता है।

ग्राफ्टेड सब्जियों की खेती का उद्देश्य

सीमाएं: कई लाभकारी अभिव्यक्तियों के अलावा, ग्राफ्टिंग तकनीक से जुड़ी कुछ सीमाएँ भी हैं जैसे -

1. रूटस्टॉक्स के लिए अतिरिक्त बीज
2. अनुभवी श्रमिक की आवश्यकता
3. स्कोन/रूटस्टॉक संयोजनों का बुद्धिमानीपूर्ण चयन
4. फसल मौसम के लिए विभिन्न संयोजन
5. फसल पद्धतियों के लिए विभिन्न संयोजन
6. पौध की ऊंची कीमत
7. बीज जनित रोगों का संक्रमण बढ़ना
8. अत्यधिक वानस्पतिक वृद्धि
9. फलों की तुड़ाई में देरी हो सकती है
10. निम्न फल गुणवत्ता (स्वाद, रंग और चीनी सामग्री)
11. शारीरिक विकारों की घटनाओं में वृद्धि
12. बाद के चरणों में असंगति के लक्षण
13. विभिन्न सांस्कृतिक प्रथाओं को लागू किया जाना चाहिए
14. ग्राफ्टेड पौधों की ऊंची कीमतें

ग्राफ्टिंग की तकनीक: स्कोन को रूटस्टॉक पर ग्राफ्ट करने के लिए विभिन्न तकनीकें हैं, और तकनीक का उचित चयन फसल, आकार, विकास चरण और दो पौधों की अनुकूलता पर निर्भर करता है। रूटस्टॉक का चयनः विभिन्न उद्देश्यों के लिए बड़ी संख्या में रूट स्टैक की सूचना दी गई है। इसलिए, उपयुक्त रूटस्टॉक का चयन सब्जी ग्राफ्ट उद्योग की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

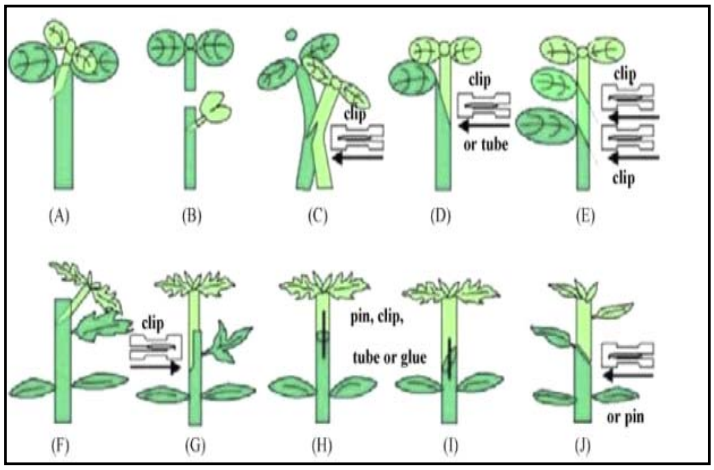

ग्राफ्टिंग के तरीके

एप्रोच ग्राफ्टिंग: यह रूटस्टॉक और स्कोन के तने में विपरीत और पूरक पायदानों को काटकर किया जाता है। पूरक पायदानों को एक साथ फिट किया जाता है और स्प्रिंग क्लिप या किसी प्रकार के टेप के साथ रखा जाता है। एक बार जब ग्राफ्ट यूनियन ठीक हो जाता है, तो जड़ प्रणाली को स्कोन से काट दिया जाता है। (पौधे और शूट को रूटस्टॉक पौधे से हटा दिया जाता है)

क्लेफ्ट ग्राफ्टिंग: यह तब किया जाता है जब पौधे थोड़े बड़े होते हैं, और स्कोन के तने में वी-आकार का कट लगाया जाता है। फिर वंश को रूटस्टॉक में डाला जाता है, जिसमें तने के केंद्र के नीचे एक ऊर्ध्वाधर टुकड़ा काटा जाता है। ग्राफ्ट यूनियन बनाते समय रूटस्टॉक और स्कोन को एक स्प्रिंग क्लिप द्वारा एक साथ रखा जाता है।

ट्यूब ग्राफ्टिंग या जापानी टॉप-ग्राफ्टिंग: यह तब किया जाता है जब पौधे बहुत छोटे होते हैं और रूटस्टॉक और स्कोन को 1.5-2 मिमी सिलिकॉन क्लिप या ट्यूब के साथ एक साथ रखा जाता है।

होल इंसर्शन ग्राफ्टिंग: तरबूज में ग्राफ्टिंग की यह सबसे लोकप्रिय विधि है। तरबूज के बीज जड़ निकलने के कुछ दिन बाद बोए जाते हैं। तरबूज के बीज बोने के 7-8 दिन बाद ग्राफ्टिंग शुरू हो जाती है, और तरबूज के वंश पर कम से कम एक पत्ती और रूटस्टॉक पर एक छोटी पत्ती की आवश्यकता होती है। एक विशेष उपकरण, जैसे कि बांस की छड़ी या छोटी ड्रिल बिट, का उपयोग रूटस्टॉक से सभी मेरिस्टेम को हटाने के लिए किया जाता है, जिससे दोनों तरफ एक छोटा छेद रह जाता है। होल इंसर्शन ग्राफ्ट का नुकसान यह है कि यह बहुत अधिक तकनीकी है और उपचार कक्ष के सावधानीपूर्वक नियंत्रण की भी आवश्यकता होती है। इस तकनीक को कई व्यावसायिक उत्पादकों द्वारा पसंद किया जाता है क्योंकि इसमें उपचार होने के बाद क्लैंप को हटाने की आवश्यकता होती है।

कद्दूवर्गीय सब्जियों और सोलानेसियस सब्जियों में ग्राफ्टिंग की प्रमुख विधियां: (ए और बी) होल इंसर्शन ग्राफ्टिंग; (सी) जीभ दृष्टिकोण ग्राफ्टिंग; (डी, ई और जे) स्प्लिस ग्राफ्टिंग; (एफ, जी) फांक ग्राफ्टिंग; (एच और आई) पिन ग्राफ्टिंग

उपचार और अनुकूलन: ग्राफ्टेड पौधों के उपचार और अस्तित्व के लिए अनुकूलन आवश्यक है। अनुकूलन में कटी हुई सतह को ठीक करना और खेत या ग्रीनहाउस में जीवित रहने के लिए उसे सख्त करना शामिल है। ग्राफ्टिंग से पहले और बाद में उचित नमी की मात्रा बनाए रखना एक समान ग्राफ्टेड पौध के उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है। ग्राफ्टिंग के बाद, ग्राफ्टेड पौधों को लगभग 28-30 डिग्री सेल्सियस पर और 95% से अधिक सापेक्ष आर्द्रता के साथ सात दिनों तक अंधेरे में रखने से जीवित रहने के अनुपात को बढ़ावा मिलता है। धीरे-धीरे, सापेक्ष आर्द्रता कम हो जाती है और प्रकाश की तीव्रता बढ़ जाती है। उपचार और अनुकूलन के दौरान, उच्च आर्द्रता बनाए रखने के लिए, सुरंग में निरंतर हवा का तापमान बनाए रखना महत्वपूर्ण है। ग्राफ्टेड पौधों को आमतौर पर प्लास्टिक की सुरंग में ठीक किया जाता है और अनुकूलित किया जाता है, जो उन सामग्रियों से ढका होता है जो छाया प्रदान करते हैं और अंदर नमी बनाए रखते हैं। उपचार के बाद प्रकाश स्तर को 3000-5000 लक्स तक बनाए रखें। ग्राफ्टिंग से पहले स्कोन और रूटस्टॉक को दो से तीन दिनों के लिए धूप में रखा जाना चाहिए और धुँधले विकास से बचने के लिए पौधे से पानी रोका जाना चाहिए। ये सभी ग्राफ्टेड पौधों की जीवित रहने की दर में सुधार करते हैं।

समय की आवश्यकता: सब्जियों के ग्राफ्टेड पौधों के उत्पादन के लिए कुल समय की आवश्यकता प्रजातियों और नियोजित विधियों पर निर्भर करती है। हालाँकि, आम तौर पर सफल ग्राफ्ट यूनियन के लिए 5-6 सप्ताह का समय पर्याप्त होता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हिमाचल प्रदेश

प्याज और लहसुन में जीवाणुओं का महत्व

अनुज सोही (पी.एच.डी.) डॉ. वाईएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

शिवाली धीमान (पी.एच.डी.) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

अंजली कुमारी (एम.एस.सी) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौनी, सोलन (हि.प्र.)

डॉ. बलबीर सिंह डोगरा (प्रधान वैज्ञानिक) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी वि.वि., नौनी, सोलन (हि.प्र.)

परिचय: प्याज और लहसुन का उपयोग भोजन और औषधीय अनुप्रयोगों के लिए किया जाता है। वास्तव में, ये खाद्य पौधे, आहार के महत्वपूर्ण तत्वों के रूप में पहचाने जाने वाले कई फाइटोन्यूट्रिएंट्स का एक समृद्ध स्रोत हैं।इन फसलों के कंदो का प्रयोग कैंसर, कोरोनरी हृदय रोग, मोटापा, हाइपरकोलेस्ट्रोलेमिया, मधुमेह, मोतियाबिंद, नसों में सूजन, रक्तचाप और जठरांत्र संबंधी मार्ग की गड़बड़ी जैसे पेट का दर्द, पेट फूलना और अपच, उच्च रक्तचाप सहित कई बीमारियों के उपचार और रोकथाम में किया जाता है। उन्हें एक गर्म उत्तेजक और एंटीह्यूमेटिक के रूप में वर्णित किया गया है। इन सब्जियों में थायोसल्फिनेट्स, वाष्पशील सल्फर पाया जाता है, जो इन सब्जियों के तीखेपन के लिए भी जिम्मेदार हैं। प्याज और लहसुन के कंदो में गंध, स्वाद और तीखापन होता है। प्याज का उपयोग सलाद के रूप में किया जाता है और सूप, अचार आदि बनाने में प्रयोग किया जाता है, जबकि लहसुन का उपयोग अचार और करी पाउडर में किया जाता है। इन्हें पोटैशियम, विटामिन सी और विटामिन बी6 का अच्छा स्रोत माना जाता है। प्याज का तेल सल्फर से भरपूर होता है जो बालों को टूटने से रोकता है और बालों के नियमित पीएच को बनाए रखता है। एलिसिन नामक एक महत्वपूर्ण ऑर्गनोसल्फर यौगिक की उपस्थिति के कारण लहसुन का तेल एक शक्तिशाली एंटीसेप्टिक है।

प्याज और लहसुन में पोषक तत्व

सामग्री	प्याज हरा	लहसुन कंद	कंद
नमी (ग्राम)	87.6	86.6	62
प्रोटीन (ग्राम)	0.9	1.2	6.3
वसा (ग्राम)	0.2	0.1	0.1
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	8.9	11.1	29.8
कैल्शियम (मिलीग्राम)	50	47	30
फास्फोरस (मिलीग्राम)	--	50	310
आयरन (मिलीग्राम)	7.5	0.7	1.3
विटामिन ए (आईयू)	992	0	0
थायमिन (मिलीग्राम)	0	0.08	0.06
राइबोफ्लेविन (मिलीग्राम)	0.01	0.01	0.03
विटामिन सी (मिलीग्राम)	17	11	13

जलवायु: प्याज और लहसुन ठंडे मौसम की सब्जी फसलें हैं।ये फसलें हल्की जलवायु में अच्छी विकसित होती हैं और अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अच्छा प्रदर्शन नहीं करती हैं। प्याज में उचित कंद विकास हेतु 15° सेल्शियस से 25° सेल्शियस तापमान कम से कम 10 घंटे प्रति दिन होना चाहिए तथा लहसुन में ज्यादा तापमान और लंबे दिन उचित कंद गठन के लिए अनुकूल नहीं होते हैं।

मृदा: प्याज और लहसुन उगाने के लिए सबसे अच्छी जल निकासी वाली रेतीली दोमट मिट्टी चाहिए होती है, जिसका पीएच मान 5.5-7 होना चाहिए । मिट्टी की दो से तीन बार जुताई करके तथा समतल करके अच्छी तरह से तैयार कर लेना चाहिए।

भारत में पाई जाने वाली प्रमुख किस्में

प्याज: एग्रीफाउंड डार्क रेड, पूसा लाल, एनएचआरडीएफ रेड, एग्रीफाउंड लाइट रेड, पूसा रत्नार, अर्का निकेतन, ब्राउन स्पेनिश, फुले सफेद, बसवंत-780, एन-53।

लहसुन: एग्रीफाउंड व्हाइट (G-41), यमुना सफेद (जी-1), एग्रीफाउंड पार्वती (जी-313), गोदावरी (सिलेक्शन -2), वीएल लहसुन 2, पूसा सिलेक्शन -10, श्वेता (सिलेक्शन -10), जामनगर, मद्रासी।

हिमाचल प्रदेश में उगाई जाने वाली प्याज की किस्में: एग्रीफाउंड डार्क रेड, पटना रेड, एन-53, पालम लोहित और ब्राउन स्पेनिश ।

हिमाचल प्रदेश में उगाई जाने वाली लहसुन की किस्में: एग्रीफाउंड पार्वती, GHC-1, लार्ज सेगमेंटेड, सोलन सिलेक्शन और सेलेक्शन-1।

बुवाई का समय

प्याज: निचले पर्वतीय क्षेत्र: नवंबर-दिसंबर, **मध्य पर्वतीय क्षेत्र:** अक्टूबर-नवंबर, **उच्च पर्वतीय क्षेत्र:** अप्रैल

लहसुन-निचले पर्वतीय क्षेत्र: अक्टूबर-नवंबर, **मध्य पर्वतीय क्षेत्र:** सितंबर- अक्टूबर, **उच्च पर्वतीय क्षेत्र:** अप्रैल

बुवाई-बीज द्वारा प्याज की नर्सरी उगाना : प्याज की पनीरी क्यारियों में तैयार की जाती है। प्रत्येक क्यारी में अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद डालें और मिट्टी में अच्छी तरह मिला लें। बीज को 5 सेंटीमीटर की दूरी पर बनाई गई पंक्तियों में बोया जाता है और अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद से ढक दिया जाता है। क्यारियों में मिट्टी की जरूरत के हिसाब से सिंचाई करनी चाहिए और निरंतर अंतराल पर हलकी सिंचाई करनी चाहिए। 6-7 सप्ताह के बाद पनीरी रोपाई हेतु तैयार हो जाती है।

रोपाई: पौध को उखाड़ने से 4-5 घंटे पहले क्यारियों की सिंचाई कर देनी चाहिए। रोपाई से पहले पौधों की जड़ों को 30 मिनट हेतु पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले राइजोबैक्टीरिया के घोल में डुबोएं। नमी को नियंत्रित करने और प्याज की स्वस्थ पौध उगाने हेतु ट्राइकोडर्मा विरिडी @ 1250 ग्राम/हे. गोबर की खाद में डालें। रोपाई के बाद तत्काल सिंचाई आवश्यक है और रोपाई के 1 सप्ताह बाद गैप फिलिंग की जानी चाहिए क्योंकि रोपाई के झटके के कारण कुछ पौधे मर जाते हैं।

जैविक उपचार

पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले राइजोबैक्टीरिया; आईएए, जीए और साइटोकिनिन जैसे विकास पदार्थों का उत्पादन करके, प्याज और लहसुन की वृद्धि को बढ़ाते हैं। वे उन्हें बीमारियों और अजैविक तनावों से बचाते हैं। यह पौधे की समग्र उपज को बढ़ाने में मदद करते हैं। ये जीवाणु पौधों की जड़ों के साथ सकारात्मक संवाद प्रदर्शित करते हैं।

• प्याज के बीज की बुवाई से एक सप्ताह पहले जीवामृत (10%), वर्मीकम्पोस्ट (15 टन/हे.) या एफवाईएम (20 टन/हे.) मिट्टी में डालने से मिट्टी की जैविक स्थिति में सुधार होता है। • बैसिलस सबटिलिस, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस जैसे पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले राइजोबैक्टीरिया, प्याज की पौध को सुदृढ़ बनाते हैं • जीवामृत 500 लीटर/हे. की दर से, रोपण, वानस्पतिक वृद्धि और कंद की शुरूआत के चरण में, प्याज के कंद की वृद्धि और उपज को बढ़ाता है। • लहसुन के बीज को 3% पंचगव्य, 4% स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, 4% ट्राइकोडर्मा विरिडी, 4% फॉस्फोबैक्टीरिया घोल में 1 घंटे हेतु डुबोकर रखना चाहिए और फिर छाया में सुखाकर बुवाई करनी चाहिए। इससे अंकुरण में और पौधों की वृद्धि में मदद मिलती है। • जैव एजेंट ट्राइकोडर्मा विरिडी @ 2 ग्राम/किलोग्राम बीज के साथ बीज उपचार लहसुन में शुरुआती रोगों और मिट्टी जनित इनोकुलम को कम करने में मदद करता है।

अंतर: प्याज की दो पंक्तियों के बीच में 15 सेंटीमीटर और दो पौधों के बीच 10 सेंटीमीटर जबकि लहसुन की दो लाइनों के बीच में 20 सेंटीमीटर तथा दो पौधों के बीच 10 सेंटीमीटर का फासला होना चाहिए।

खाद और उर्वरक

	प्याज	लहसुन
अच्छी तरह से विघटित गोबर की खाद	300 किग्रा./हे.	300 किग्रा./हे.
नाइट्रोजन	80-125 किग्रा./हे.	100-200 किग्रा./हे.
फोस्फोरस	50-75 किग्रा./हे.	50 किग्रा./हे.
पोटैशियम	80-125 किग्रा./हे.	50-120 किग्रा./हे.
सल्फर	15-30 किग्रा./हे.	44 किग्रा./हे.

गोबर की खाद को खेत की तैयारी के समय डाला जाता है। रोपाई से पहले 50% नाइट्रोजन और फोस्फोरस और पोटैशियम की पूरी खुराक डालें तथा सल्फर और शेष आधी नाइट्रोजन को रोपाई के 5-6 सप्ताह बाद डालें ।

बीज की मात्रा

प्याज: 8-10 किग्रा/हे., **लहसुन:** 15-20 क्विं./हे.

उपज: प्याज रोपाई के 5-7 महीनों में कटाई हेतु तैयार हो जाता है और उपज लगभग 300-400 क्विं. प्रति हेक्टेयर होती है। लहसुन रोपण के बाद 7-8 महीनों में कटाई के लिए तैयार हो जाता है और कंद की उपज किस्म के आधार पर 100-200 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है।

कंद सुखाना एवं भंडारण: प्याज और लहसुन की बाहरी त्वचा और गर्दन से अतिरिक्त नमी को हटाने के लिए कंदो को सुखाना एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। यह रोगों के संक्रमण को कम करने में मदद करता है। कंद या तो खेत में या खुली छाया में तब तक सुखाए जाते हैं, जब तक कंदो की गर्दन तंग नहीं हो जाती और बाहरी चामडी सख्त नहीं हो जाती है। कंदो को 7-10 दिनों के लिए छाया के नीचे सुखाना चाहिये। इससे कंदो के रंग में सुधार और भंडारण के दौरान नुकसान भी कम होता है।सफल भंडारण के लिए उचित वायुसंचार, समान तुलनात्मक रूप से कम तापमान, कम आर्द्रता और रोग संक्रमण से मुक्ति आवश्यक है।

रोग- बैंगनी धब्बा: फूलों की शाखाओं पर बैंगनी धब्बे दिखाई देते हैं और उस बिंदु से शाखाएं टूट जाती हैं।

कोमल फफूंदी: प्रभावित भागों पर धब्बे दिखाई देते हैं।

जैविक प्रबंधन: 10 दिनों के अंतराल पर 10 व पंचगव्य से छिड़काव करें।

कीट-थ्रिप्स: थ्रिप्स के वयस्क रस चूसते हैं और पत्तियां चांदी जैसी दिखती हैं।

जैविक प्रबंधन: पीले स्टिकी ट्रैप का उपयोग करके प्रबंधन करें। गोमूत्र (10%) या खमीर्युक्त छाछ (10%) प्रबंधन में मदद करता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हिमाचल प्रदेश

टमाटर के प्रमुख रोगों का विवरण व उनकी रोकथाम के उपाय

आरती शुक्ला, मीनू गुप्ता, अनुराग शर्मा
मीरा देवी एवं जितेंदर कुमार चौहान
कृषि विज्ञान केन्द्र सोलन (कंडाघाट), (हिमाचल प्रदेश)

कमर तोड़ रोग

रोगकारक- पिथियम, फाइटोफ्थोरा, फ्यूजेरियम की प्रजातियाँ तथा राइजोक्टोनिया सोलेनाई

लक्षण

इस रोग के लक्षण पौधों पर दो रूपों में दिखाई देते हैं। पहली अवस्था में बीज अंकुर भूमि की सतह से निकलने से पहले ही रोग ग्रस्त हो जाते हैं तथा मर जाते हैं। दूसरी अवस्था में इस रोग का संक्रमण पौधे के तनों पर होता है तथा तने का विगलन होने पर पौध भूमि की सतह पर लुढ़क जाती है तथा मर जाती है।

रोकथाम

i.पौधशाला का स्थान हर वर्ष बदल दें।

ii.पौधशाला की मिट्टी का उपचार फार्मेलिन (एक भाग फार्मेलिन तथा सात भाग पानी) या सौर उर्जा से करें।

iii.बीजाई से पूर्व बीज को कैप्टान (3 ग्राम/कि. ग्रा. बीज) से उपचारित करें।

जब पौध 7 से 10 दिन की हो जाए तो उसकी मैन्कोजेब (25 ग्रा/10 ली पानी) से सिंचाई करें ।

पानी उतना ही दें जितना जरूरी है । अधिक पानी रोग को पनपने में सहायता करता है ।

बकाई फल सड़न रोग

रोगकारक- फाइटोफ्थोरा निकोशियानी उपप्रजाति पैरासिटिका

लक्षण- इस रोग के लक्षण केवल हरे फलों पर ही दिखाई देते हैं । प्रभावित फलों पर हल्के तथा गहरे भूरे रंग के गोलाकार धब्बे चक्र के रूप में दिखाई देते हैं जो हिरण की आँख की तरह लगते हैं । रोग ग्रस्त फल आम तौर से जमीन पर गिर जाते हैं तथा सड़ जाते हैं ।

रोकथाम

I. पौधों को सहारा दे कर सीधा खड़ा रखें ।

II. भूमि की सतह से 15 -20 सै. मी. तक की पत्तियों को तोड़ दें ।

III. वर्षा काल के आरम्भ होते ही उपयुक्त पानी निकास के लिए नालियां बनाएं ।

IV. समय-समय पर रोग ग्रस्त फलों को इकट्ठा कर के गड्ढे में दबा दें ।

V. वर्षा ऋतु के आरम्भ होने से पहले खेत की सतह पर चील या घास की पत्तियों का बिछौना बिछाएं ।

VI. मानसून की वर्षा के आरम्भ से ही फसल पर साइमोक्जानील + मैन्कोजेब (25 ग्रा./10 ली. पानी) का छिड़काव करें तथा इसके उपरांत मैन्कोजेब (25 ग्रा/10 ली पानी) या कॉपर आक्सीक्लोराइड (30 ग्रा./10 ली. पानी) या बोर्डो मिश्रण (800 ग्राम नीला थोथा + 800 ग्राम चूना + 100 लीटर पानी) का छिड़काव 7 से 10 दिन के अन्तराल पर करें ।

पछेता झुलसा रोग

रोगकारक- फाइटोफ्थोरा इन्फेसटेन्स

लक्षण- इस रोग के लक्षण अधिकतर अगस्त के अंतिम व सितम्बर माह के पहले सप्ताह में पत्तों पर गहरे भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जो बाद में भूरे काले धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं । नम व् ठण्डे मौसम में ये धब्बे फैलने लगते हैं तथा 3-4 दिनों के पौधे पूरी तरह से झुलस जाते हैं । फलों पर भी गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं । चैरी टमाटर भी इस रोग से ग्रस्त होता है ।

रोकथाम

i. फसल चक्र अपनाएं, रोग ग्रस्त फलों तथा पत्तियों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें।

ii.सितम्बर माह के पहले सप्ताह में फसल पर मैन्कोजेब (25 ग्रा./10 ली. पानी) का छिड़काव करें तथा इसके उपरांत साइमोक्जानील + मैन्कोजेब (25 ग्रा./10 ली. पानी) का 7 से 10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें ।

जीवाणु धब्बा रोग

रोगकारक- जैन्थोमोनास वेसीकेटोरिया

लक्षण- इस रोग के लक्षण पौधों के पत्तों तथा तनों पर छोटे-छोटे धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जो बाद में गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं । धब्बे आपस मिल जाते हैं तथा इनका आकार बड़ा हो जाता है । बाद में पत्ते पीले पड़ जाते हैं । फलों पर भूरे काले रंग के उभरे हुए धब्बे बनते हैं जिनके किनारे अनियमित होते हैं । बाद में ये धब्बे धंस जाते हैं ।

रोकथाम

i. स्वस्थ बीज का चयन करें ।

ii. बीज को स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (1 ग्रा./ 10 ली. पानी) में 30 मिनट तक उपचारित करें ।

iii. फसल पर रोग के लक्षण देखते ही स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (1 ग्रा/ 10 ली पानी) का छिड़काव करें। इसके बाद 7 से 10 दिन के अन्तराल पर कॉपर आक्सीक्लोराइड (30 ग्रा./10 ली. पानी) का छिड़काव करें ।

5.मुर्झान रोग

रोगकारक- रालस्टोनिया सोलेनेसिएरम

लक्षण- संक्रमित पौधों के पत्ते अचानक ही नीचे की तरफ लटक जाते हैं तथा उनमें पीलापन दिखाई नहीं देता है और पूरा पौधा ही मुरझा जाता है ।

रोकथाम

i. प्रभावित खेतों में फसल चक्र अपनाएं । रोग से प्रभावित खेत में प्याज, लहसुन, मक्का, गेहूं या गैंदा जैसी फसलें लगा सकते हैं ।

ii. प्रभावित खेतों को गर्मियों के दिनों में (मार्च से जून के बीच) 30 से 45 दिनों तक सफेद पारदर्शी पोलीथीन (100 गेज मोटा) से सिंचाई करने के बाद ढक कर रखने से भी रोग का संक्रमण कम हो जाता है।

iii. रोपण से पहले पौध की जड़ों को स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (1 ग्रा./ 10 ली. पानी) में 30 मिनट तक डुबो कर रखें तथा फिर रोपें ।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हिमाचल प्रदेश

डॉ. ज्योति ठाकुर
जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश
दूरभाष- 7018619794

भक्ति

भक्ति शब्द की व्युत्पत्ति भज् धातु से हुई है जिसका अर्थ है श्रद्धा, सेवा ,आराधना और अत्यंत अनुराग। ईश्वर के प्रति मनुष्य के हृदय में उत्पन्न सात्विक प्रेम को भक्ति कहा गया है। श्रीमद्भागवत महापुराण के अनुसार परम प्रिय परमात्मा में एकनिष्ठ होकर के मन को लगा देना और उनके लिए समस्त आशाओं ,आकांक्षाओं और भावनाओं को त्याग देना ही सच्ची भक्ति कहा गया है। ईश्वर प्राप्ति के साधनों में सबसे सरल और सुगम मार्ग भक्ति को ही कहा गया है। जब भक्त भक्ति की निर्मल धारा के साथ बढ़ने लगता है तो उसकी समस्त सांसारिक इच्छाएं स्वत ही नष्ट होने लग जाती हैं।

भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन से गीता में स्पष्ट रूप से कहा है कि अनन्य भक्ति के द्वारा ही मैं जाना जा सकता हूं और देखा जा सकता हूं। श्रीमद्भागवत महापुराण में श्री कृष्ण कहते हैं कि मैं संतों का प्रियतम आत्मा हूं, मैं परम भक्ति और श्रद्धा के द्वारा ही प्राप्त होता हूं, मेरी अनन्य भक्ति के द्वारा तो चांडाल भी पवित्र और जातिगत दोषों से मुक्त हो जाता है। भक्ति का लक्षण और महिमा का वर्णन करते हुए मैत्रेय जी ने श्रीमद्भागवत पुराण में अपनी माता देवहूति से निवेदन किया था कि निष्काम भाव से नित्य कर्मों का पालन, ईश्वर प्रतिमा का दर्शन, स्पर्श, पूजन, स्तुति, वंदना, प्राणियों में ईश्वर की भावना, वैराग्य, धैर्य, दीनों पर दया , यम, नियम का पालन, ईश्वर का उच्च स्वर में कीर्तन-भजन, तथा सत्पुरुषों की संगति से मनुष्य का मन अनायास ही भक्ति रस में ओतप्रोत होता हुआ एकमात्र ईश्वर चिंतन में रमण करने लग जाता है। वहां पर कहा गया है कि यदि तुम भगवान की सच्ची श्रद्धा से भक्ति करते हो तो तुम भगवान के लिए प्राणों से भी अधिक प्यारे हो और तुम्हारे बुलाने पर भगवान नीचों के घर में भी चले आते हैं। स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी रामचरितमानस के उत्तरकांड में भक्ति के विषय में कहते हैं कि हीरे, मोती जवाहरात आदि मणियां बाजारों में लाखों रुपए की मिलती हैं परंतु कृष्ण में मति और कृष्ण में भक्ति असीमित शक्ति के साधन होते हुए भी कहां मिलती है? जिस प्रकार मिश्री का शरबत पीने के बाद कोई गुड का शरबत नहीं पीना चाहता उसी प्रकार भगवान के चरणकमलों में भक्ति से उत्पन्न रस का आस्वादन करने के बाद सांसारिक विषय वासनाएं अपने आप

ही नष्ट हो जाती है और उस मनुष्य की विषयगत सुखों में कोई रुचि नहीं रह जाती है।

परमात्मा ने जिस प्रकार से सृष्टि की रचना की है इसमें मनुष्य को श्रेष्ठ रचना माना गया है। मनुष्य को सर्वोत्कृष्ट, मोक्ष साधन संपन्न और विवेकशील प्राणी कहा गया है। जब मनुष्य का मन संसार की समस्त मोह माया से हटकर परमात्मा में लग जाता है उस अवस्था को भक्ति कहा गया है। बिना फल की इच्छा किए निष्काम भाव से उस परमात्मा में सच्ची श्रद्धा रखना ही भक्ति है। इस संसार में मानव जीवन के समस्त पुरुषार्थों को पाने का यदि कोई एकमात्र साधन है तो वह केवल भक्ति है। मानव शरीर को प्राप्त करने वालों में उन्हीं का जीवन सफल और सार्थक हुआ है जिन्होंने स्वयं को सुधारने का हमेशा प्रयास किया है और इस नश्वर शरीर से अपने मन को हटा करके उस परमात्मा में अपने मन को लगाया है और भक्ति, भजन, अध्ययन और चिंतन के द्वारा हर समय ईश्वर पर विश्वास किया है और ईश्वर को याद किया है वही मानव इस जीवन मरण रूपी भवसागर को पार कर पाया है।

ईश्वर को प्राप्त करने, साक्षात्कार एवं दर्शन करने के जितने भी साधन पुराणों में वर्णित है उन सब में भक्ति को सर्वोत्तम और सुगम साधन कहा गया है। नारद पुराण के अंतर्गत नारद जी को भक्ति का अलौकिक महत्व समझाते हुए कहा गया है कि हे मुनीश्वर जो ईश्वर के सच्चे भक्त होते हैं उन्हीं को योग की सिद्धि प्राप्त हुआ करती है ऐसे भक्तों को ना तो शत्रु कभी भी पीड़ित कर सकते हैं, ना कोई ग्रह सता सकता है और ना ही किसी राक्षस की कुदृष्टि उस पर पड़ सकती है अर्थात् ऐसे मनुष्य के समस्त शुभ कार्य सिद्ध हो जाते हैं। भक्ति से हीन जीवन की सृष्टि आसुरी और भक्ति से पूर्ण सृष्टि दैवि? कहलाती है। भक्ति से हीन मनुष्य का जीवन अजा के गले में लटके स्तन के समान निरर्थक है। ऐसे जीवन को धिक्कार है, ऐसे मनुष्य को धिक्कार है जो भक्ति से विमुख है। सत्संग के द्वारा हृदय में भक्ति को स्थापित किया जा सकता है। संतो के संग से परमात्मा में भक्ति का उदय होता है । इसमें कोई संदेह नहीं है की भक्ति सत्संग से मिलती है और भक्ति ही सबसे बड़ा लाभ है। भगवान की कथा, श्रवण और गुण अनुवाद से मनुष्य की बुद्धि निर्मल हो जाती है।

भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा है कि हे अर्जुन मेरी भक्ति चार प्रकार के भक्तजन ही करते हैं। प्रथम जो सांसारिक वस्तुओं, भोगों एवं पदार्थ की इच्छा से मुझे भजते हैं उनकी भक्ति अर्थरूपा है। संकट, विपत्ति निवारणार्थ भजने वाले की भक्ति आर्तीरूपा है। मेरी यथार्थ योग को जानने की इच्छा से की गई भक्ति जिज्ञासुरूपा है तथा मोह, माया, बंधन से विमुख होकर की गई भक्ति ज्ञानरूपा है। ईश्वर का साकार रूप भी सत्य है और निराकार रूप भी सत्य है। पूरी श्रद्धा और विश्वास से जिसे भी पुकारा जाए वह किसी न किसी रूप में प्रकट होगा, एकमात्र वही मनुष्य को भव बंधन से मुक्त करने वाला होगा। भगवान का स्वरूप इस प्रकार से सिद्ध है जिस प्रकार मिश्री के टुकड़े को जिस भी ओर से चखा जाए वह मीठा ही होता है क्योंकि मधुरता एवं मिठास ही उसका मूल गुण है।

भक्ति का एकमात्र लक्ष्य भगवत्प्राप्ति है। भक्ति में ही असंभव को संभव करने की शक्ति निहित है। सच्ची भक्ति के द्वारा ही मनुष्य अपने जीवन में समृद्धि, शांति और बल को प्राप्त कर सकता है। अतः प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन काल में पूरी श्रद्धा के साथ, निष्काम भाव से भक्ति अवश्य करनी चाहिए । परिस्थिति चाहे जैसी भी हो हमें प्रभु का सिमरन करते रहना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तराखण्ड

उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्र में अपनाया गया फसल पद्धति

आभा रावत (शोध छात्रा)
शैलेन्द्र तिवारी (शोध छात्र)
जय सिंह चौहान (प्राध्यापक और विभागाध्यक्ष) बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, एच.एन.बी.जी.यू, श्रीनगर, गढ़वाल (उत्तराखंड)

उत्तराखंड के प्राचीन निवासियों द्वारा फसल उगाने के लिए एक बहुत ही विशेष प्रथा बनाई है। इस अभ्यास में खेत की तैयारी, बीज बोना, खरपतवार उन्मूलन के तरीके, फसलों का चयन करना, पर्यावरणीय परिस्थितियों, कीट प्रबंधन, कटाई के तरीकों की उपयुक्तता और बीज का भंडारण शामिल है। मिट्टी के स्वास्थ्य और फसल उत्पादकता को बनाए रखने के लिए, निवासियों ने आमतौर पर विभिन्न फसलों की मिश्रित या वैकल्पिक खेती करते हैं।

उत्तराखंड में कृषि-जलवायु क्षेत्र को चार जोन अर्थात जोन ए (1000 masl), बी (1000-1500 masl), सी (1500-2400 masl) और डी (>2400 masl) में वर्गीकृत किया गया है। क्षेत्र के अनुसार प्रमुख फसल पैटर्न में काफी अंतर पाया जाता है।तराई शिवालिक पहाड़ियाँ और घाटी में धान, गेहूं, गन्ना, मसूर, चना, तोरिया, सरसों, आम, लीची आदि जैसी प्रमुख फसल की खेती की जाती है। इसी प्रकार, मध्य पहाड़ी दक्षिण दिशा में चावल, रागी, गेहूं, आलू, टमाटर, मटर, फूलगोभी, दालें, आड़ू और प्लम की प्रमुख रूप से खेती की जाती है। समशीतोष्ण क्षेत्र में उगाई जाने वाली प्रमुख फसलें चौलाई, रागी, राजमा, कोल फसलें, आलू, मटर, आड़ू, आलूबुखारा, नाशपाती और सेब इत्यादि है। चौलाई, ओगल, मटर, फूलगोभी, पत्तागोभी, सेब, आलू और विभिन्न सुगंधित एवं औषधीय पौधे उप-अल्पाइन से अल्पाइन क्षेत्रों की प्रमुख फसलें हैं। उत्तराखंड सीढ़ीदार खेती के लिए प्रसिद्ध है।ऊँचाई के आधार पर सीढ़ीनुमा खेती को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है अर्थात् ऊँची पहाड़ी और निचली ऊँची पहाड़ियाँ।

उत्तराखंड की खेती पूरी तरह से वर्षा आधारित है और सिंचाई पर बहुत कम निर्भर है।पहाड़ी क्षेत्रों तथा घाटी की सिंचित खेती को सेरा के नाम से जाना जाता है उसी प्रकारअसिंचित क्षेत्र को ऊसर कहा जाता है। असिंचित क्षेत्रों में लोगों ने सारी प्रणाली को अपनाया है जो विशेष रूप से विभिन्न ऋतु के फसल चक्रण को सकेंद्रित करता है।

काल पर आधारित विभिन्न फसल पद्धति

1. खरीफ

ख़रीफ़ के समय रागी एक महत्वपूर्ण फसल है। रागी के साथ-साथ ग्यारह अलग-अलग फसलें उगाई जाती हैं, इस प्रणाली को ब्रानाजा कहा जाता है।इस पारंपरिक विधि में बारह फसलें एक साथ मिश्रित रूप में उगाई जाती हैं।रागी को उड़द, लोबिया, नौरंगी, तोर, सोयाबीन, काला सोयाबीन, कुलथी जैसी दालों तथा चौलाई, झंगोरा, जख्या, कौनी जैसी अन्य फसलों के साथ उगाया जाता है।

2. जायद

जायद एक छोटी अवधि का मौसम है जो रबी और खरीफ के बीच आता है। इस समय निचली और मध्य हिमालयी परिस्थितियों में विभिन्न सब्जियों, मुख्यतः कद्दूवर्गीय सब्जियों और सरसों के साथ मक्का मुख्य फसल है।लेकिन अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रों में अनाज(ओगल) और राजमा मुख्य फसल हैं।अधिक ऊंचाई पर स्थित कुछ जिलों में देशी जौ जिसे यूवा कहा जाता है और आलू उगता है। आलू अल्पाइन क्षेत्र में अप्रैल से मई के दौरान नकदी फसल के रूप में उगाया जाता है, जबकि निचले हिमालयी क्षेत्रों में फरवरी से मार्च के दौरान उगाया जाता है।

3. रबी

गेहूँ इस मौसम में स्थानीय लोगों द्वारा उगाई जाने वाली प्रमुख फसल है। इस मौसम में गेहूँ, जौ, मसूर, चना, मटर और भंगजीर बोया जाता है। मटर, चना, मसूर और सरसों को गेहूँ व जौ के साथ मिलाकर बोया जाता है।

12/2022-23

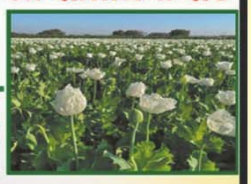

श्री गणेशाय नमः
श्री सॉंवलिया सेठ
किसान कृषि सेवा केन्द्र
Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com
7692967419
9109726855
हमारी सेवाएॅः-
सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौंप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर, कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।
कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।
उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।
स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company
कृषि दर्शन
खेत-खलिहान का राजा
1988
थ्रेशर 35HP हापर मॉडल
हडम्बा कटर थ्रेशर
ऑटोफीडिंग थ्रेशर
मक्का थ्रेशर
मिनी कम्बाईन थ्रेशर
रेज बेड सिड ड्रील
स्प्रे पंप 500 लि. गन बूम मॉडल
मोटर लिफ्टर
सुदर्शन इण्डस्ट्रीज
पाटीदार उत्पादन
विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

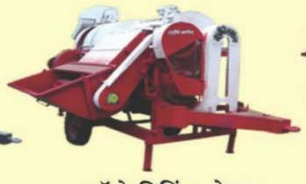

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2022-2024

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

मई-2024

शिवा कृषि केन्द्र एण्ड ट्रेडर्स

श्री एन.के. वर्मा

मोबाइल : 9425525951, 9340972086

हमारे यहां उन्नत किस्म के खाद, बीज, कीटनाशक कृषि दवाईयां एवं स्पेयर्स पार्ट्स उपलब्ध हैं

हमारे यहां सभी प्रकार के इलेक्ट्रीकल्स, इलेक्ट्रॉनिक सामान उपलब्ध हैं

तिरंगा चौक, बालाजी जनरल के आगे, नरेन्द्र बैटरी के बगल में, जिला-गरियाबंद (छत्तीसगढ़)

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान संपादक राजू गुर्जर द्वारा सर्वोदय प्रिंटिंग प्रेस, महाडिक की गोठ, जनक हॉस्पिटल के पीछे कम्पू रोड, लश्कर-ग्वालियर से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास दीनदयाल नगर ग्वालियर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: राजू गुर्जर. मोबा. 9425101132, 94245-22090